

# ज्ञानसार ग्रन्थावली



सन्तारक

अमरचन्द्र नाइक

भारतवासी नाइक

श्री अमरच जैन ग्रन्थ माला पुष्प १४

पुस्तक

# ज्ञानसार ग्रंथावली

[योगिराज श्री पराशरजी व अन्य रचयार्, विस्तृत जीवनीसह]

प्राप्तकथन

महापंडित राहुज सांकृत्यायन

सम्पादक

अमरचन्द्र नाहटा

भंवरलाल नाहटा

प्रकाशक

नाहटा ब्रदर्स

४ जयपीढ़न पब्लिकेशन

कलकत्ता—४

वीरगढ़ २४२४४

प्रथमावृत्ति १९९०

[मूल्य १०।]

# आवश्यक स्पष्टीकरण

ज्ञानसार ग्रन्थावली का इतने लंबे समय से और इस रूप में प्रकाशित होते देखा हर्ष और दुःख दोनों को एक साथ अनुभूति होती है। हर्ष तो इसलिए कि अपनी २५ वर्षों की साथ पूरी हो रही है और दुःख इस बात का है कि जिस रूप में और जिसकी शीघ्रता से हम इसका प्रकाशन करना चाहते थे, नहीं कर पाये। विधि का विधान कुछ ऐसा ही था कि इसमें हर्ष और शोक, ये दोनों ही करना पड़ा है। पर हम अभी ज्ञानसारजी जैसे महायोगी की भाँति समस्त में नहीं पहुँच सके हैं।

विधि के आगे मनुष्य का प्रयत्न कुछ काम नहीं देता, इसका इस ग्रंथ के प्रकाशन प्रसंग से स्पष्ट अनुभव हुआ। पचीस वर्ष पहले बड़ी उम्रंग और भारता के साथ ज्ञानसारजी के ग्रंथों की वास्तुस्थिति बड़ी लगन के साथ की थी। पन्द्रह वर्ष तो बह खोड़ी पड़ी रही। बीच में चूँ तो भी कुछ सामग्री के पुर्जो-पुर्जे करके हमें सचेत किया। परम शंत भद्रमुनिजी (सहजानंदजी) की प्रेरणा व कृपा से ७५ वर्ष पूर्व इसका उपस्थान प्रारंभ किया। चारसौ छियासी पृष्ठों में ज्ञानसारजी की रचनाओं का एक भाग छप कर तैयार हुआ और ११२ पृष्ठों में उनका परिचय छप गया। मूल ग्रंथ के छपे हुए फरमे दफ्तरी को जिल्द बन्धवाई के लिये दे दिये गये, पर उसी समय रजकपे में हिन्दु मुसलमानों का संघर्ष हुआ, हिन्दुस्तान पाकिस्तान

ही दुकड़े हो गए। दफ्तरी मुसलमान था—कहाँ गया पता नहीं। बहुत खोज की गई, पर उसके मकान का भी पता न लगने से फरमे प्राप्त नहीं हो सके। तीन-चार वर्ष इसी प्रतीक्षा में रहे कि दफ्तरी आजाया और फरमें मिल जायेंगे। इसी बीच जिसने दफ्तरी को फरमे दिये थे वह व्यक्ति भी मर गया। सबसे आशाओं पर कुटारा-पात हो गया। मन्व को दुबारा मुद्रण करवाना पड़ा। पर सारे ही मन्व को मुद्रण करवाने में बहुत लम्बा समय लगा, इसलिये करीब आधे मन्व की सामग्री का पुनर्मुद्रण कर ही प्रकाशित किया जा रहा है।

सौभाग्य से शास्त्रवन, विचित्र वनज्य, अनुक्रमशिका और ज्ञानसारजी की जीवनी के फरमे दूसरे प्रेस में छपाने से गद्दी से मंगवा लिये गये और वे बच गये। बाहर पड़े रहने से सराबन बनकर हो गये हैं पर वे इसमें ज्यों के त्यों दिये जा रहे हैं। इसकी अनु-क्रमशिका से पहले किन्हीं सामग्री मुद्रित हुई थी उसका विवरण मिल जाता है। कुछ १७६ तक की रचनाएँ तो ज्यों की त्यों पुनर्मुद्रण हो गई हैं। उसके बाद हीयाही, बांझाबोध और तरवार गीत बांझाबोध को नहीं देखकर सम्बोध अछोचरी, प्रकाशित अछोचरी और आत्मनिदा पूर्व कम से ही की गई हैं। फिर कुछ २६६ में पूर्व प्रकाशित गू (निहाल) बावनी और पु० ४२३ में प्रकाशित जवनपूजा दे दी गई है। उदन्तर तीन पुत्र की सामग्री इसमें नहीं दी गई है जो उस समय नहीं दी जा सकी थी। इसके बाद पूर्व देना बर्धन दिया गया है। अवशिष्ट रचनाओं को हम दूसरे भाग में देंगे। वे रचनाएँ भी साहित्यिक और आध्यात्मिक दृष्टि से बहुत सूक्ष्मान हैं जो लगभग २०० पृष्ठों की होगी। इसमें आका निगल, कामोदीवन, जन्म चौपाई,

समालोचना और रागाधी के सर्वोत्तमक विश्व-काव्य-साहित्यिक दृष्टि से मूल्यवान हैं और आनन्दधनजी की चौबीसी का बालावबोध, पदों का विवेचन, आध्यात्मिक गीत बालावबोध, उत्सव गीत बालावबोध आध्यात्मिक दृष्टि से बड़े महत्त्व की हैं। इनके अतिरिक्त अन्य रचनाएँ सैद्धान्तिक या शैलिक हैं।

इस ग्रंथ के साथ ज्ञानसारजी के तीन चित्र, एक फोटो और उनके द्वारा रचित और स्वलिखित भजन का फोटो, दिये जा रहे हैं।

पूर्व प्रकाशित अनुक्रमणिका में पुनर्मुद्रण के समय आगे जो व्यविक्रम हो गया है इसलिये नई अनुक्रमणिका यहाँ दी जा रही है।—

१. माकवन (पं० राहुल सांकृत्यायन)	पृष्ठ १ से ६
२. किंचित् पद्यम्	" ७ से १२
३. पूर्व मुद्रण की अनुक्रमणिका	" १ से ११
४. अमय जैन संकल्पना के प्रकाशन	" १२
५. चोटीराज श्रीमद् ज्ञानसारजी (जीवन परिचय)	" १ से ११२

## मूलग्रंथ

१. चौबीसी	पृष्ठ १
२. विहरमान जिन बीसी	" १३
३. बहुचरी पद संग्रह	" ३१
४. विनम्र धारक भवबन्ध गीत बालावबोध	" ८०
५. आध्यात्मिक पद	" ६५

६. स्तवनादि भक्ति पद संग्रह	११३
७. भाव पद त्रिशिका	१४०
८. आत्म प्रबोध छत्तीसी	१५५
९. चारिद्र्य छत्तीसी	१६५
१०. मति प्रबोध छत्तीसी	१७२
११. सम्बोध अष्टोत्तरी	१७७
१२. प्रस्ताविक अष्टोत्तरी	१८६
१३. आत्मनिदा	२०२
१४. गूढ (निहाङ्ग) वाचनी	२०८
१५. नवपद पूजा	२१५
१६. सप्तबोधक	२२६
१७. कुंडलिया	२२७
१८. यक्षराज स्तुति	२२७
१९. जिनलामिसूरि कवित्त	२२८
२०. पूर्ण देश वर्णन	२२६

# प्राकथन

‘ज्ञानसार-संवाचनीका’ प्रकाशन करके नाइटाजीने हिन्दी साहित्य के ऊपर बड़ा उपकार किया है। वस्तुतः हिन्दी की अछुन्न परंपरा की जितनी रक्षा जैनों ने की, वैसा न होने पर हमें हिन्दी भाषा और उसके साहित्य के विकास का बहुत अपूर्ण ज्ञान रहता। एक समय था, जब कि हमारे देश के विद्वान् संस्कृत से सीधे हिन्दी की उत्पत्ति मानते थे, फिर बीच की कड़ी उन्होंने वाली-प्राकृत को माना। प्राकृत और आधुनिक हिन्दी तथा उसकी जड़िनी-भाषाओं के बीच की कड़ी अपभ्रंश थी, इस निष्कर्ष पर विद्वान् पहुँच तो गये, लेकिन अपभ्रंश साहित्य का कितना अभाव तथा कितना अवन-परिचय हमारे लोगों को बनो हास तक रहा इसका इसीसे पता लगेगा, कि कितने ही जैन भंडारों में प्राकृत और अपभ्रंश दोनों भाषाओं के शब्दों को प्राकृत मान कर सूचियों में दर्ज किया गया। अपभ्रंश के कुछ छोटे-छोटे पद या पद्य-अन्वय बौद्ध और साँख्य सिद्धों के भी मिले जिनमें महा-महोपाध्याय वंशित हरप्रसाद शास्त्री ने “बौद्ध गान ओ दोहा” के नाम से प्रकाशित किया। उसके बाद बहुत थोड़े ही से जमूने और मिले, जिनमें से कुछ लिखत में प्राप्त हुये। बचपि तब-तुर में अनुवादित अपभ्रंश के छोटे-मोटे शब्दों की संख्या सौ से अधिक है, लेकिन उनका मूल शब्द अब मिल नहीं सकता। लेकिन स्वयंभू, देवसेन, पुष्पदंत, जोगीशु, रामसिद्ध, बनवाल,

हरिभद्रसूरि, कन-कायर, जिनदणसूरि, आदि बहुत से अविभा-  
शाही अपभ्रंश कवियों के महाकाव्यों और काव्य-साहित्य की  
रक्षा करके अपभ्रंश-साहित्य के अब भी अवशिष्ट विरासत  
कलेवरको हमारे सामने रखनेका काम जैन संघ-मण्डलों ने ही  
किया। यही नहीं कि उन्होंने अपभ्रंश के पद्य-साहित्य का  
काफी भंडार सुरक्षित रखा, बल्कि उनके मन्दिर मण्डपों में पुराने  
जैन भंडारोंमें मिले हैं, कोष करनेपर वह और भी अविश्व मित्र  
सकते हैं।

जमना की भाषा हमारे देश में जिस तरह बरकती गई  
वही तरह उसकी शिक्षा और व्याख्या के लिये नई भाषाओंमें  
धार्मिक-साहित्य तैयार करनेकी आवश्यकता पड़ी। यद्यपि  
ब्राह्मण धर्म ने संस्कृतको ही बड़ा प्रधानता दी, तो भी पालि-  
साहित्य और अपभ्रंश काव्य में ब्राह्मणधर्मों धार्मिक-साहित्य भी  
अवश्य कुछ बना होगा, लेकिन जान पड़ता है, उसके साथ  
वैचार ही बरताव किया गया, जैसे लड़के खेल पर किंग देखोकि  
साब करते हैं। यही कारण है, जो कि तुलसी, सूर, कबीर,  
विद्यापतिके पीछे जानेपर हमें अन्धकार दिखाई पड़ता है। बौद्ध  
संस्कृति सही में ही यहाँ से निदा हो गये, लेकिन उनके अपभ्रंश  
ग्रन्थों का जो अनुवाद लिखती भाषा में मिलता है। इससे  
साह्य होता है, कि जैनों की तरह उनके पास भी अपभ्रंश  
का काफी बड़ा भंडार रहा होगा। जो भी वह जैनोंके बराबर  
रहा होगा, इसमें सन्देह है, क्योंकि महायानमें ब्राह्मणों की  
तरह संस्कृत को प्रधानता दे रखी थी, और पौराणी सिद्धांतों  
परंपरा ही लोक-भाषा पर जोर देती थी। जैन भंडारों में



अपभ्रंश वाक्य में विन्न-विन्न वस्तुओं-कार्यों के दिये वस्तुओं और साहाय्य अपभ्रंश में दिये गये जब भी मिलते हैं। (इससे बड़ी पता क्षमता है, कि लोक-विद्वान् के दिये वस्तु से वस्तु धार्मिक क्षेत्र में जैसे धर्माचारों का कारणर ध्यान रहा, कि धर्मधर्माधी और संस्कृत से अपभ्रंशित जैन-गुह्य मर-आरिषोके दिये उनकी भाषा में लोक दिये आये। जब अपभ्रंश भाषा परिवर्तित होकर आधुनिक भाषाओं के प्राचीन रूप में कारणर भेद हुआ, तो उन्होंने इस भाषा में भी विकास शुरू किया। यदि लोक की भाषा, तो अपभ्रंश वाक्य के कारणर ( ५ वीं-६ वीं शती ) के बाद हिन्दी भाषा-क्षेत्र की साहित्यिक भाषा का विकास किस तरह हुआ, इसके असाधारण आसानी से प्रति दृष्टावधी और दृष्टावध मित्र कहेंगे। यह दुर्भाग्य की बात है कि अभी तक इसी प्रति सम्प्रदायों से बाहर नहीं आती, इसीलिए जैन कवियों और साहित्यकारों की जैन हिन्दी के विद्वानों के दिये भी बहुर बोधी की है।

हमारे हानसार वही परंपरा के रक्त थे, जिन्होंने जमान महा-वीर और बुद्ध के समय से ही लोक-विद्वान् के दिये लोकभाषा को प्रचलित की, और वसन्त हर वाक्य में सुन्दर रचनाएँ की। हानसार के बारे में बहुत कुछ जाने किता मया है, और (जैसे उनकी कृतियों से भी बहुत-सी बातें मायूम हो सकती हैं, इसलिये उन्हें दोहराने की आवश्यकता नहीं। लेकिन यह ध्यान रखने की बात है कि यह वस्तु सचय हुए, जब कि अंग्रेज अपने पैरों को भारत में बलवृत्त कर रहे थे। पञ्जाबी के निर्माण-बुद्ध में अंग्रेजोंने जब अपने शासनको टढ़ दिया, उस समय हानसार ( या भारावम जैसा कि पहले उन्हें कहा जाता था ) तेरह वर्ष के

हो चुके थे। उनके गुरुओंने जिस आरक्षणो देखा था, ज्ञानसार के सामने वह दूसरे ही रूप में आया। म्लेच्छ सुसज्जमानों का शासन कतब हो रहा था और महाम्लेच्छ संघेज अब उनकी जगह ले रहे थे। ज्ञानसार वरुणि राजस्थान में पैदा हुये थे। १८ वीं सदी में बाबा सुनिधा की नदी होखी थी, किन्तु उनकी साधुरीक्षा लेने के बाद यात्रा करने का काफी मौका मिला। वह हिन्दी भाषी क्षेत्र से बाहर गुजरात-काठियावाड़ अनेक बार गये, इसमें कोई आश्चर्य नहीं, क्योंकि दोनों पड़ोसी प्रदेशों राजस्थान और गुजरात की सीमा निर्धारित करना बहुत समय तक कठिन रहा। आज भी इसी अभियन्तका परिणाम हुआ राजस्थान के जाम्बूका जवरदस्ती कटकर गुजरात में मिला दिया जाना। मुनि ज्ञानसार पूर्व में बंगाल तक गये। उस समय यात्राओं के सुन्दर वर्णन की कोई कदर नहीं थी, जिनके कारण ही सैतहों मद्भुत साहसी बाजियों और धूमकड़हों को पैदा करने का सौभाग्य प्राप्त करने पर भी हमारा देश बाका-बाकिर्य से बंथित रह गया। उनके वर्णन से मालूम होगा, कि देश-विदेश के विभिन्न-विभिन्न रीति-रिवाजों और स्वरूपोंके देखनेके लिये उनके पास अतिनी पैनी बुद्धि थी। पूर्व देश उन्हें वसन्त नहीं आया, वह तो उनके इस वचन से ही मालूम होगा है—

“पूरव नहि आम्बो, पच्छिम आम्बो, दक्षिण-वत्तर हो भाई।”

पश्चिम, दक्षिण और उत्तर जानेमें उनकी आपत्ति नहीं थी, फिर भी पूर्व के उत्तर ही इतना रोच क्यों ? यदि पूर्व (बंगाल) में मझली-बाघ कानेका बहुत रिवाज था, तो पश्चिम (पंजाब) में क्या भइवाभइव की कमी थी ? चाहे मुनि ज्ञानसार की

धारणा पूर्ववर्तों (संस्कारितों) के प्रति महासुभूतिपूर्ण न हो किन्तु कन्दोनि बहाकी केव-भूषा और किसने ही रीति-रिवाजोंका सुन्दर वर्णन किया है, जैसे :—

कटि<sup>१</sup> वेगी कटके कन्दे पटके, पायी मटके केसां सुं  
 कवा छोटी मोटी, कवा लवरोटी केस न बाधे छोटाई ॥ पुरुष०॥८॥  
 सिर चरच सिन्दूर, मांगन पूरे पाजू पूर सय अने ।  
 कटि धौली बन्ये, छापी कन्ये कुब न होके सिर रीने ॥  
 कर में रौक-चूरी, लाचन चूरी, सोव लाचूरी बलि काई ॥ पुरुष०॥९॥  
 जनक<sup>२</sup> पल<sup>३</sup>—मच्छी, मारै मच्छी, कवा मोटा<sup>४</sup> अरु कवा छोटा ।  
 कवा कोई भीवर, कवा कुनि बिजवर<sup>५</sup>, खाने पीने सब कोटा ॥  
 कवा लइया दरजी, रनके मुरजी, कवा बोधी अरु कवा नाई ॥ पू०  
 जो मल विचारै, सैन लचारै, अन्धाधम रुपो दीसै ।  
 लल बटै लल, गइसै मोई, जप करता अलवर दीसै ॥  
 कर घर जपमाछा, मच्छी बाछा, पकड़ी केरी पचराई ॥ पू० ॥१४॥  
 वैष्णवि करता, मारग चलता, एक हाथे मच्छी छायै ।  
 बिम गहायो धौटे, टेढी मीटै, ऐसी पाछी सिर जानै ॥  
 गंगा अरु गहरी, फिर भीटसै, फिर आवै अरु फिर जाई ॥ पुरुष०॥१५॥  
 ज्ञानसार-संवाचक ( पृष्ठ ४३६-३७ )

माहटाजी ने जैनों के यही चढ़ी हुई हमारी साहित्यिक और ऐतिहासिक निधिओंको प्रकाशमें लाने का जो प्रयत्न किया है वह बड़ा ही सुलभ है, लेकिन कलका संग्रह और चिराल है, जिसको प्रकाश में लाना कठना आसान नहीं है, साथ ही ऐसे संग्रह का

अवकाशित रह जाना भी सम्भवा नहीं है। मैंने ऊँचे कहा था, कि  
 हाइराबदद और मद्रासोराइस के सहारे एक मद्रासपूर्ण  
 सामग्री हो सी-सी प्रविष्ट। निम्नरास्र यदि देश-विदेश के  
 निम्नरास्र और निम्नरास्रों के पास से हो, तो बड़ा काम  
 हो। हमारे निम्नरास्रों के सम्पत्तियों और मंत्र-कर्मों का  
 भी इस कारण है। काक्रेट के लिये एक ही दिग्ग को पुष्पा-  
 फिटरा निम्नरास्र दिग्ग बनाया जा रहा है। निम्नरास्र और  
 पम्परास्र दोनों का लक्ष्य है कि "इसी लक्ष्य के लिये, एक  
 जोड़ा जाय," अतुल्यमान करने के लिये बड़ा फल लाने हो लेना  
 नहीं। यदि मद्रास और मद्रास्र और मद्रास्रों का सामग्री के  
 अतुल्यमान करने की योजना हो जाय, तो सुगमता से बहुत से  
 अनर्थ रहों का पता और सुलभ हो जाय। यह समझ रखना  
 चाहिये, कि पाटन और मद्रास्र के मद्रास्रों में प्राचीन दुर्लभ  
 बहुमूल्य वस्तु भी हैं, किन्तु हमारी वर्तमान मद्रास्रों के  
 सम्पत्तियों के लिये ही बहुमूल्य सामग्री जागर, कातपी, सम्पत्तियों  
 लोहे लोहे के सामग्री से समझे जाने लगे हैं मद्रास्रों में  
 भी हैं। यदि मद्रास्र के पार भाषा विभागों अथवा,  
 सुन्दरी, मद्रास्र और मद्रास्र के लोहे के मद्रास्रों के सविस्तर  
 सुविस्तर तथा मद्रास्र विस्तरास्र निम्नरास्र लोहे के लिये  
 काक्रेट भी इका रखने वाले पार लोहों को लाना दिया जाय -  
 तो इससे बहुत काम होगा।

# किञ्चित् वक्तव्य

बीमद्वैतज्ञानसारजी के साहित्यसे हमारा सम्बन्ध विद्यावीरकाळ से है। लगभग ३० वर्ष पूर्व हमारी धर्मनिष्ठा पूजनीया माधुबी ने बीमद्वैत की आत्मनिष्ठा संज्ञक रचना सुनने की इच्छा प्रकट की। अतः हमने वनको सुनाने की सुविधा के लिए प्रकाशित पुस्तक में से वसन्ती पत्र कापीमें प्रकट की थी। वह कापी आज भी हमारे पास विद्यमान है।

सं० १६८४ की वसन्तपंचमी को जैनाचार्य श्री शिव-हृवाचन्द्रसूरिजी कीकानेर पंचारे और हमारी कोटड़ी में वसन्ता वासुमांस हुआ उनके सम्पर्क से अनन्तत्वज्ञान और साहित्य की ओर हमारी अभिरुचि विकसित हुई। समय समय पर सूरिजी से बीमद्वैतज्ञानसारजी के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती रहती थी। एक बार आपने अपने ज्ञानमंदिर में बीमद्वैत के माहाविंगल की प्रति के सम्बन्ध में पोथी संख्या और पत्राङ्कों की संख्या सूचित करने के साथ साथ अंतिम पत्र के कुछ पन्ने हुए होने का भी निर्देशकर अपनी ३० वर्ष पूर्व की स्मृति की कोखी दी। माहा-विंगल नाम बड़ा आकर्षक था, हमने आपको सूचनानुसार उक्त पोथी खोज कर प्रति देली। सूरिजी ने उसके बाद बीमद्वैत के गौड़ी पाश्चात्ताव स्तवन की वह कड़ी भी हमें सुनाई थी जिससे उनके ६८ वर्ष की उम्र तक विद्यमान रहने की सूचना मिली थी।

तत्पश्चात् साहित्य शोध के लिए स्वामीय ज्ञानमंदिरोंका निरीक्षण करते हुए बीमद्वैत की अन्य कृतियाँ भी अवलोकन में

आयी। इससे हमारा सापक्षी रचनाओं के प्रति आकर्षण बढ़ा और प्रायः समस्त कृतियों की ऐक्यापी की जाने लगी। श्रीनिव कुशाग्र-सुरिजी के पूर्वजों से श्रीमद् ज्ञानमयजी का भारतीय सा सम्बन्ध था जबतः उनके जन्मसमय में हमें श्रीमद् की प्रायः समस्त रचनाओं की सुन्दर प्रति मिल गई।

साहित्यप्रवेश के साथ-साथ हमारा लक्ष्य कुछ कचरे में डाले जाने वाले प्राचीन साहित्य की समग्र प्रति के संग्रह की ओर भी गया। बड़े ब्राह्मण के घड़े में गेहें हुए हस्त-लिखित ग्रन्थों के जल-व्यस्त पत्रों को टोकरी व बोरों में भर कर फेंक दिये गये। उनकी संतर्पण करने पर श्रीमद् ने शैक्षिक संघों की स्थापित पंथालिपि-प्रतिलिपि करके, श्रीमद् को देने सहारायाओं के सामग्री, श्रीमद् के आदेशपत्र व प्रशासनिक सुदृढ विधियों पत्रादि विपुल सामग्री की उपलब्धि हुई। इसी कचरे में से श्रीमद् के जीवनचरित्र के दोहे बाले की सप्त पत्र भी हमें प्राप्त हुए जिनमें से एक तो क्रीड भा ईश्वर जन्मा और ११ ईश्वर चौड़ा ही था। बहुत मोटा करने पर और बड़ी-बड़ी दुलकों में भी जिस कस्तुरी प्राप्ति सम्भव न हो, कभी कभी बर पेसे कुछे कर्म में बाले हुए दोहे से पुर्ण में मिल जाती है। साधारणतया ऐसे पत्रों को माहल नहीं दिया जाता। पर न माहल करने ही हमारे सामने पत्र जिनसे ऐतिहासिक सामग्री की अनमोल सूचना मिलती है, हमारी अज्ञानता व असमर्थता के कारण नष्ट हो चुके हैं।

संयोग की वजह से २२ वर्ष पूर्व जिन ग्रन्थों की ऐक्यापियाँ तैयार की गयी थी वे हमने हमें काल तक उपलब्धित अवस्था

में ही पड़ी रही। इसी बीच बीमद् का साहित्य प्रकाशनार्थ कलकत्ता आया गया पर जब तक कागज परिपाक नहीं हुआ था। हम उसे गद्दी में छोड़कर बीकानेर चले गये और थोड़े से मूषकों ने उसे अपना भक्ष्य बनाता प्रारंभ कर दिया। हमने पाचन आरंभ कर देखा तो उसके बहुत से छूट तो कातर कातर हो गये थे, कुछ रचनाएँ बिकारे से भक्षित अवस्था में मिलीं। हमें अपनी अस्वास्थ्यपूर्ण और गणेशभजन की कनकुर पर व्यथित खेद हुआ। इस घटना को भी लगभग १७ वर्ष बीत गये, प्रकाशनकी व्यवस्था न हो सकी। पर अपने 'ऐतिहासिक जैन साहित्य संग्रह' में बीमद् के जीवन सम्बन्धी रोड़े, बीमद् के हाथ से मिले हुए एक स्तवन और आप के चित्र का आभूषण बनाकर प्रकाशित कर दिया था।

आपके साहित्यिक शोध के प्रारंभकालमें बरिबर समयसमुन्दर संकलीतिव्यवधारों के उत्तर प्राप्त करने के निश्चिष्ट में जैन साहित्य महारथी स्वर्गीय मोहनलाल बलीचन्द देसाई से हमारे सम्बन्ध स्थापित हुआ और वह क्रमशः दृढ़तर होता गया। हमारे द्वारा बीकानेर के ज्ञानमंदारों की विपुल साहित्य और हमारे संग्रह की अनेक महत्वपूर्ण कृतियों की सूचना पाकर बीदुत देसाई बीकानेर पधारने के लिए उत्कण्ठित हो गये। लंबी बाढाबाढ के पश्चात् लगभग १२ वर्ष पूर्व उनका बीकानेर पधारना हुआ तो उन्होंने अपने प्राण बीमद् ज्ञानमंदारों के पदोंकी एक सुन्दर प्रति की सूचना दी तो हमने अपने गलत किये हुए पद संग्रहकी प्रेरणापी कहे दिखवायी। आप बीमद् के पदोंकी मार्मिकतासे पढ़ते से ही प्रभावित थे और सम्मानतः प्राप्त प्रति की प्रेरणापी भी वे कर चुके थे अतः हमारी प्रेरणापी भी वे जितने समर्थ साथ डे गये

और श्रीमद् के समस्त पदों का सम्पादन कर दिया। सम्पादन ज्ञान वसारक संकल की ओर से उसके प्रकाशन की बात भी चली। द्वारे मिल श्री० यथिष्ठान श्रीदत्तलाल वाहराकर वेन में देने के लिए सबसे प्रेरणापी भी ले गये। पर संगीतबल यह प्रकाशित न हो सकी। देवार्थ जी का सम्पादन श्रीमद् के यह संग्रह का संस्करण अवश्य ही महत्वपूर्ण होगा पर वेद है कि उनके स्वर्गवास के तत्पश्चात् उनके सौम्य बहुत सम्भवतः हो गया अतः सम्पूर्ण जाकर बने हुए संग्रह का अवलोकन करने पर भी यह प्रेरणापी न प्राप्त हो सकी, संभवतः रही कागजों में यह नष्ट हो गई होगी। बिना संग्रह के लिए स्वर्गीय देवार्थ ने अपना जीवन लगा दिया था और रात को १२ और दो-दो बजे तक कठिन परिश्रम कर लेकड़ों मोरस एवं वेनकारिमें डेपार की भी बनकी देनी दुरवस्था देखकर हृदय को बड़ा ही परित्याग होता है। सोच प्रकाशिकारी के अभाव में साहित्यिक विद्वानों के लिए हुए परिश्रम कीही बेकार हो जाते हैं।

लगभग ३-४ वर्ष पूर्व पूज्य श्रीभद्रसुनिजी महाराजने अन्ध्या-सिद्ध शास्त्रा की ओर उत्तरोत्तर बढ़ते हुए श्रीमद् की रचनाओं को अवलोकनार्थ हम से संग्रहाया और उनका स्वच्छाधिकार करके प्रकाशन की विवेक रूप से सूचना करते हुए आर्थिक सहायता का प्रबंध भी कर दिया। अनुसार तीन वर्ष पूर्व यह ग्रंथ प्रेस में दे दिया पर वेन की असुविधादि के कारण यह ग्रंथ इतने लम्बे अरसे से प्रकाशित हो रहा है। पूज्य भद्रसुनिजी ने हमसे रही हुई अप्पुदियां और प्रकाशन विर्द्ध के लिए हमें मोठे लालंब भी दिये पर हम निरुपय थे। पहले ग्रंथ छोटे रूप में



प्रकाशन का विचार था अतः प्रथम द्वय सहाय की स्वीकृति । बापे सखन ने ८००) से अधिक देने की अनिच्छा जाहिर । तब पुन्धरी ने गम्हूर निवासी सा० मेराबचन्द नेमचन्द को भित कर पूरे धंध की सहायता के लिए भी तैयार कर दिया । हर इधारा भी छोम बड़वा रहा और धंध काफी बड़ा होना था । फिर भी सीमद् की रचनाओं का यह एक ही भाव है कि इसमें मुख्यतः आध्यात्मिक रचनाओं ही संकलन किया गया । सीमद् की जैन तरबकान और जूहरी इतर विचित्रक अन्य रचनाओं का सम्मेलन इतना ही सीमद् जमी इधारे पास और हा है । इन अप्रकाशित रचनाओं में सीमद् की साहित्यिक विद्या की माँकी अधिक रूप से सम्बद्धित है ।

हमारा विचार जीवनचरित्र के साथ सीमद् को दिये हुए ताल (राजाओंके स्वयं लिखित) स्कॉको पूरी नकलें देनेका भी था । र सीमद्की बहुत सम्पी हो जाने से इस विचार को स्वर्गित करना पड़ा । सीमद्की आध्यात्मिक रचनाओं में योगिराज शार्ङ्गधनजी की चौबीसी पर बाछावरोच, बहुत ही महत्त्वपूर्ण :। इसे प्रकाशित करना भी निराम्य आवश्यक है पर मर्तव्य त्वक विद्यता बड़ा होने के कारण इस सीमद्में सम्मिलित नहीं किया जा सका । ईर्ष्या विषय है कि उसका विलेप रूप से प्रयोग करतेहुए हमारे मित्र जयपुर के जोहरी को मराबचन्द जी अरागढ़ ने शार्ङ्गधनजी की चौबीसी पर आधुनिक रंग का प्रेषण किया है, जो सीमद् की प्रकाशित होगी ।

हमें खेद है कि धंध में बहुतसी अशुद्धियाँ रह गयीं, पुन्धरी नरमुनिजी (आमकक-सहजानन्दजी)महाराजमें उनका शुद्धिपत्र

भोजनेकी कृपा की जिसके लिए हम पूज्यजीके अत्यन्त आभारी हैं। इस ग्रंथके प्रकाशनका सारा श्रेय भी इन्हीं पूज्यजी को है। अतः यह कृती के चरणों में समर्पित है। आप अभी बहुत ही अछूट साधना में लीन हैं, शुरूदेख उन्हें पूर्ण सफलता दें। यही हमारी मनोकामना है। हमारी इच्छा थी कि पूज्यजी इस ग्रंथ में दो बार शाल्य लिखते पर आपने किसी भी प्रकार से प्रसिद्धि में जाना स्वीकार नहीं किया। हमने आपकी इच्छा के विपरीत अपनी दार्ष्टिक भाक्ति यश आपजी का कोटो देने की भूलता की है अतः हम इसके लिए क्षमाप्रार्थी हैं।

विश्वविद्वत् महापंडित श्री राहुल सांकृत्यायन ने अपनी अनेक साहित्य प्रवृत्तियों में व्यक्त रहने पर भी प्रस्तुत ग्रंथ की प्रस्तावना प्रेमपूर्वक जिस भोजनेकी कृपा की इसके लिए हम आपके अनुमदित हैं। स्वर्गीय आचार्य श्रीहरिमाण्डसूरिजी महाराजने अपने संमन्त्रण शुरुआत से श्रीमद् के वृत्तर परों की दो दो बार नकल करा है भोजी पदार्थ समका आभार स्मरणीय है।

कलकत्ता  
वैशाख कृष्ण ७  
सं० २०१०

{ अंगरचन्द नाहटा  
अंगरलाल नाहटा :

# अनुक्रमणिका

१ योगिराज श्रीमद् ज्ञानसार जी (जीवनचरित्र) १ से १०५  
श्रीमद् ज्ञानसारजी मुखवर्णन काव्यादि पृ० १०६ से ११२

## १ चौबीसी

कृतिनाम	आदिपत्र	पृष्ठ संख्या
१ श्री अक्षय चित्र सत्जन	अक्षय चित्रदा	१
२ श्री अक्षय चित्र सत्जन	अक्षय चित्रेश्वर अथा केसर	१
३ श्री संघव चित्र सत्जन	संघव संघव संघव कहि कहि	२
४ श्री अमिनन्दन ॥	अमिनन्दन अलखारी मेरी	२
५ श्री सुमति चित्र ॥	सुमति अमेश्वर अरब अरब कहि	३
६ श्री अक्षय ॥ ॥	अक्षय चित्र तुं सुहि स्वामी	३
७ श्री सुपास ॥ ॥	श्री सुपास चित्र ताहरी	४
८ श्री अक्षय ॥ ॥	अक्षय समन्वयी नहि समरै	४
९ श्री सुमति ॥ ॥	सुमति अमेश्वर ताहरी	५
१० श्री अक्षय ॥ ॥	अक्षय राम राम अथा जी	५
११ श्री अक्षय ॥ ॥	श्री अक्षय चित्र साहिबा	५
१२ श्री अक्षय ॥ ॥	अक्षय चित्रराज नौ	६
१३ श्री अक्षय ॥ ॥	पाई मेरे अक्षय अमेश्वर अथा	६
१४ श्री अक्षय ॥ ॥	तुं ही अनन्त अनन्त हूँ	७
१५ श्री अक्षय ॥ ॥	अक्षय अमेश्वर अक्षय अक्षय अथा	७

कृतिनाम	आदिपद	पृष्ठ संख्या
१६ श्री शक्ति .. ..	अब सब जान्य गयी सब ऐसी	८
१७ श्री कुंदुनाथ भिन सारन	कुंदु भवैसर साहिवा	८
१८ श्री लखान .. ..	अब भिन असुख पादुन बिना	८
१९ श्री भक्तिनाथ .. ..	बलि बनेकर दुख ठगुवाई	९
२० श्री सुनिधुना .. ..	सुनिधुना भिन गरी	९
२१ श्री बलिनाथ .. ..	नाथ भिन इन काल के रंघारी	१०
२२ श्री मेरि भिन .. ..	मेरी बरीत कछायो मेरि भिन	१०
२३ श्री पारबनाथ .. ..	पारा भिन हूँ हे सब कछारी	११
२४ श्री बीर भिन .. ..	बीरनाथ भिन कहि लखान	११
२५ कलक (वीवीवा) .. ..	वीवीवाची में सुनि सुनि सुनि बीबी	११

### २ विहरमान वीवी

१ श्री बीबीभर भिन सारन	भिन गोठमें भिन पदधिबै	१३
२ श्री दुगर्मभर .. ..	दुगर्मभर भिननाथ बी दे	१४
३ श्री बाहुभिन .. ..	बाहु भिनेभर रोधा लारी	१४
४ श्री दुवाहु .. ..	बी दुवाहु भिनंद ली	१५
५ श्री दुवाहा .. ..	मैं लखी भिननेय करी हो भिनली	१५
६ श्री लखनाथ .. ..	बी लखनाथ लखरी	१६
७ श्री लखनाथ .. ..	दुख पारबनाथपारबनी	१७
८ श्री लखनाथ .. ..	इस बीबी हूँ दुख करी	१८
९ श्री विद्याभ भिन .. ..	बीविद्याभ भिननाथ बी	१८
१० श्री सुदुख .. ..	बी हूँ वापी वाजे लखरी	१९
११ श्री लखनाथ .. ..	बी लखनाथ हूँ सैनुना भिनना	२०
१२ श्री लखनाथ .. ..	लखनाथ भिन पूरे लखरी	२१

कृतिनाम	आदिपद	कुल संख्या
१३ श्री चन्द्रकाशु भिन्न कालन में आम्बी बहाराज के		२१
१४ श्री सुपंगम	वैकुण्ठ तुम श्री न भिन्न हो	२३
१५ श्री देवधिय	मेम मलु दिन केम विरै	२३
१६ श्री देवराजिन	आनखरै देखै बिना रे	२५
१७ श्री बीरसेन	मैं सीसी बलि बलि बली	२६
१८ श्री देवदया	आनख के पंकजापति	२७
१९ श्री महापरा	मैं ही ए आम्बी नहीं हो बिजली	२८
२० श्री अचितासीरै	आहिन्दी = चमरेही बिहान निरानिदी	२९
२१ कलषा प्रकलित	एक बीरु बिजयन बिजराया	३०

## ३ बहुपत्री पद संग्रह

आदिपद	कुल संख्या
१ बड़ा बरीका तनका, मयधू	३६
२ पड़ी मयधू तनका, मयधू-	३१
३ बीर बीर भव बीर बालरे	३२
४ पर परचम विचारै, आनख-	३३
५ आन खरु आन विचार	३४
६ पैतल परम विचार, मयधू-	३५
७ बस हम का तनका, मयधू-	३६
८ महुला पद नहीं मरै, मयधू-	३६
९ बीर मयधी आन आन बालरे	३७
१० आन रे का रैर बिहानी	३८
११ बीर कलस महुल बिज बीर	३९
१२ बिज आनख की बीर, हूं तो बि-	४०

## आदिपद

## कुल संख्या

१३	कोन कही हू न मने, माई मेरी	...	४२
१४	अनुभव, इस कम के संभारी	...	४२
१५	अनुभव, इस ली रस के खीरे	...	४३
१६	ज्ञान कला मनि मेरी, मेरी,	...	४३
१७	ज्ञान योग्य विपत्ती इस ली-	...	४४
१८	परधर पर धर पाव रखी रो	...	४५
१९	सुखी क्या करिसे अरुणा	...	४५
२०	अनुभव ज्ञान नवन नम मूँदे	...	४६
२१	अपधू पानी निम पर मेरी	...	४६
२२	अपधू इस निम कम अचिन्ता	...	४७
२३	माई मेरी आत्म मनि ममिन्तरी	...	४७
२४	अनुभव आत्म राम मममे	...	४८
२५	आत्म अनुभव जंम की, अनुभव अपनी पाल पलीये	...	४९
२६	अनुभव जीवन पर पर मने	...	४९
२७	जीवन पतिवां कवी न पछाई	...	५०
२८	जीवन पतिवां कीर पछाई	...	५०
२९	नाम निचारी नाम पताली	...	५१
३०	नाम तुम्हारी तुम ही जानी	...	५१
३१	माई मेरी कोन अर्कत तुम्हारी	...	५२
३२	अनुभव कवी तुम्हारी हाँसी	...	५२
३३	कहा कहिये ही नाम कमान ते	...	५३
३४	प्रभु योग्यता कवा करिये	...	५३
३५	अपधू न नाम का आकार	-	५४

## आदिपद

## पृष्ठ संख्या

३६	अबधो हय निज कल कलु बाही	...	५५
३७	अबधु आत्म तज गति नुही	...	५६
३८	अबधु वा अब के अलबाही	...	५६
३९	अबधु आत्म अरु सुखमा	...	५७
४०	अबधु सुमति सुखमिनी बाही	...	५७
४१	अबधु आत्म कल अलबा	...	५७
४२	अबधु आत्म अरु सुखमि	...	५८
४३	अबधु विमला कल अलबाही	...	५८
४४	अबधु कौडी सुखमा अगई	...	५९
४५	मेरा आत्म गति ही अलबा	...	६०
४६	बाधो बाई देखा बीन अलबा	...	६१
४७	बाधो बाई आत्म कल परेखा	...	६१
४८	बाधो बाई आत्म केल अलबा	...	६१
४९	बाधो बाई कल अलबा कलि अलबा	...	६२
५०	बाधो बाई कल हय अगे निराखी	...	६३
५१	कौडी कर से होत अलबाई	...	६४
५२	बाधो बाई निहने केल अलबा	...	६४
५३	कहुँ आत्म अलबा अल बाई	...	६६
५४	कहुँ आत्म अलबा कर कल अलबा	...	६६
५५	कल अलबा कल अलबा अलबा	...	६७
५६	अलबा अलबा कल अलबा	...	६८
५७	कली कलि कल निहने निहने	...	६९
५८	कली ही आत्म कल अलबा अलबा	...	६९

## आदिपद

## कुल संख्या

५९	मिया बिज करीब छुईसी हो	...	४०
६०	मिया सोरू कहे न बोले	...	४०
६१	प्यारे बाह पर बिज, यो हो नीकम काम	...	४१
६२	पर के पर बिज मेरो	...	४१
६३	छे छुन जाऊ कयूँ भी	...	४१
६४	देन बिहारी रे रक्षिया	...	४१
६५	बारी नचकल नीर	...	४३
६६	सासना छलबाली	...	४३
६७	मेनी हूँ हरेली हेली	...	४३
६८	मरणा ली जाया	...	४४
६९	बारी में बेटे बजालेरो	...	४४
७०	पर पर बोलत मेरो मिया	...	४५
७१	सूही जायम बजारी, बेचमर	...	४५
७२	कम हूँ हूँ कम ज्योति छुई	...	४६
७३	मेरो बाब कयो है, माफत कयो बलिनाम	...	४६
७४	संदरलिये दुख बाली बेरिये	...	४७

## ४ अन्तिमत बारक व्यवस्था नीत बालाप्रबोध

८०

## ५ आभ्यात्मिक पद संग्रह

१	बीर कयो, बीर कयो,	...	९५
२	बीर कयो कम जाय जयो	...	९५
३	उठ रे बालकना बीर	...	९६
४	हो रही ली दुख बिली	...	९६



काव्यपद	पृष्ठ संख्या
५. सात गवाँ पड़ी क्यूँ ही जान	१७
६. निजम अति प्रीत निजाना हो	१७
७. सोल सवाले कदा कही अलखाने	१८
८. बीन बिही को बीन	१९
९. बाँस बास न कबो	१९
१०. बेतन में हूँ राखी राखी	१००
११. जान बगाई हो बिबेके	१००
१२. कुबल कुबलि अति कैरनि बने	१०१
१३. दिवा दिन एक निमेष हूँ जो	१०२
१४. अकुलन नाच हूँ जान बगाने	१०२
१५. अलखिही बीनी बास क्यूँ	१०२
१६. बेतन निज दरिवाज की कछी	१०३
१७. बीन बरकता खाने होकी हो	१०३
१८. बीघन निज के न कहिये रे बाई	१०३
१९. बरकता बीता रे	१०४
२०. अलखिनी बाँरी बास कबो हो	१०४
२१. हूँ कुबली संघन	१०५
२२. कूँची कुमिल को कूँची-	१०५
२३. अलखानी अने के रे कहिये बाती	१०५
२४. पर बावी सोल पर संघ निजान	१०६
२५. जान क्यूँ हो अलख रे बाई	१०७
२६. अने कही, जान सवान अलख	१०७
२७. कूँची का अलख की बास	१०७

आदिपद	कुल संख्या
२८ आये हो आये होर	१०८
२९ सोई हो सोई हो	१०८
३० बेहज बेहो हो कछो हो	१०९
३१ आये होइय बेहो, आये होय हो	१०९
३२ होइयो कछो सोइय हो आये	११०
३३ सोइय हो होय होइयो	११०
३४ कछोय हो हो आये हो हो	११०
३५ आये होय होइयो हो हो	१११
३६ हो हो हो आये होय हो हो	१११
३७ होय होय होय हो	११२

### ६ स्तवनादि भक्ति पद संग्रह

१ शुरुंकर होय होय	आययो आययो हो	११३
२ " " "	आयो आययो हो हो	११४
३ अरुन भिज होय	आयोयो होय होय होय होय होय	११४
४ " " "	आयो आययो, आयो भिज हो	११५
५ भिजोय हो होय होय	आयो आयो होय होय हो	११६
६ " आयो " "	आयो भिज हो होय होय हो	११७
७ " " "	होय होय होय होय होय हो	११७
८ " " "	हो होय होय होय होय हो	११८
९ " " "	आयो होय होय आयो	११८
१० " " "	होय होय न होय,	११९
११ " " "	आयो होय होय होय,	११९

कृतिनाम	स्वादिपद	पृष्ठ संख्या
२ मैत्रि-रात्रिपत्रो कोतम्	मोहि निम्न पारे पारा को-	१२०
३ श्रीमन्मोक्षिभार स्तवन	मोक्षिभार श्रीमान्मो	१२०
४ " " "	मोक्षिभार स्तवन श्रीमान्मो	१२२
५ श्रीमन्मोक्षिभार स्तवन	पारा प्रभु मरणात् मुनीन्	१२३
१५ " " "	पारा प्रभु मरणात् मुनीन्	१२३
१७ श्री श्रीमान् " "	मोहि मोहि मरणात् श्रीमान्	१२४
१८ श्रीमन्मोक्षिभार " "	मरणात् मोक्षिभार श्रीमान्मो	१२५
१९ " " "	मोहि मरणात् श्रीमान्मो	१२६
२० मरणात् श्रीमान् " "	मरणात् श्रीमान्मो	१२७
२१ श्रीमन्मोक्षिभार स्तवन	मोक्षिभार श्रीमान्मो	१२८
२२ श्रीमन्मोक्षिभार स्तवन	मोक्षिभार श्रीमान्मो	१२९
२३ " " " "	मोक्षिभार श्रीमान्मो	१३०
२४ श्रीमन्मोक्षिभार स्तवन	मोक्षिभार श्रीमान्मो	१३१
२५ " " " "	मोक्षिभार श्रीमान्मो	१३२
२६ " " " "	मोक्षिभार श्रीमान्मो	१३३
२७ " " " "	मोक्षिभार श्रीमान्मो	१३४
२८ " " " "	मोक्षिभार श्रीमान्मो	१३५
२९ श्रीमन्मोक्षिभार स्तवन	मोक्षिभार श्रीमान्मो	१३६
३० श्रीमन्मोक्षिभार स्तवन	मोक्षिभार श्रीमान्मो	१३७
३१ " " " "	मोक्षिभार श्रीमान्मो	१३८

### ७ दादा मुकु स्तवन

१ मुकुभार, विमल मुकु भक्तिभार	१३९
२ मुकुभार, विमल मुकु भक्तिभार	१४०

कृतिनाम

आदिपद

पृष्ठ संख्या

८ श्री सिद्धाचल आदि त्रिन स्तवनम्

आत्मरूप अज्ञान न ज्ञानं निवर्णम् १३४

९ माय पट्त्रिंशिका क्रिया अलुप्तता कलु नदी १४०

१० त्रिनमदाभित आत्मप्रबोध कृतीसी

अपरमात्मपरम पद १४४

११ चारित्र कृतीसी ज्ञानघरो क्रिया करो १४५

१२ मति प्रबोध कृतीसी तप पत तप तप क्यों करौ १४६

१३ हीयाली बालाप्रबोध जेधे तनय एक ही जायी १४७

१४ श्रीवृत्तार्थगीत बाला० जैन कही कहुं होवै १८०

१५ संबोध अष्टोचरी अरिहंत सिद्ध अनंत १६३

१६ प्रस्ताविक अष्टोचरी आत्मता परमात्मता २०४

१७ आत्मनिन्दा २१८

१८ श्री आनन्दयन पद बालाप्रबोध

१ माय सिद्धी माय कदापी २२४

२ आत्म अलुप्तता तप कदा २२५

३ त्रिनेत्री नीत कही न करौ २२७

४ राशि राशि तनय कदा २३०

५ त्रिना त्रिन सिद्ध भी कहुं होवै २३४

६ त्रिना त्रिन त्रिन-त्रिन कही हो २३६

७ अलुपी जीवन कैव कदापी २४०

आदिपद	पृष्ठ संख्या
८ अथ मेरे प्रति प्रति देव निर्जन	२४२
९ वायु संपति निज जैसे पक्षी	२४५
१० सखीने साक्षिण बालिने मेरे	२४७
११ दुखिने बाली सागर की	२५०
१२ कहीले अकल नरक की	२५३
१३ कौट पटुर दित्त ज्वाही मेरी	२५४
१४ कौट वैकुंठ गरी छै रे	२६०
१६ गूढ (निहाल) बाबनी आंच आंख पर पाउंखरा	२६३
२० पंच समवाय विचार	२७१
२१ श्री विनकुशलधरि लघु अष्टप्रकारी पूजा	२७६
२२ आभ्यात्म मीठा बालाबोध	२८१
२३ विविध प्रश्नोत्तर (१)	३५७
२४ विविध प्रश्नोत्तर (२)	४०८
२५ श्री नवपदजी की पूजा	४२३
२६ श्री नवपद स्तवन	४३३
२७ पूरब देश वर्णनम्	४३५
२८ परिशिष्ट १ अवतरण संग्रह	४६६
२६ छुदाछुदि पत्रक	४८०

# अभय जैन ग्रन्थमाला के प्रकाशन

१—अभयसंस्कृत	लक्ष्मण
२—पूजा	१०
३—कवी कृपावती	१०
४—विषया कर्तव्य	१०
५—स्नात पूजादि सौम्य	१०
६—चिनराज भक्ति काव्य	१०
७—संभवति सोमजी साह	१०
८—पुराप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि	१०
९—ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह	२॥
१०—दादा श्रीजिनचन्द्रसूरि	॥
११—मणिधारी श्रीजिनचन्द्रसूरि	॥
१२—पुराप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि	॥
१३—ज्ञानचन्द्र सन्ध्यावती	२॥
१४—बीकानेर सौम्य संग्रह	द्वय एव है

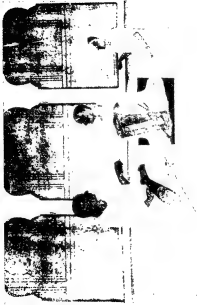
आति स्वाग—

नाइटा अर्द्ध

४, बगमोहन मल्लिक रोड

कलकत्ता—४

## ज्ञानसार ग्रन्थावली



श्रीमद ज्ञानसारजी, बापक चक्कीसि एवं सोपलजीके साथ

## श्रीमानभा. प्र. न्या. वर्मा



श्रीगुरुभ्यो नमः, अमीन-दुआ से किया।

**संस्कृत-सामान्य**



# योगिराज श्रीमद् ज्ञानसारजी

---

सन्त पुरुष मानव समाज के पथ प्रदर्शक होते हैं। विश्व के प्राणियों को उनकी अनुपम देन प्राप्त होती रहती है। उनकी साधनामय जीवन मानव-समाज के जीवन-निर्माण व उत्थान के लिए आधार दीपस्तम्भरूप होता है। उनके दर्शन मात्र से मज्ज जीवों के हृदय में अपार अद्भुत उत्पन्न होती है। उनकी प्रशान्त मुद्रा से व्यथित हृदय में भी शान्ति का अनुभव होता है। मानव ही नहीं उनकी करुणा व कृपा का श्रोत तो पशु-पक्षी आदि अयोध प्राणियों पर भी एकसा प्रवाहित होता है, तभी तो योगी के लिये भगवान् पतञ्जलि ने अपने योगशास्त्र में कहा है कि “अहिंसा प्रतिष्ठया तत्सन्निधौ वैरहागः”। उनके विराम की अनुपम भावना से प्रभावित होकर सिंह और बकरी भी अपने जातिगत वैरभाव को त्याग कर एक बाट पानी पीते हैं। दुष्ट से दुष्ट प्राणी भी उनके प्रभाव से रिष्ट बन जाते हैं। सन्तों का पवित्र जीवन स्वयं कल्याणमय होने के साथ साथ दूसरों के लिए भी कल्याणकारी होता है। उनकी बाणी में जादू का सा असर होता है, जिसके भ्रमण और स्वाध्याय से जिज्ञासुओं के हृदय में अपूर्व आनन्द का उद्भव होता है। और

वस्तुस्वरूप का मान होकर अद्वितीय सबों को त्याग एवं आत्मोत्कर्ष-पक्षपाती होने की अनुमति प्रस्ताव मिलती है । सबों के समान का बड़ा भारी साहाय्य है । महानि तुलसीदासजी के शब्दों में—

“एक बड़ी आधी बड़ी, आधी में पुनि आध ।

तुलसी सखत साधु थी, कट्टी कोटि अपराध ॥”

सबों का क्षणमात्र का समाधान एक पद का नहीं, बनेकों सबों के पदों का त्याग कर देना है ।

बिना आनन्द के कारण मन सर्वदा बाह्य पदार्थों एवं इन्द्रियों के विषयों को ही धिक् एवं मुक्तकथा समझकर जहाँ में चला रह आध्यात्मिक साधना के पथ पर अग्रसर नहीं होता । शमरस के आनन्द का अनुभव न होने के कारण ही स्वाधीनता न मिलने पर भी मन पर पौष्टलिक विषयों की ओर आश्रित रहता है ।

बहिरं हि विद्वान्ने के अनुसार सारी दार्ष्टिक मुक्तमय मूलार दस सर्वज्ञ हो, जन्म वस्तुतः शान्तरस का अनुभव आनन्द अनिर्वचनीय है । मृगारस जसकी कोटि में लक्ष्यता ही है । निम्नमे श्रम की अनुभूति शून्य की है, वही उस अनिर्वचनीय आनन्द को समझ सकता है ।

सब पुरुषों ने आत्मोत्कर्ष द्वारा जो अन्त्यात्मरसो रूप अमृत भोज निवारा, वह अनुभव अनुभव का । अन्त्यात्म के ही विरल व्यक्तियों ने ही उनके प्रसाद से उस अमृतारस का पवित्रित् आस्वादन प्राप्त किया है ।

सबों की वांछी, अनुभव प्रयत्न होने से, बहुत ही पदोपेक्ष और इन्द्रियारत होती है । वह मोक्षमार्ग में मान भूले व्यक्तियों में

नवचेतना जागी है । अतः ज्यों तब बापों का कल्याणार्थ किया जाता है वह विज्ञानों को आनन्द विमोह कर देती है अन्धेरा परमानन्द रसमें सराबोर हो जाता है । सन्तों का भौतिक देह तो प्रकृति धर्मोत्पत्ति के समय आने पर बिलीन हो जाता है, पर कलक कलर देह दुःख दुःखान्तों तक जीवन सन्देश देता रहता है, जिससे व्यावहारिक जीवन-स्तर ऊँचा करता रहता है । सन्त और सन्तबापों के सद्गुरु मानव के लिए कलक कल्याणार्थ अन्य नहीं है । कल इसे इक्ष्वांस करती हूँ जब कभी व जहाँ कहीं भी सन्त का संयोग मिले कलसे लाभ करना चाहिये एवं सन्तबापों का तो नित्य व निरंतर स्वाध्याय कर आत्मिक आनन्द को प्राप्त करना चाहिये ।

जैसे तो विश्व के प्रत्येक देश व प्रान्तमें सन्तों का प्रादुर्भाव होता है, फिर भी भारतवर्ष व्याव्याप्यमान देश होने से यहाँ सन्तों का आविर्भाव प्रचुर मात्रा में हुआ है । इसके एक छोर से दूसरे छोर तक आस भी सन्त महात्मा कलक्य होते हैं । ऐसी अवस्था में भारत संतों की लीलाभूमि है—कल दे तो कोई असुविधा नहीं होगी । वे सन्त किसी देश जाति या सम्प्रदाय विशेष की सम्पत्ति नहीं किन्तु वे सार्वजनिक निधि हैं ।

भारत में प्राचीनकाल से सन्तों की कई कलक परम्पराएँ चली आती हैं । उनमें सत्तना प्रजापति प्रत्येक की दृष्टि दृष्टि दृष्टि होती हैं पर साम्य समक एक ही प्रतीत होता है । प्रारम्भमें विचारमेद और निर्यामेद अवस्था दृष्टिोपर होता है, पर आगे चलकर वह नष्ट हो जाता है और मुख्य प्रेरणक एकीकरण हो जाता है । इसलिये तो कहा गया है कि—“एकै सद्गुरु बहुधा वदन्ति” ।

भारतीय सनातन परम्परा का इतिहास बहुत विस्तृत है । इनमें प्रधानतया दो परम्पराएँ हैं एक वैदिक परंपरा और दूसरी अमरा परंपरा । वैदिक परंपरा में अनेक सम्पूर्ण सनातन परंपराओं का समावेश हो जाता है और अमरा परंपरा में जैन एवं बौद्ध परंपराओं का । इन परंपराओं में समय समय पर अनेक नए नए और नई नई सनातन परंपराओं का प्रदुर्भाव भी होता रहा है ।

अपभ्रंश काल में सनातन साहित्य की प्रचलनता दो कारणों वल्लर गयी है, (१) लिखों और नाथपंथियों की, एवं (२) जैनों की । किन सतिवादा में सतिवादा में और पञ्च, और तीसरी सतिवादी सनातन परंपरा अलग हुई । यह सतिवादा अलग समय में ही अलगविध विस्तृत हो गई । सति अलगविध की सहायिणी है, साथही सति का अलगविध पर प्रभाव भी सति होता है । वे दोनों अलगविध और सति कारणों अलगविध विस्तारवादी होने से इनका सामाज्य—एकीकरण हो हो जाता है ।

हिन्दी साहित्य के अलग और भाषा के विकास का बहुत बड़ा सेव इन सनों की ही प्राप्त है । सनों की गयी राष्ट्र के इस और से उस और तक प्रचारित होने के कारण ही हिन्दी भाषा—यह से ऊपर उठकर साहित्य की परिभाषित भाषा बनती हुई राष्ट्र भाषा पद पर असीन हो गयी है ।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि हिन्दी साहित्य के विस्तार में जैन सनों का भी अलगविध योग रहा है । वेदवादा, परमात्म-प्रकाशादि सनों से हिन्दी साहित्य में जैन संत साहित्य की परंपरा प्रारंभ होती है । १७ वीं शताब्दि से अब तक की हिन्दी जैन

साहित्य का लेख सम्पन्न नाथ तो वह एक समस्त कथ का रूप धारण कर लेता ।

कवीर आदि संतों के पदों का उच्च उच्चालीन वातावरण का प्रभाव जैव सन्तों पर अव्यक्त लक्षित होता है । जिन जैव कवियों की मातृभाषा गुजराती व राजस्थानी थी, तथा जिन्होंने अपनी कविताएँ 'रचनाएँ' अपनी मातृभाषा में की उन कवियों ने भी पद साहित्य के लिए हिन्दी भाषा को ही चुना और उसी में 'रचनाएँ' की, फलतः जैव कवियों के द्वारा ही संस्कृत में मूल एवं आध्यात्मिक पद हिन्दी भाषा में उपलब्ध हैं । ये पद बहुत ही बहुबोधक और हृत्पुलकपूर्ण हैं । फलतः प्रथम भावप्रथम समय दृष्टि से बहुमूल्य हैं । कई कवियों के पद संग्रह तो उपलब्ध भी हो चुके हैं । कविरसीदास, कृष्णानन्द, शान्त, मधुर आदि दि० एवं स्त्री० समय सुन्दर, लिनराजसूरी, आनन्दधन, धर्मोदित्त, विनयवित्त, जगन्मूर्ति, ज्ञानसागर, ज्ञानानन्द चिदालम्ब आदि तथा जैव कवियोंके जैव पद हिन्दी भाषा में प्राप्त हैं । पर सेव है कि हिन्दी साहित्य के इतिहास एवं गौतमसाहित्य सम्बन्धी बड़े बड़े लेखों व ग्रन्थों में इन जैव संतों का कहीं भी नाम निर्देश एक प्राप्त नहीं होता । फलतः विद्वत्समाज से अनुरोध है कि वह इन सन्त कवियों के साहित्य का अध्ययन कर हिन्दी साहित्य के इतिहास व गौतमसाहित्य सम्बन्धी ग्रन्थों में उचित स्थान प्रदान करें । अन्यथा इतिहास सर्वोद्धीष्ट न हो सकेगा ।

हिन्दी सन्त साहित्य का निर्माणलोकन करने पर ज्ञात होता है कि सुन्दरदासादि योगों से कवियों को छोड़कर अधिकांश सन्त साधारण पदों लिखे ही थे, फलतः उनके साहित्य में, साधनानुसार जीवन के

कारण भावों की अभिव्यक्ति तो सुन्दर रंग से हुई है, पर कारण कला की दृष्टि से यह कलाकेन्द्रि का नहीं मान्य होता । इसमें जैन सन्त, साधनशील होने के साथ साथ कलाकेन्द्रि के विद्वान भी थे, कला कविता की दृष्टि से भी उनकी रचनायें निम्नतर की नहीं हैं । प्रस्तुत ग्रन्थ में ऐसे ही एक कान्याकामला योगी जैनकवि के रचनाओं के संग्रह का प्रथम भाग प्रकाशित किया जा रहा है जो कलाकेन्द्रि के योगी व सन्त होने के साथ कान्याकामला विद्वान भी थे, कला के दृष्ट कला की संक्षिप्त जीवनी प्रस्तुत करेंगे ।

**जन्म** राजस्थानकाली प्राचीन जंगल देश की राजधानी 'जांगड़' बीकानेर राज्य का एक अधिप्राचीन स्थान है । यहाँ से पाँच मील की दूरी पर स्थित कैलाशवास में कम दिनों जैनों की कच्ची बस्ती थी । कम ही जोग बहसि कालकर देवलोच कादि स्थानोंमें जाकर बस गये हैं । जोसवाल जाति के सवि गोपीय भेटी कदम्बान्द जी यहाँ

१ जांगड़ में एक जैन मन्दिर तथा संत बाबाजी का प्राचीन स्थान है । संवत् ११८१ का एक अभिलेख 'सूर' पर तथा सिवालपुर के सामने है । बीकानेर के श्री वासुदेव विजयल्ल तथा विश्वामित्री जी के मन्दिर में विराजमान प्रतिमाद्वय के चलिचरोत्पीकित अभिलेखों से पता चलता है कि यहाँ भगवान महावीर का विचित्रैल वा नीर उस विजयल्ल में सं- ११८६ वर्ष-शीर्षे क्रि. ५ के दिन लाल लाल के द्वारा सिवाल में स्थापित नाम किम् की स्थापना की थी । सूरदा केवल ही भित्री का कर्मचरुर से सम्बन्धित है । यह भगवतुर भी जांगड़ का ही कर्मचरुर का । जांगड़ स्थित सिवाल के सामने वाले केवल में भी भगवतुर नाम पड़ा जाता है ।

निवास करते थे, जिसकी कर्मावली का नाम जीनरदेवी था । सं० १८०१ में बालक पुष्करल की प्राप्ति हुई, जिसका नाम नाराय, नराय या नारायण रखा गया जो अपने 'पुष्कर नरायजी बाबा के नाम से प्रसिद्ध हुए' । इसलिये इसीका हीका नाम था ।

**शिक्षा** सं० १८१५ में मारवाड़ में कर्मावर पुष्करल पैदा था । जिसका कर्मान "बंदो बाल बरोबरों" के नाम से प्राचीन साहित्य में मिलता है । कर्मावरजीका पुष्करल में ही सुकमल होता है, पुष्करल में नहीं; बल्कि माता-पिता की विद्यामानता या अधिव्यमानता<sup>१</sup> में आप आपका परिणाम करके सामान्य-सुखम बीकानेर नगर में आपने और सर्वप्रथम बड़े उपलब्ध में विद्यामान बीकानेरवासियों<sup>२</sup> महाराजकी पराध-सेवा में करलिया हुए । खुशियों महाराज ने आपकी मन्त्रावृत्ति तथा विषयगत बुद्धि देखकर मावक-वाक्य होने के लिये विद्याभ्यसन के लिये विरोध प्रेरणा की और व्यवस्था का सारा भार लीककर कर आपने लम्बावधान में रखा लिया ।

१. देखिये हमारे 'ऐतिहासिक बौद्ध धर्म संज्ञ' में प्रकीर्णत 'ज्ञानचार भवदत्त हीरे' ।

२. प्रभावमान के विविधत गरी कदा या कथ्या ।

४. बीकानेर राज्य के कर्मावर नाम में बीकानेर पन्नावनदुप की कर्मावरी लक्ष्मी की कुली के सं० १७८४ वा० सु० ५ के दिन आपका प्रथम हुआ । कर्मावर नाम लक्ष्मण या । सं० १७९६ ज्येष्ठ सुदि ६ बीकानेर में बीकानेरवासियों-सुरिजीके दीक्षित ही कर्मावर नाम पाया । सं० १८०४ ज्येष्ठ सुदि ५ के दिन बीकानेरवासियों ने मावलीन्दमें आपकी मावली पद पर स्थापित किया । आपने बहुतों विद्वानोंकी प्रशिक्षण की तथा कर्मावर के लिये विहार किया था । सं० १८१९ ज्येष्ठ सुदि ५ की ७५ बलिनी पहिल बीकानेरवासियों वाया, सं०

**दीक्षा** श्रीजिनजीमसूरिजी के पास आपका विद्याभ्ययन निर्विघ्न होने लगा । सं १८१३ में सूरिजी ने बीकानेर से विहार कर दिया, नरराजी भी साथ ही थे । गवरबदेसर में चातुर्मास विराजमानि० सं ३ को विहार कर समस्त कली-ग्रन्थ में विपरीत हुए आचार्यों की जैसातेर पढ़ाये । जैसातेर उन दिनों सम्प्रदाियाली और जैनों की बहुत बड़ी बसतीवाला क्षेत्र था । सूरिजीने वहाँ सं० १८१६-१७-१८-१९ के बार चातुर्मास करके कर्मप्राप्त का खुल साम किया, भीलौड़वाली तीर्थ की यात्रा भी कई बार की थी । वहाँ से विहार कर मीनोड़ी चार्म-नाथजीकी यात्रा करते हुए सं १८२० का चातुर्मास गुह्यमें किया । फिर महेवा प्रदेस की बंदाते हुए श्री नाथोकाजी तीर्थ का वन्दन किया । सं० १८२१ का चातुर्मास कलोल हुआ । वहाँ से कम्हरा विहार करते हुए

१८२१ सालानु गृष्ठा १ की ८५ रात्रिमेंकि रात्रि साबू तीर्थयात्रा, सं० १८२५ वैशाख गृष्ठा १५ की ८८ रात्रिमेंकि रात्रिहार यह श्रीजिनजीमसूरिजीकी यात्रा, सं० १८३० माघशुक्ला ५ की ७५ रात्रि यह सूर्यवन्दन यात्रा, वहाँ से कृत्तिका आकर १०५ रात्रियों के साथ विरवार यात्रा, सं० १८३३ वै० सं० २ की भीषींभीषी की दुर्ग की संकेतवाली आदि अनेक तीर्थों की यात्रा की थी । सं० १८२० वैशाख गृष्ठा १२ की सुता में १८१ दिन बिम्बी की प्रतिष्ठा की तथा सं० १८२८ में फिर वहाँ ८२ दिवस प्रतिष्ठित किये । रात्रियों पर विचर अलख अनेक देवोंमें विहार करते हुए सं० १८३४ आश्विन गृष्ठा १२ की अथ गृष्ठा में सर्व विचरे । आप आपके कवि भी थे, आपकी दो चौबीसियां प्रकाशित हैं एवं अनेक छन्द, सुविधा उपलब्ध हैं । आपने संवत् १८३३ में आर्यभटीय नामक महानर्तक छन्द की रचना की थी । परम्पराकृत यह व० क्षमाकायाजी की रचना है, मन्वकी प्रकृति में उनका नाम संतोष के रूप में जाता है । अद्भुत ज्ञान साक्षु स्थानों से प्रकाशित हो हुआ है ।



सुरि महाराज चन्द्र नाम में प्यारे । समस्त रहे कि श्रीजिननाम-  
 सुरिजी महाराज पैदा विहायी ने और समस्तसुख सख्य में प्रभु  
 रहते हुए विचरते थे । हमारे परिव्रजान्तक को भी इनके साथ रहते ६  
 वर्ष जैसा दीर्घकाल व्यतीत हो चुका था, इसी बीच जलनगर, काव्य  
 कोष, हंद्, अलंकार, आत्म, प्रकृत्यदि का अध्ययन भी लक्ष्मणदेवि का  
 कर चुके थे और दीक्षा के योग्य २२ वर्ष की परिपक्व अवस्था प्राप्त थे  
 अतः सुरि महाराजसे निवेदन कर हुआ छुट्टीमें सं० १८२२ के मिति माघ  
 हुआ ८ के दिन विद्विषेण में चन्द्र नामने आपने दीक्षा स्वीकार की ।  
 दीक्षा के अनंतर सुरिजी ने आपका गुरुनिष्ठा नाम "ज्ञानसार"  
 रखा और प्रथम अपना शिष्य बनाया फलान् अपने शिष्य श्री महाराज  
 पण्डि' (गणपदजी) के शिष्यरूप में इसकी प्रशिक्षि की ।

**आचार्य श्री के साथ विहार** दीक्षा के पूर्व ६ वर्षों तक आपकी  
 आचार्यजी की निजा में रहने का सुयोग मिला था इसी बीच आपने  
 अनेक तीर्थों की यात्रा भी की थी जिनमें सं० १८१६ ज्येष्ठ वदि ३ को  
 सीताई पार्ष्णान्ता जलेश्वरीच है । दीक्षा के अनंतर मिति फाल्गुन हुआ  
 १ को आपने सुरिजी के साथ श्री आनू महाशिवजी यात्रा की ।  
 तदनंतर वेगमूले, खरिया रहकर रोहीठ, मंडोवर, जोधपुर, तिमरी  
 होकर सं० १८२३ में मेड़ते में चातुर्मास निवास । चातुर्मास के अनंतर  
 सुरि महाराज अस्तुर प्यारे । श्री संघ के हर्ष का पारावार न रहा ।  
 धर्म ध्यान का सूत्र ठाट रहा । अस्तुर माने स्वर्गपुरी ही थी । कई

१ आपकी दीक्षा सं० १८१० मिति माघ वदि १० की बीकानेर में  
 श्री जिननामसुरिजी के यहीं हुई थी ।

बहिनों की तरह दिन बीते । संघ का अन्तर्ग्रह होने पर भी बराली पूरबी नहीं न सत्कार मेलाद पधारे और सख्तपुरसे १८ कोरा पर विपत भुनेवा नामसे श्रीभूषमादेव—केसरिकाव्यायजी\* की आज्ञा सं० १८२३ बैसाखी पूर्णिमा को ८८ बहिनों के परिवार सह हुई । फिर सं १८२३ का भातुर्मास सख्तपुर में वाली बहनों के पट्ट पर (अन्तर्ग्रह में) किया । बीकानेर के संघ की आज्ञा की कि जब मानौर होने हुए पूरबी अथवा बीकानेर पधारकर इसारी आज्ञा पूर्ण करेंगे पर सूरि महाराज सींगे साचौर\* पधारे और सख्तपुर मन्थर श्रीमहावीर काशी के इर्दाम किये ।

**सूरत में जिन विम्ब प्रतिष्ठा** सूरत\* बन्दरमें नम्ब  
जिनालय तथा नम्ब

जिन विम्बों की प्रतिष्ठा कराने के लिये सूरत का संघ लाताथित था । जब सूरिमहाराज साचौर थे, सूरत के संघकी विज्ञप्ति आई और सूरि महाराजने अपने दिव्य परिवार के साथ वहाँ के लिए बिहार कर दिया । सं० १८२६ वि० ज्येष्ठ वदी ८ रविवार को जब आप सूरत में विराजमान थे, पदराके माना, हीनाभाई, कदानजी भाई, बीकण्ठास, लोचरभंड कादि आजकोंने आपको जो कन दिया था वसते मायूम होता है कि कस

१ यह तीर्थ देहाग्रह और दिक्कर उच्च समग्रहण नाम है । वहाँ का विशेष हान्ता नामसे के लिये बंदरगाहकी काफीरी विज्ञित "केसरिका तीर्थ का इतिहास देखना चाहिये" ।

२ यह बीकण्ठ राज्य का प्रचीन स्थान है । जितरगाहरी के सख्तपुरीय महाराज कत्यादि में इस तीर्थ के सम्बन्धी काव्यम विख्यात है । शिवात्मन्त्री के रचयिता महामन्त्रि कल्याण वहाँ जाकर रहे थे व सख्तपुरीय महाराज लयाद की रचना की विषयमें इस तीर्थ का महिमा वर्णित है । देखे मैत्रपादिस सौलोचन वर्ष ३ ।

३ सूरत के तीन इतिहास सम्बन्धी तीन ग्रन्थ उल्लिखित हो चुके हैं विशेष नामसे के लिए उन्हें देखना चाहिये ।

समय सूरिजी वं० हीरमर्मा, वं० बद्धिबामर्मा, वं० राजराज, वं० विवेक  
कल्याण वं० जयसार और वं० ज्ञानसार आदि २७ ग्रन्थों से थे । सं०  
१८२७ वं० सु० १२ की शुरुत में १८१ किन्हीं की तथा सं० १८२८ में  
फिर ८२ दिन किन्हीं की प्रसिद्धा सूरिजी के कर कमलों से हुई । इस  
समय ज्ञानसारजी का विद्याव्यक्त सुन्नाह हम से चल रहा था ।  
आपके अछर मोती की तरह सुन्दर थे, आपके रचित श्री पार्वनाथ  
सम्पन्न सूरतमें ही लिखा हुआ है—विस्तार विव्र इसी ग्रन्थ में दिया जा  
रहा है । प्रस्तुत सफल भी इस ग्रन्थ के सु० १२६ में उद्धृत है । इससे  
साहस्य होता है कि आपने तब, इतियों का निर्माण से पौवनारम्भा में  
ही प्रारंभ कर दिया था' पर कभी कभी इतियाँ आपने अपनी परित्त

१ सं० १८२६ के आश्विन श्रीविनयसूरिजी के पुत्र बर्षनाथक  
रहे हुए २ ग्रन्थ ग्रन्थ उपलब्ध हैं । किन्हीं वहाँ दिया जाता है :—

(१) सत सत साहस संत, साहसीकाँ फिर लौकी ।

फिर सुत फिर सेहरी, लौक पातक सब लौकी ।

सुमति सुमति तबु चम, सत पुन विपत्ति राखी

सेवक हूँ मुझ दख, सैत अब पारक सारी ।

बीने कहीन सोभानकर, बीन सफल सुदुख सुखिर ।

समाप्त पारनाथ सदा, सदासुत श्री विनयसुत कर ॥१॥

इति श्रीविनयसूरिजीकां नामक ग्रन्थकारकी प्रसिद्धा सूरित विविद्धा  
विपत्तिर ज्ञानसारम् ।

(२) मैंन राख सौँ हरी, सेव करत तबु चन्द

बीन राख सौँ विसी, श्रीविनयसुत सूरिन्द ॥१॥

कावाली श्री ज्ञानसारभी कुत है ॥ कही २ ॥

(३) सर्वथा देखीता :—

सत हलसी भातु किन्तु, पारद की बंद किन्तु, सुखसुखी पात पातुं लयात बनराज की ।

सुखन अचक किन्तु सुखर निदि, कल बंद, साहस विनयसुत किन्तु सत सुमराज की ॥

हलसी की कपल किन्तु कपल भंडूरीन न की, राजासि पात किन्तु पारन सदासुत की ।

सुखनि की पात नू पात सदासुत श्री, सत की ज्ञान किन्तु ज्ञान सदासुतकी ॥ १ ॥

॥ इतिविषय वं । प्र । ज्ञानसारसुत ॥

अवस्था में ही बनाई थी । प्रारम्भ से ही आपकी दृष्टि अन्तर्मुखी थी, अतः आपने आध्यात्मिक मन्त्रों के अध्ययन की ओर विशेष ध्यान दिया । आनन्दमन चौबीसी बालाचौप से माधूम होता है कि आपने सं० १८२१ से ही श्रीमद् आनन्दमन्त्रों के कार्य गान्धीयैवानी आध्यात्मिक व तत्विक आनन्दमन्त्र चौबीसी-सूक्तों की कार्यनिष्पत्ति प्रारम्भ कर दी थी ।

आचार्य श्रीनिम्लाचमसूरिजीने सं० १८२१ में राजनगर चतुर्मास किया वहाँ तत्पश्चात् बहुतसे काम्य किये तथा दो वर्षतक वहीं रुक गये । वहाँ से आनन्द रात्रि सहित रामायण और निरन्तर महासीमा की यात्रा कर सं० १८२० में केलाञ्जल पधारे । कच्छ देश के राज्यों के आन्ध्र से सं० १८२१ में मांझी चतुर्मास किया । कच्छराजों से सख्ती स्थापन करने वाले राजावीरा तथा कोलावीरा राज्यों ने १ वर्ष पूर्वतः कुछ कुछ स्वयं करके धर्म ध्यान का ठाठ किया । सं० १८२२ में इसी प्रकार भुज में चतुर्मास हुआ । सं० १८२३ में आप बनरा कच्छ होते हुए कमराः हुआ पधारे और वही सं० १८२४ के चतुर्मास में मिली अतिव्रत कच्छ १० की क्षुरि पधारान स्वर्ग सिधारे । इन वर्षों में प्रायः हमारे परिजनायक सूरिजी की अग्रगण्य में विधरे थे । इनके शुभमहाराज श्रीरत्नराज गण्डि का स्वर्गवास तो इससे पूर्व ही हो गया माधूम देश है पर इस वर्ष कच्छ शुभ श्रीनिम्लाचमसूरिजी का भी निरुद्ध हो गया । श्रीनिम्लाचमसूरिजी के निरुद्ध स्वर्ग हमारे सम्पादित "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह" में प्रकाशित होइ आदि के आधार से किया गया है ।

## बाचक राजधर्म जी के साथ—

सं० १८५१ में श्री जिवलामसूरिजी के साथ दिव्य अलग अलग हुए, तब से आप अपने गुरुजी के गुरुवाता बाचक श्रीराजधर्मजी के साथ रहने लगे। संवत् १८५० को सौभाग्यवर्ष गण्डि की पुण्य तिथिनिका<sup>१</sup> से मालूम होता है कि आप वै० व ५ सं० १८४० में बाचकजीके साथ गृह्य मठ में थे। सं० १८५१ वै० व १ के पत्र से मालूम होता है कि आप वाली में वा० श्रीरधर्म तथा वा० राजधर्म जी के साथ थे। इसके बाद बाचक राजधर्म जी नगौर चले आये तथा ज्ञानसार जी किसलगाइ गये। वहां सं० १८४९ से १८४४ के तीन चातुर्मास बिनाकर फिर नगौर में बाचकजी से मिले। दोनों के साथ पुस्तकविधि परिमल की ४ पंठें नगौर में छोड़ कर आप जयपुर आये। सं० १८४१ मिली वैशाख कृष्ण १ को लखनऊ से श्रीजिवलामसूरिजी के विधि आदेशानुसार से मालूम होता है कि उस समय आप जयपुर से और इसी आदेशानुसार तथा पत्रकजी पत्र से ज्ञात होता है कि सं० १८४१-४६—४७ के तीन चातुर्मास बाचकजी के साथ ही जयपुर हुए। सं० १८४८ का चातुर्मास श्रीज्ञानसारजी ने जयपुर ही किया और बाचक राजधर्मजी पुनःकरण आकर स्वर्गवासी हो गये।

---

१ ज्ञानधारजी के समय बलि लीय करने जैसे आदि परिमल रहने लग गये थे तब आपने आपुन का जन्म निकलकाली धारने पर थे अपनी निधमानता में यज्ञ के समस्त बलिनों को हल्लाखल्ला<sup>२</sup> वा १) नितीर्थ करते तब बलिनों के बंधनों की बाधाबलि बिधी जाती तब केवलकी एवं तिथिनिका और स्वर्गवास के अनन्तर बिधी द्वारा पुन की स्थिति में ॥, १) नितीर्थ बिधा जाता तब समय से तिथिनिका की पुन तिथिनिका कहा जाता है।

सं० १८४८ में जब आप जयपुर में थे, लकड़हीन काचार्य भी जिनकादरसूरीजी ने आपसे वहाँ से बिहार करने महाजनटोली जाने का आदेश दिया, आदेशाल की नकल इस प्रकार है :—

सही

॥ श्री ॥

॥ स्थिति की पावर्षों प्रत्यक्ष ॥ श्रीलक्ष्मण नारायण । श्रीलक्ष्मणसूरीजी : लक्ष्मण श्री जयपुर नारे वं । प्र० । ज्ञानसार सुनि योग्य सन्तुष्ट सन्तुष्टि सेवक लक्ष्मण वं देव । क्या तुमने आदेश भीमहाजनटोली ने ही वह पुष्टकेलो । कष्टी रोमा सेवो, रिम्मा ने द्विदिहा में प्रवर्तलो किम की संघ राजी छै किम प्रवर्तलो, प्रस्तावै पक्ष देखो मिली पदार्थ सुनि १२ सं० १८४८ ए ।

सुख सुख पर :—

१ म । श्रीलक्ष्मणसूरीजी ।

२ वं । म । ज्ञानसार सुनिलेखम् ।

इस पत्र से लकड़हीन श्रीलक्ष्मणों के पत्रोत्तर सौती आदि का सुन्दर परिचय मिलता है ।

पूर्व देश बिहार और सीध-बाधा

गवधनपद श्रीलक्ष्मणों के आदेशानुसार आपने वहाँ से बिहार कर दिया और सं० १८४२ का शत्रुमांस महाजनटोलीमें किया सं० १८४२ मिति माघ शुक्ल १२ के दिन आपने श्री सम्मोदरिणर महासीध की राजाकर अपना जीवन सम्यक किया । सं० १८४०-४१ के शत्रुमांस सम्मोदर सुविधानर-अजीमरजि में हो किये थे ।

इसी बीच सम्भव है कि बंगाल में जहाँ जहाँ जैन लोग निवास करते थे आपने विचारा किन्ना होगा । पूरब देशके नाना जसुमनों, वहाँ की साम्राज व्यवस्था, रहन सहन आदि का वर्णन बड़ाही समीन और अनुरूप आपने "पूरब देश वर्णन खंड" में किया है जिसे पाठकों की जानकारी के लिए इस ग्रन्थ के अन्त में दिया गया है । सं० १८३३ मिली माघ शुद्ध ६ को आपने द्वितीय बार श्री रामेश्वरिलालजी की यात्रा की । इसके बाद श्रीपूज्यश्री के आदेशानुसार विचलते हुए दिल्ली आए सं० १८३३ का चालुर्मास यहीं किया । इन बार वर्षों में आपने मार्गस्थित संयुक्तप्रान्त, बिहार, बंगालके सभी तीर्थों की यात्रा भी अवश्य की होगी । अत्यन्त विशेष वर्णन प्राप्त होता तो जैनतीर्थों के इतिहास सम्बन्धी अनेक महत्वपूर्ण बातों का पता चलता । पत्रादिमें संक्षिप्त वर्णन अवश्य ही लिखा होगा । पर चेष्ट है कि वे अब प्राप्त नहीं हैं ।

### पड़हसी का रोगनिवारण :-

सं० १८३३ में आप जयपुर पधारे और सं० १८३३ फरवरी १० वर्षके चालुर्मास जयपुर में बिते । कहा जाता है कि जब आप जयपुर पधारे थे, महाराजा का पड़हसी बीमारी के कारण दिनों दिन सुस्त रहा था । रोग प्रतिकारके अनेक उपाय किये गये पर कोई फल न मिला । अन्ततोनन्ता श्रीज्ञानलालजी से निवेदन करने पर इन्होंने अपने असाधारण बुद्धि बल से महाराज के रोग का निदान किया और उसके स्वर में लगी हुई बधि को निश्कल कर उसे पूर्ण स्वस्थ कर दिया ।

१ बिहार प्रान्त में पार्लियाण बहल के नाम से प्रसिद्ध है । वहाँ जैनो के २० तीर्थहार पीछ पधारे थे जिन महत्वपूर्ण तीर्थ हैं ।

जयपुर में १० चातुर्मास :-

जयपुर में दो आधे पड़ोस भी कई चातुर्मास किये थे और वहाँ के राजा तथा राज्य की ओर से भी कलकत्ता राज्य के उपराज्यस्थ बलियों की काफी सम्मान प्राप्त था। बीरभूषणजी का आदेश महाराजा प्रताप सिंह का आदेश और राजा की मजिदरा ही आकरा जयपुर में बिरहात राजा हुआ। बीरभूषणजी का आदेश राजसभा में जाना होता था। राजकीय विद्वानों से विद्वद्गोष्ठी कर अपनी विद्वत्ता से इन्होंने महाराजा को प्रभावित कर दिया था। काल कास प्रसङ्गों पर इनकी कविशक्ति और आशीर्वाद परमानन्द सम्माने जाते थे। इन आशीर्वादमय कवितों में से सम्मत् १८४३ माघ बदि ८ की रचित सप्तशतक प्रतापसिंह <sup>१</sup> गुणधर्मान पर लोचन बचनिका एवं कर्मो-दीपन ग्रंथ में दो सबसे कफलम हैं।

### १ महाराजा प्रतापसिंह

सं= १८८४ में जयपुर बसने वाले राजा कवि सिंह के ईश्वरीसिंह और उनके उत्तराधिकारी बाबूसाहिब तर् इन्की राजकीय सम्मत् १८०० व फलु सम्मत् १८२४ में हुई। इनके बाद उनके पुत्र दुर्गासिंह ५ वर्ष की आयु में विवाहवास्य हुए जिसका सं= १८३३ में देहान्त हो जाने से प्रतापसिंह राजा हुए। इनका राज्य सम्मत् १८२१ सं= कु= १२ और राजकीय सं= १८३३ वै= व= ३ को हुई। वे बड़े और व योग्य शासक होने के साथ साथ कवि भी थे। अपनी मूर्द्धिर कलकत्ता का पदाध्यापक बहुत ही कुशल व प्रसिद्ध हैं तथा अन्य २० अन्य भी कफलम हैं। इन सब की सुरोहित हरिवाराधनी से काफी प्रशंसनीय वसा से कविशक्ति प्रभावती में प्रकटित करवाया है। इन कवियों की रचना सम्मत् १८४८ से सम्मत् १८५३ तक हुई थी।



जयपुर के १७ चातुर्मासी में क्या क्या विरहित कार्य हुए, वह

महाराजा स्वयं करी होने के साथ साथ कौनक विद्वानों के साहाय्यता भी थे। साथ ही आज्ञा से पारसी भाषी अकबरी व दिवानी हाकिम का हिन्दी में अनुवाद हुआ। इन्होंने ज्ञान मालादि आदि ज्योतिष के ग्रन्थ बनवाए तथा पर्यवर्तनों का संघट्ट व अनुवाद कराया जिसमें धर्म महाराज प्रसिद्ध हैं।

महाराजा की आज्ञा से विद्वेद्वर महाशयों के ज्ञानार्थ नामक कार्य-सामग्री का सम्पादन भी सम्पन्न हुआ। ज्ञानसामग्री नामक वैदिक ग्रन्थ भी अनुमती विद्वानों से प्रस्तुत कराया जिसका हिन्दी अनुवाद महाशयों द्वारा विद्वत्त वैदिक ग्रन्थ है। संगीत के दो पारसी भाषार्थ ही थे, जिनके अन्वय से रागादीनिन्द संगीतकार नामक विशद ग्रन्थ रचित सम्पादों में बना जो हिन्दी साहित्य में अपने विश्व का अमोघ ग्रन्थ है। यह सुनि (अष्टम) का भी जयपुर काकरोरी में प्राप्त है। अपने समय में ही रागादिक ने राज राजपर बहुत सुन्दर छोटासा संगीत का टीका ग्रन्थ बनाया जो प्रकाशित हो चुका है। अपने संगीत के अन्वय सुप्रसन्न की (चौद की उपनाम सुन्दर की) ने संगीत का एक बहुत ग्रन्थ "संगीतसंग" बनाया। अमृताराम पालीवाल ने अमृतप्रकाश, कलेश का उपनाम भी संग्रह रचित है। महामहि राज कौशिक, महामहि एकपतिभारती, सुबाहू रससुख, रसराशि के पद भी एक संग्रह में हैं। नवरत्न मन्मथ सुधाविधि आदि मालीनी के विरचित हैं। हजारों काव्यों का संग्रह भी सुप्रसन्न इन्होंने किया था।

महाराजा ने कई हजारों संग्रह कराये जिसमें ज्ञान और हजारों और ज्ञान विचार हजारों विरचित हैं। उनके आश्रित विद्वानों ही चरवादि कालों का साहित्य भी प्राप्त है। अपने हजारों करने का भी काफी रीति था। सुप्रसिद्ध ह्यामरुत आदि इसके प्रतीक और प्रचार प्रसिद्ध है। समस्त १८६० मिति ज्ञान सुदि १३ को काकरोरी मरु हुई। मितेन करने के लिये प्रबन्धित प्रवृत्तनी देखना चाहिये।

तो प्रयाग-माघ-से कहा संज्ञा रहित है । परंतु समुद्र-पट्ट बचनिका और कानोदीप्य ग्रंथ जो क्रमशः १८१३ माघ शुद्ध ८ और कनक १८१६ चैत्र शुद्ध ३ को रक्षित हैं—से इनका अक्सुर मरेश पर अथवा प्रमाण निर्दिष्ट होता है ।

**गुरुभ्राताओं से बंटवारा :—**

श्रीजिन्मलमधुरिजी के स्वर्ग-वत्स के बाद कहीं तक आप बाबक-राजधर्म जी के साथ रहे थे = बाद-पर दिल्ली का युद्ध है । पारसी पत्र से मालूम होता है कि बाबकजी का देहान्त हो जानेपर उनके शिष्य कनकदासी ने आपसे उस परिषद् के सम्बंध में श्रीचातान की श्री अखिर सं० १८१६ के मिली जेट शुद्ध ४ को लखिया कलमचंदजी की सत्यसत्ता से निकारा हो गया । इसका एक पारसी पत्र हमारे संग्रह में है जिसमें कई बलि व आपकों की सखियों की लिखी हुई है । पत्रों के परिज्ञानार्थ इस पारसी को नकल यहां की जाती है :—

श्री

हमसत् १८३१ सी । श्रीजिन्मलमधुरिजी का शिष्य सात नवारा हुआ । कद । बा० राजधर्मजीकी और ज्ञानसार । ए दोनू मेला रखा । परिषद् फौजे रहित मेला रखा । फौदे पाली भीमास निय मेला । पाली सुं वा । राजधर्मजीकी नगौर रखा । पं० ज्ञानसार किसान-कद न्यारी रछी । फौदे फेर नगौर बा० राजधर्मजी की पं० ज्ञानसार आयी । नगौर में दोनू ही है फौदेदारी बंडखी का ४ मोली ही रछी । रास में अक्सुर भीमास दोनू मेला तीन बरष रखा ।

\* और उनके परिषद् प्रस्तादि भी साथ ही थे ।

पहँ ज्ञानसार चौथी चौमास भिन्न जैपुरछीज रही । अर बाचकजी  
 चौदहवस जाच नै देखसत हुआ । अरै ज्ञानसार जैपुर सँ कृष्ण च्यार  
 चौमास कने फेर जैपुर जानौ जइ अमरदत्तजी जैपुर में । जैपुर रे  
 आदेशारी कल दिसा । और गंडलवां गानेर राजी छी भिन्न दिज ।  
 रुनीया रोह दिसा । अन्को खनी । जइ जैपुरमें । कृष्णिया साह भी  
 कलमचन्दजीयै । दोनों ही नै समझय नै कान्हौ निवेक्यौ । सो आज  
 पहँ । पं । ज्ञानसार सँ अमरदत्त जेलांसुं । पं । अमरदत्तजी । व अमर  
 अमरदत्तजी वा चेला । दावै देवावै । और आजसुं पावज लैया देवा  
 का कागद करण रइ छै । पं । अमरदत्तजी वा चेला कोरै करोंको । पं ।  
 ज्ञानसार वा चेला सुं कान्हौ लौ । राजमें । पंचायती । गलीमें.....  
 एक को दावौ नहीं । अर लिख्यौ सो.....( सही ? )

इसके पश्चात् बहिष्कृत स्थितिमें लिखत है कही व अन्य स्वतन्त्र  
 पारकरी पत्रमें इस प्रकार लिखत है :—

॥ पं । व श्री नारदजी चेला हरसुख कृष्णचन्द सुं अमरदत्त चेला  
 ज्ञानचन्द श्री बंदावा बाचकजी । अपरंज से में समल या अमर  
 चीन बस सर्व समल की पहँ चोके गाँवै कान्हौ हुयौ जही राजी  
 बाजी हुय नै पारकरी लिखत दोनो आज पेलों कोरै कागद पत्र  
 लिख्यौ सो रइ छै । आज छै कोरै दावों न छै, पारकरी  
 राजाजी सँ लिखत दोनो छै भित्री जेह सुद ४ वार शुक्र सं० १८३६  
 का लिखतुं पं । अमरदत्त ज्ञानचन्द अर लिख्यौ सो सही छै ।

साल १ सवाईविजै जी नी चम्पा दोसुं रहु

साल १ पं० श्रीरघुनिजय जी नी चम्पा दोसुं रहु

साल १ पं० माणिकचन्द की दोन्यां चम्पा नै कछै लिखी

सात १ बख्तरस कबूतबुखर कवि की धन्यता होना... ..

सात १ भद्रता राजकन्द सोइया कवी—हजर दिखी

सात १ ज्ञानकन्द ज्ञान कवी होतु हजर

सात १ हृदयकन्द चोखिया कवी व...

सात १ ज्ञानकन्द ( सूफीया )

यह पत्र लखनऊ के राजा के लाला बख्तर का सुन्दर नमूना है ।

**झरपुर में साहित्य प्रवृत्ति :—**

ज्याकमान, ज्ञानाया, ज्ञान-कवी आदि के अतिरिक्त आजकल समय काजलामय एवं श्रीमद् ज्ञानकन्दधनवी के कवियों का परिशीलन करने में ही व्यतीत होता था । इस समय ज्ञानके साथ दिव्य हरसुख ( दिव्यकन्द सं० १८३२ का० व० २१ ज्ञानकन्दसुरि दीक्षित ) और 'ज्ञानकन्द' (सूफिक) के ज्ञान नाम कवियों का पत्रकाली कवी ज्ञान है । इस काल में संतोसोत्कण्ड के दूर कवियों में जो कवित्व है कवी ज्ञानकन्द और राजकीय विचारक है । सं० १८३८ ज्ञान सुदि ३ को संतोष कवीकरी, सं० १८३८ ज्ञानकीके दिन ४७ बीत गमित चतुर्विंशतिजिज्ञासक, सं० १८३२ चौथेपुस्तक ७ सोमवार को ज्ञानकन्द, माथी ज्ञानकन्द कवि, माथी ज्ञानकन्द को ज्ञानकन्द, को रचना हुई । सं० १८३२ की २ रचनायें कवित्व हुई हैं, जिनमें मार्गदर्शक ज्ञान १४ को ज्ञानकन्द कवि तथा चौथेपुस्तक ८ को रचना ३२ कवित्वकवि कवि है ।

१ श्रीमन्मन्त्री के बख्तर की रीतिरन्वी कवी के अनुसार इनकी दोहा सं० १८३५ वि० व० ७ पु० चौथेपुस्तक में हुई थी ।

जयपुर निवासी गोकुलदा सुखलाल को बाल्यकाल से ही जैनधर्म के प्रति रुचि नहीं थी। पर आत्मी के समझने व समझति से उन्होंने सुदृढ़ता से जैनधर्मान की बड़ा स्वीकार की और पठन पठन स्वाध्यायों विशेष रूप से प्रवृत्त हुए। भवन इटीली की रचना इनके लिये किमनमद में की गयी थी।

एक बार आप जयपुरनगर से बाहर कहीं-कहीं आकर रहने लगे थे। स्वामय की कार्यवाही नगर से बाहर रहाने और एकान्त विशेष मिलता है यह स्वाध्याय स्थान में विशेष प्रवृत्ति होती है। एकदिन जयपुर निवासी सरावगी कृष्णदास काल आपके पास आये। वार्षिक वार्तालाप से आनन्दित होकर कहने लगे कि आप यदि सिद्धांत बालन करें तो मैं भी दो पक्षी लक्ष्य हूँ। श्रीमदने कहा कि मैं श्रीकृष्णस्वयंभुव रूप का व्याख्यान करता हूँ। सरावगीजीने कहा—स्वयंभुवराष्ट्री सिद्धान्त बालिये। तो तो श्रीमद के स्वयंभुवराष्ट्री सभी सिद्धान्तोंका व्यवसाहन किया हुआ था। पर यहां सरावगीजीका कारण स्वयंभुव के अतिरिक्त अन्योको सिद्धान्त न मानने का होना समझकर स्वयंभुवराष्ट्री से श्रीमद ने परमाया कि स्वयंभुवराष्ट्री तो ज्ञानमेधान व निरन्तर नव की

---

१ स्वयंभुव कृत एक विमलदासजी श्रीकृष्णदास कृत है निम्न जयपुरनगरवासी टीका तथा कलियुक्त बनारसीदासजी कृत विन्दीमदासदास सं० १९९२ कागदा में दक्षिण प्रकाशित है। इस पर एकत्र कृत भाषाटीका तथा कलियुक्त गच्छीन सिद्धान्त की समग्र ( व० एकत्रियव ) की कृत कथितका उपलब्ध है। परिशीलन यहां से बीसवीं पाकक द्वारा प्रकाशित की हो चुकी है। विशेष परिचय ज्ञानि कानिदासजी के लेख में उपलब्ध है। श्रीमद ज्ञानभार की का भाषाव कलियुक्त बनारसीदास जी की प्रति से है।

सीधवाला होनेसे विनाशनाश का भोर है। सराफगीजीने कहा—समाजदार में ऐसी क्या बात है ? कृपा करता हूँ। तब श्रीमद् ने आश्रय सम्बर द्वारासे “आत्मता से परिसमा, परिसमा से आत्मता” सिद्धान्तके पञ्चान्त यह प्रस्ताव की जो प्रस्तावता थी, विस्तृत व्याख्या करके बतलाई। इन्हीं के नवीन कथन नहीं होता—आत्मता सर्वदा शुद्ध है इसलिये आत्मोंपर जहाँ पञ्चान्तवाद और क्रिया की आभावात्पक्षता प्रदर्शित है अतः विरस्य करके जैनश्रुति और स्थापना से तब सम्पत्ति पुनः शुद्धता की प्रदर्शित की आत्म प्रतीय इतनीसी मानक मन्त्र की रचना करने इसी प्रस्ताव से सराफगीजी के निवेदन से की। श्री श्रीमद्भास्वती सराफगी इस व्याख्या से आत्मविशेष हो पड़े। यह इतनीसी इसी मन्त्र के १० २५२ से २६४ तक प्रदर्शित है।

### शुरूमान्दिर प्रतिष्ठा :—

जयपुर नगर के बाहर सीधवाली नाम से प्रसिद्ध बाबा साहब का स्थान है। श्रीमद् ने जहाँ बाबासाहब श्रीजिनदामश्रुतिजी तथा श्रीजिनदामश्रुतिजी के चरण, स्वयंशुद्ध श्रीजिनदामश्रुतिजी से हिन्दी के ज्ञानोपेक्ष के प्रति से। वे श्रुता चरण पक्ष की विवशमश्रुति श्रुता के अन्त और जीवन्त प्रति के से पर आधारे में वि- विद्वानों के पराधन व पञ्चान्त मन्त्रादि आश्रय के प्रमाण से विपन्न हो गये थे। इसी इतिहास में अज्ञेयानक ( आत्मकथा ), बन्तरीरामश्रुति, बन्तरीरामश्रुति (संस्कृत मन्त्र) प्रदर्शित है। बन्तरीरामश्रुति में श्रीमद् के श्रीजिनदामश्रुति इस मन्त्र से प्रस्ताव प्रदर्शित है।

उनके पदभर श्रीजिनकेशसूरिजी तथा गुरु श्रीजगन्नाथसि के चरणपादुके निर्माण करवानेके प्रतिष्ठित करवाये थे। आपसी के रिश्तेवर्गने भी आपसी विद्यमानता में ही आपके चरण बनवाकर प्रतिष्ठित किये थे। इन चरणपादुकाओंके सब लेखों को ब्रह्मकारित होनेके कारण यहाँ दिये जाते हैं।

- (१) ॥ संवत् १८६२ मिते माघ सुदि पंचम्यां श्री जयनारायण्यर्च्ये श्रीहरत् करतर गच्छपीठवर पुण्यधान म० श्री जिनकेशसूरिजी । पुण्यधान म० । श्रीजिनकेशसूरिजी च पादुन्यासी श्रीजिनकेशसूरि विजयि राज्ये । पं० ॥ ज्ञानसार सुनिम्न कारित प्रतिष्ठापितौ च तत्त्वमेव पूज्यानामुपदेशान् ।
- (२) सं० १८६२ मिते माघ सुदि पंचम्यां । श्री जयनारायण्यर्च्ये । श्री कृष्णकरतर गच्छपीठ म० म० श्रीजिनकेशसूरिजी श्री जिनकेशसूरिजी च पादुन्यासी श्री जिनकेशसूरि विजयि राज्ये पं० । ज्ञानसार सुनिम्न कारित प्रतिष्ठापितौ च ।
- (३) ॥ संवत् १८६२ मिते माघ सुदि पंचम्यां । श्री जयनारायण्यर्च्ये श्री हरत् करतर गच्छेरा म० । श्री जिनकेशसूरि रिश्ते माझ प्रवर्त्त श्री राजराजमणीयां पादुन्यासः श्री जिनकेशसूरि विजयिराज्ये । पं० ज्ञानसार सुनिम्न कारित प्रतिष्ठापितेव ।
- (४) ॥ सं १८६२ मिते माघ सुदि पंचम्यां । श्री जिनकेशसूरि विजयिराज्ये विदुहर्ष श्री राजराज मणि रिश्ते माझ ज्ञानसार सुने विद्यमानस्य पादुन्यासः । रिश्ते वर्गेण कारिता प्रतिष्ठापितेव ।

कापसी विद्वान् कापसी में परमपुरुषार्थों की प्रतिष्ठा होना यह उनके उस समय के सुखोत्कर्ष और सुखमान होने की महत्त्वपूर्ण सूचना देता है ।

अनात्मन्व राचित संगमैर के कृष्णजी के स्वप्न से विदित होता है कि एष्वार काप संघ के साथ वहाँ कापपुर के सम्बन्ध पवारे । उस समय लुधियानोवा कापक ने गोट की की जिसका अन्तोन निम्न गद्या में है :—

की संघ निम्न निम्न कापै, निम्न लुधिया गोट एष्वारै रे म्हा ।

की हानसुर लुधियाना, क्हां रा कापै क्हां कापारे म्हा ॥

एक बार कापै कपपुर से का० बी अमर-वापसी ' रापि की पत्र दिवा जिसके हाँसिये पर चित्त किये हुए हैं वह पत्र को कापमन्व के महिमापति मन्धार में है उस पत्र में कपनगर के राजा के स्वर्गवास होने व ई० सु० १ के दिन कपपुरनिधि के पुत्र का कपके गरी पर बैठने का समाचार है तथा सुहृदाई कुम्हारमन्व के होने का निम्ना है । इसके कपनगर से बी जीमन्व का सम्बन्ध मालूम देता है ।

### कृष्णवाद के ६ चातुर्मास :—

जीमन्व हानसराजी कपपुर से विहार कर किसलगा पवारे । सं० १८६३ से सं० १८६८ तक के चातुर्मास किसलगा में किये । यहाँ बी किसलगा पदार्थकाय कपिर् की कापका और्ध्वोर्ध्व हो गई थी । काप बी ने कापमान में और्ध्वोर्ध्व का महान् कल बतलाने हुए

१ अन्ते समय के से की जीमन्व निम्न से इनके राचित कपेकी संघ उल्लेख है ।



आवर्तों को चित्तामणि पार्श्वनाथजी के मन्दिर के जीर्णोद्धार का उपदेश दिया । कहा जाता है कि रात में पार्श्वनाथ ने प्रकट हो कर २१) रुपये रख दिये और उसी पूंजी से काम आरंभ करने का निर्देश किया । आवर्तों ने श्रीमद् के कथानुसार बर्य्य आरंभ कर दिया और चौद्वे दिनों में चित्तामणि सव् संपन्न और चित्तादि से सुरोमित तैयार हो गया । इस मुहूर्त्त में भवदुःखारोपण महोत्सव किया गया । इस विषय के वर्णन के निम्नोक्त कवित्त मात्र हुए हैं :—

सुन्दर सङ्ग स्वाम आंगी नम जग मना  
समोरात्र्य अधिका सोभा सरसाई है ।  
मन्त्रप सदा में जो करस मकरिदु कनो  
चित्रकारी नानाविध रङ्ग बरसाई है ॥  
छाई द्वार दायी मोर छत्र किये बंगला ये  
कंचन के कलरा अद्भुत छवि छाई है ।  
कल्याण मान्द देखो साधु नारायणजी,  
चित्तामणि राज् की मति बरसाई है ॥१॥  
महा मन्त्रालय किछो इंद सुर आसनयो  
पान्क नम हीर किछो हाटक मंडापो है ।  
चौक चित्रकारी चिट्ठ केरकर सवार जायो,  
नोल राजवरी सब पाहन कटायो है ॥  
चित्तामन हाथ चढो नाथी नारायणजी के किछो,  
कल्याण बीरत को नीरव बसायो है ।  
मन्दिर जैनराज् की नीरव होखे छां,  
मन्त्रप सुधारण बना इंसप चढायो है ॥२॥

चिट्ठिंदीरि आनो जस प्रसिद्ध, नारायण मुनिराज ।

मयजीव चारण्य ज्यो, मयदय कम निहज्य ॥

## भायछतीसी की रचना :—

पल्लवों को स्मरण होना कि पिछले वर्षों में जयपुर निवासी श्री हुसैनजी जी गोलड़ा श्रीमद् के संका में पक्के जैन धर्मालु-बादी हो गये थे। उन्हें स्वाध्याय का पक्का शौक था, जयपुर में शिवम्बर बन्दु पर्यन्त वे और उनके सहयोग से समयसार का वाचन प्रारम्भ किया था, जब श्रीमद् को यह ज्ञान हुआ तो उन्होंने उन्मत्त भाव और ज्ञान किया के रहस्यों को स्पष्ट करनेवाली “भाय पद-विशेष” नामक कृति निर्लेखक सेती जिसके मूल और विवेचन के पाठ से उन्हें समयसार का वास्तविक स्वरूप प्राप्त हो गया।

## आनन्दघन चौबीसी पर विवेचन :—

इस समय श्रीमद् ज्ञानेश्वरजी की अवस्था ६६ वर्ष की हो गई थी इन्होंने सन् १८२६ में श्री आनन्दघनी ' आराधन के पत्रों

१ शिवम्बर जैन समाजों के एक कोटिके घोड़े मारे जाते हैं। इसीसे भाय सरस्वतस्थीय की अवस्था जैनीजी के पक्षों कापका सरस्वतस्थीय होना ज्ञान होता है। मेकलमें भाय बहुत बल लक्ष रहे थे। प्रथमी सम्प्रदायके एक शत्रु के कथनानुसार सं० १७३१ में वही कापका पर्यन्त हुआ था। सुप्रसिद्ध न्यायाचार्य बरो-विलय स्यामनाथका आपसे मिलन होना कहा जाता है। आनन्दघन जी के सम्बन्ध में कापकी आराधनी प्रसिद्ध है। कापका प्रसिद्ध नाम सामानन्द था, अनुमत्त अथवा नाम आनन्दघन अपनी रचनाओं में आपने स्वयं दिया है। आपके रचित चौबीसी में से २२ स्थान सफल हैं, जिसकी पूर्ति में श्रीमद् देवचन्द्र, ज्ञानविमलसूत्रि व श्री ८ अक्षर श्री आदि के रचित सम्बन्ध प्रकाशित हैं। कापकी चौबीसी

(चौबीसी के २२ खण्डों) का सम्पादन और परिशीलन प्राप्त किया था जिन्हें ३७ वर्ष जैसा दीर्घकाल लगीत हो जाने से लीकोपेदार के हेतु अपने परिष्कृत अनुसन्ध के खण्डों द्वारा निरन्तर विवेचनमय बालाबोध लिखकर सुसुद्ध जगत का परम हितसाधन किया। श्री

पर सर्व प्रथम यशोव्रियत व्याख्या के विवेचन करने का उत्प्रेक्ष मिलता है पर वह उपलब्ध नहीं है। इसके पश्चात् ज्ञानविमलशूरि जी ने बालाबोध बनाया जो प्रकाशित हो चुका है। श्रीमद् ज्ञानसार जी ने इस बालाबोध की अनेक वृत्तियों पर मार्मिक प्रकाश डाला है। हावड़ी में जो अन्य विवेचन भी प्रकाशित हो चुके हैं जो प्रसुखलान जी और पं० प्रमोदाम नेमरदाम द्वारा लिखे गये हैं। स्वर्गीय मोतोचन्द निरधरदास कापड़िया भी विस्तृत विवेचन लिख रहे थे। जयपुर निवासी श्री बमराजचन्द जी अरणा ने हिन्दी भाषा में आनन्दधन चौबीसीका भावार्थ किया है, जिसे शीघ्र प्रकाशित करना आवश्यक है।

श्रीमद् आनन्दधन जी के पद बहुशरी के नाम से प्रकाशित हो चुके हैं, जिसकी संख्या ११२ के लगभग है वास्तव में कई पद अन्य स्थित भी इसमें सम्मिलित हो गये हैं। हमारे संग्रह में आपके ६६ पदों की एक प्राचीन प्रति है। अन्य हस्तलिखित प्रतियों के आधार से पाठ निर्यास करके हम आपके पदों का संग्रह शीघ्र ही प्रकाशित करना चाहते हैं, आपके पदों पर श्रीमद् बुद्धिबालकशूरिजी ने विवेचन लिखा है जो आम्नाज्ज्ञान-प्रसारक मंडल से प्रकाशित हो चुका है स्वर्गीय मोतोचन्द निरधर कापड़िया ने भी सुन्दर विवेचन लिखा जिसमें से लगभग ६ पदोंका विवेचन "आनन्दधन पद राजवली" में बहुत वर्ष पूर्व प्रकाशित हुआ था अन्य पदों का विवेचन जैन धर्म प्रकाश में कई वर्षों तक निकलता रहा जिसे स्वर्गीय कापड़िया जी शीघ्र ही प्रकाशित करने वाले थे पर इसी बीच आपका स्वर्गवास हो गया। आनन्दधन और बनारस पुस्तक में भी अत्युत्कृष्ट चौबीसी और पद प्रकाशित हुए हैं।

आनन्दधनजी महाराज पर आपकी कलकत्ता सजा थी, और उनकी बाड़ी का आपने जीवनमें पर्याप्त प्रभाव पड़ा था। इस बाल्यकाल में २२ सनन सोमद आनन्दधन जी के तथा २ सनन इनके स्वयं निर्माण किए हुए हैं। आनन्दधन उनकी महानता व अपनी मयूता प्रदर्शित करते हुए सोमद ने लिखा है कि :—

“आराध आनन्दधन लखे लखि लखीर पदार  
बालक बौद्ध पदार के लखे लखि विचार”

आनन्द के महाराज “ जी आपका बड़ा सम्मान किया करते थे तथा लीन व लीनकर सजा पर आपका कलकत्ता प्रभाव था। यहाँ के ई चतुर्मास काल मजान में लीन और राज्य सुधारस में सराबोर बीते। लखनकर आनन्दधन निचले हुए लीनधिराज जी लखनकर पधारें।

मिहनाचल यात्रा :—

सं० १८६६ मिति परलून कलकत्ता १४ की मुगलि देव जी लूपम मनु के इरान कर आनन्दधन हो लगे। जी मिहनाचल के आदि लिन सनन में आपकी ने लखे लखीर सजा की निरालकत्ता पूर्वक आनन्दधन के रूप में मनु परलून में निवेदित किसे हैं। लिन से विदित होता है कि आपकी इस लुहनाचल में लखनकरों की लखीर पर लखन करते, लखन लखीर लखीर, लखनलखीर लखीर की लुहनाचल विचारों हुए हैं किता था।

२ मिहनाचल के इतिहास के लखनकर लख लख लखीर के लखन लखनलखीर से।

बीकानेर आगमन :—

बीकानेर राज्य बीकान् की जन्मभूमि होने हुए भी बाल्यकाल से अत्यन्त लगान्ग ७० वर्ष की आयु हो जानेपर भी बीकानेर प्यारने का अक्सर प्रायः नहीं मिला था । तीर्थभिराज राज्य की यात्रा करने के पछान् आपने अपना अन्तिम जीवन बीकानेरमें व्यतीत करने का विचार किया । इसके कई कारण थे, एक तो बीकानेर अभी तबही उत्तम क्षेत्र था, यहां कछ राजधानी और कछ छोटे छोटे ग्राम, सर्वत्र जैनों की बहुत बड़ी बस्ती थी । विनयप्रसाद और क्यामणों का प्राचुर्य था वहाँ सैयकों विचार्य जौ लोनों का आवागमन रखा था ।<sup>१</sup> पद्याप्यापकी भी क्षमाकल्याणकी जैसे कियाप्राप्त और इनके बचपन के साथी भी विराजमान थे अतः आप अपने दिव्योके साथ बीकानेर प्यारे और राजकीय बीकानेर में ही विराजे । इस समय आपकी वृद्धावस्था होने हुए भी लगन, लैराज्य कछ साम्राज्य कछ छोड़िका था । आपकीने नगरके बाहर भी लैकी पार्श्वनाथ विनायकके वृद्धाग में समग्रानोंके निकटवर्ती इठोकी सास की ही अपनी कन्यभूमि चुनी और बड़ी रहने ली । बीकान् का जीवन बड़ाही सात्विक था, एक पात्र तथा अल्प वक्क आरय करने थे दुपहरके समय एकवार आहार करते थे । आरविगम<sup>२</sup> का त्याग था जो कुछ भी कछ खूना मिल जला, ले प्यारे । नगरके बाहर निर्जन सम्राज्यभूमिके निकट अपनी प्यान समाधि जमाकर आत्मासुखके परम सुखका अनुभव करते हुए लव संवसरे आत्मा की याचित करते थे ।

१ बाहर में जगर से दूरदि विषय (निकट ५ दूर, बरी, श्री, लेक, दुह, पकच) न केना पार विषय साथ बदलता है ।

इस प्रकारके सर्व प्रमाण मिले हैं जिससे यह साबुत होता है कि श्री चार्चबद्ध (चिन्तामणि राय) आपने प्रत्यक्ष में और समय समय पर राजमें प्रकट होकर आपने नाना विधि ज्ञान गोष्टों एवं भूत भविष्य सम्बन्धी वार्तालाप किया करते थे।

**महाराजा सुखतिसिंह पर प्रभाव :—**

बीकानेर नरेश महाराजा सुखतिसिंहजी \* ने आपकी परीक्षाया सुनी और तत्काल आपका मिले फिर तो चन्द्रिका इसी की कि महाराजा किसी भी कार्य करनेके पूर्व आपकी आज्ञा व भारीबाँधके

१ महाराजा सुखतिसिंह बीकानेर नरेश महाराजा चम्बरसिंह के पुत्र थे। संवत् १८२२ वीस सुक्रा ९ को जन्म प्राप्त हुआ और संवत् १८४४ के विजयादशमी को राजगद्दी प्राप्त हुई थी। आपके जन्मदिन के सम्बन्ध में बहानुद्दोराबाद का- गौरीचंद इराचन्द बीकानेर अपने बीकानेर राज्य के इतिहास में इस प्रकार लिखा है :—

“महाराजा सुखतिसिंह का राज्यकाल खैरोली के मन्थुलान का सबसे बड़ा था सकता है। जैसे पहले सुगनों के प्रकट प्रवाह के समाने हिन्दू राजाओं को बहना पड़ता था वैसेही अब खैरोली की प्रकट काल के भाग हिन्दू-सुगमनान का समस्त होते का रहे थे। उनका समस्त हामी दिखार एक ही पुत्र का और उनके प्रभुत्व की वाक्य अधिकांश ज्ञान में जब सुखी की इन्हें बीकानेर राज्य की भी आंतरिक दशा विपदा रही थी। अपने दिन राज्य के समस्त खिरोली हो चले कि जिसका समस्त करने में ही महाराजा की बारी कालि क्या देनी पवती थी। समस्त की दो बार की पड़ना तथा बीकानेर के राज्य की लड़ाई में भी बीकानेर का काय सुखान व हुआ था। देखी परिस्थिति में उसने खैरोली से निकल कर केनाही उचित सम्पत्ति और इस बहानुद्दोराबाद कार्य की उत्पत्ति से पूरा करने के लिये बीकानेर काजीनाथ दिल्ली भेजा गया, जिसने मिटर चार्च



पिछले काल में भी मध्य प्रदेश के द्वारा औद्योगिक तथा पत्र-पत्रिकाओं द्वारा राजनैतिक, धार्मिक तथा अर्थनैतिक बातों का समा-धान होता । अनेक बार महाराजा स्वयं करते और बीमार को सेवामें बंधों बलीत करते । महाराजाके लिये हुए २२ कागस उनके हमारां अर्थनैतिकमें आये हैं जिनमेंसे १८ हमारे संग्रहमें तथा ४ पत्रिमुद्रणालय

मेरठवाले से मिलकर संग्रह की गये तथा की । यह महाराजा बीकानेर राज्य के इतिहास में बड़ा महत्व रखती है क्योंकि लोगों के साथ सन्धि स्थापित हो जाने पर उनकी स्वायत्ता से निरोधी सरकारों का पूरी तरह से दमन होकर राज्य में कुछ और शांति की स्थापना हुई । श्री महाराज महाराजा सुतसिंह ने लोगों से स्थापित किया उनका अब तक विचार होता है और लोगों सरकार तथा बीकानेर के बीच अब भी कुछ मैत्री विद्यमान है ।

महाराजा सुतसिंह का और नीतिमत्ता और व्यावहारिक था । वह केवल सरकार सेकर करना ही नहीं जानता था बल्कि मेल के महत्व की भी बड़ा समझता था । वहाँ उसे मेल करने में साथ दिखाई देता वहाँ वह बिना अधिक बीच बिचार बिन्ने ही देता कर देता । वह अन्धधुन हुआ नहीं देखा करता था । बीकानेर के महाराजा बीकानेर के पुत्र बीकानेर का एक पत्रादिष्ट द्वारा विनता हुआ देखाकर वह वह अन्धधुन नहीं न कर सका और बीकानेर के महाराजा अन्धधुन के साथ उसका सहायक कर सका । वह अनु पर दया से बार करने का निरोधी का अन्धधुन का बचन राक्षस सन्धि की गले तक करने के लिये करने हुए बीकानेर के सरकारों की उनसे अपने साहसियों की सहाय के अन्धधुन करना नहीं, बचन सन्धि की गले सहाय न होने पर भी उन्हें निरोधन आदि देकर अन्धधुन पूर्णक सहाय देता ।

महाराजा में अपने पुत्र के वहाँ एक पुत्रों की था । वह बचन का बचन था जिस सहाय अन्धधुन ने अपनी बीकानेर से अनेक बार निरोधी

जी के शिक्षण भी जनकराजजी के पास हैं। इन सात स्कूलों को देखने से श्रीमद् के प्रति महाराजा का विनय, दृढ भाव, अटल भद्रा, अखिरल भक्ति, कलपरों हार्दिक भाव तथा अनेक ऐतिहासिक चरित्रों की स्पष्ट जानकारी होती है।

उन दिनों बीकानेर राज्यकी व्यवस्था अत्यन्त कमजोर थी, राज-कीय खजाने में इतनाका इतना अभाव था कि सुरक्षाके लिये सैन्यव्यय भी दुष्कर था। राजा स्वयं खुदसे दूधे हुए थे। महाराजा सुतर्कित के पत्रोंका अक्षर अक्षर पढ़ी भाव धर्मित करता है। हमें प्राप्त पत्रोंमें सर्वप्रथम पत्र सं० १८७० मिली मादवा यदि १४ का है अतः इससे पूर्व पत्र व्यवहार एवं आवागमन अनिच्छा पूर्वक चालू हो गया मादूम देता है। इस वर्षके ८ पत्र मिले हैं जिसका अंतर देखते मादूम होता है कि सन्तानों १ बार तो पत्र व्यवहार व्यवस्थी होता था। महाराजा सुझमें या हीमें जहाँ कहीं होते बाबाजी महाराज भी जानकारी

करघरों का इतना किया और लिये लंब उम (महाराजा) ने राज का विनाश फिर सम्मानित किया था उसे कई सरघरों के अक्षरों में आकर और उनकी गूड़ी विचारघरों पर विचार कर महाराजा ने बाद में करना काला पीछे से इस अन्तर्गत का महाराजा की सहायता भी रहा। महाराजा ने अपने राज्यका में सुतर्कित करवाया था।

बीकानेर राज्यके अन्तर्गमें हमारे अतिरिक्त राज्य का क्या हाल था, महाराज जी की आज्ञानुसार आपकी सहाय से ही अनेकों से कनिष्ठ, तथा अतिरिक्तित पत्रोंकी राज्यो के प्रति व्याप व नीति की कल आदि समस्त कार्य कलमें द्वारा बीकानेर राज्य की व्यवस्था काफी सुधर गयी और अन्तिम में यह अतिरिक्त और अत्यन्त उच्च विचारों की सहाय में आने लगा।





# ज्ञानसार ग्रन्थावली

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

॥ जगत्सौन्दर्यं जितराधा ॥ १ ॥ देवी । अथ विना रयिजि अथ वि  
न्यासी विषयतन्त्रम् ॥ २ ॥ सुविज्ञानादरे जगत्सौन्दर्यं जित  
राधा । जगत्सुरनरप्रणामेयस्य जगत्सौ ॥ ३ ॥ जगत्स  
सुखमयानुसुयोदं सुखमयकेमलसुखेन्द्रे जगत्सौ ॥ ४ ॥  
व्यववर्ताप्रसुदो जगत्सुखकोमलसुखेन्द्रे जगत्  
॥ ५ ॥ जगत्सुखमयविहङ्गमधारी अथिनुहतिविहङ्गमधारी  
ररे जगत्सौ सर्वानन्दमयप्रणामप्रसुवदं उक्तनिनाक  
दतिवन्देन्द्रे जगत्सौ ॥ ६ ॥ समताधारीप्रमवारी मन्त्रकारी  
जगत्सुखकाररे जगत्सौ अमलमयवारीधूमधारी सुख  
तिकारीउपहाररे जगत्सौ ॥ ७ ॥ अतन्त्रमयानुसुखमयता ।  
समानमयप्रणामप्रतिमयानरे जगत्सौ मोक्षितिविषयार्थ  
दे अमलप्रणामप्रतिमयानरे जगत्सौ जितराधाजगत्सौ  
जाता ज्ञानादिकसुखानुसुखानरे जगत्सौ ॥ ८ ॥ जगत्सौ  
द्विधनीम सुखसुखमयसुखजगत्सौ ॥ ९ ॥ जगत्सौ ॥ १० ॥  
जगत्सौ ॥ ११ ॥ जगत्सौ ॥ १२ ॥ जगत्सौ ॥ १३ ॥ जगत्सौ ॥ १४ ॥  
जगत्सौ ॥ १५ ॥ जगत्सौ ॥ १६ ॥ जगत्सौ ॥ १७ ॥ जगत्सौ ॥ १८ ॥  
जगत्सौ ॥ १९ ॥ जगत्सौ ॥ २० ॥ जगत्सौ ॥ २१ ॥ जगत्सौ ॥ २२ ॥  
जगत्सौ ॥ २३ ॥ जगत्सौ ॥ २४ ॥ जगत्सौ ॥ २५ ॥ जगत्सौ ॥ २६ ॥  
जगत्सौ ॥ २७ ॥ जगत्सौ ॥ २८ ॥ जगत्सौ ॥ २९ ॥ जगत्सौ ॥ ३० ॥

(नारायणजी) को सम्मति आया या आशीर्वाद के बिना किसी काममें हाथ नहीं डालते थे। पत्र व्यवहार पर सरकारी नजर डालने से मालूम होता है कि सूरतसिद्दीकी अपमान, बागी सरदारों व यशनोंके कारण अराजकता, चादि अनेक समस्याओं का समाधान परिश्रमायक की सम्मति से हुआ था। फलोंकी कई कच्ची बाले कर्मदारी, लवैली कमी साहूकारोंपर जबरन कच्ची, रैला पर कट, शहर की गंदगी, पक्का-कच्ची, विदेशी कर्मचारियों की विद्रोह, चादि अनेक विषयके अज्ञातपर व अराजकता को दूर करानेपर प्रयत्न बाले हैं। बीमरके द्वारा कछराज (बी चिन्तामणि बर) से नाना प्रकर के प्रश्न कराये जाते थे जिनमें अपने पूर्व-भर, उनके बालने, हमीजोंके राज्य व सन्धि से अपने राज्य, सिद्धमंत्र, जाय चादि मुख्य थे। अपनी कृप तथा जोधपुर के चोबलसिद्दीकी सम्मन्धी, एवं राजपुर सिव बालोंके साथ महाराजा बालसिद्दीके बालिये की जय-कराजय चादि नाना प्रश्न पूरे गले हैं। इसी प्रकार सं० १८७१ में दिये हुये १ तथा सं० १८७२ के २ कास लगे हैं। इन्हे दीर्घ समयमें रीक्यों ही फलों का आदान प्रदान हुआ होगा पर वे अब प्रायः नहीं हैं। बीमर के दिये हुये एक पत्र की प्रति-लिपि भी उनके स्वयं लिखी हुई प्राप्त हुई है। साह सुल्तानमज के बाद नाहटा मद्दी इन्की सेवामें रहे वे तिनकर कार्य केवल महाराजा के संदेश बीमर तक पहुँचाने का था। महाराजा वर्ष १२) मासिक वेतन देते थे वे बड़े कलौ-शुक्ति के थे। मद्दी को १२) से १७) मासिक वेतन भी वहीधर नहीं का देखा एक वर्ष महाराजा ने सुविधा दिया है। इन्के अतिरिक्त साह परमा, अमाली वेतन व अन्धराज जोधके द्वारा भी संवाद-अर्थात् निवेदन की जाती थी। अन्तिम वर्ष महाराजा

जी को समाचार पत्रमाने का शिखा है वे श्रीमदके दिव्य श्री सदासुख जी मातुल देते हैं। इनका भी राजदरबार में प्रभाव बहुत बड़ा पड़ा था।

**बौद्धी पार्श्व त्रिनालयमें नवपद मंडल का प्रारम्भ :-**

बौद्धीके गोग्र दरबारके बाहर जहाँ आप रहा करने थे, श्री गौड़ी पार्श्वनाथजी का छोटासा मंदिर था। आपकीसे विराजतेसे इस मन्दिर की बहुत कसति हुई। आपकी सबकीसे मातुल होना है कि आपकी श्रीगौड़ी पार्श्वनाथ प्रभु पर कथ्यन्त भक्ति की। श्रीविनायक यक्ष आपके प्रत्यक्ष थे कल इस मन्दिरने श्री इमाचलनाथोपाध्याय की द्वारा सं० १८७२ में कश्मीरजी की प्रतिमा प्रतिष्ठित की गई। इसी त्रिनालय में महाराजा की कोर से नवपद मण्डल ' रचना प्रारंभ हुई जिसके लिये सबसे कलाकर आलोक राजकीय सलाह से कार्यव्यव किया जाता है। इसी मन्दिरके विरजल बहाले में कई और मन्दिर-देहरियों का निर्माण हुआ। श्री सम्मेलनस्थल तीर्थ-यात्र वाले मन्दिर का निर्माण सं० १८८६ में श्रीजमीन्दार सेठियाने करवाया, जिसकी दीवाल पर श्रीमदका चित्र बना हुआ है, सामने जमीन्दारजी सेठिया हाथ जोड़े करते हैं। सं० १८७२ आदवा बदि १३ के दिन आपने नवपद पूजा की रचना की जो इसी पुस्तकमें प्रकाशित है।

१ अश्विन, मिर, माघार्ध, लगान, काष्ठ, पंचम, ज्ञान, चारित्र्य और तप, ये नवपद हैं। इनके कलाकर वेद की सिद्धयक वा नवपदमंत्र करते हैं। वेद और अश्विन के संक्षिप्त १ दिनों में अश्विन तप के साथ नवपद बोली का नामात्म किया जाता है। १ बार (८१ अश्विन) करने पर इस तप की पूर्वाहुति होती है उसके उपरान्त नवपदमंत्र की रचना की जाती है।

## बीकानेर में साहित्य निर्माण :-

आपसी उस जमानेमें जैनग्रन्थोंके प्रकाश विद्वान थे। स्थानीय शास्त्र व साधु समुदाय जो आपके ज्ञानसे लाभ करते ही वे पर बाहर से भी प्रशस्तर आदि के रूपमें पर आते रहते थे। विद्वान ( जिसे बीकानेर में वैरागी लिखा है ) निवासी मिस्त्री मिश्रासु भावकने आपकी एक विस्तृत ग्रन्थ पर मेधा जिसके अन्तर्में आपने जो पर दिया वह एक ग्रन्थ ही हो गया है जो सं० १८७४ चैत्र शुद्ध ७ को पूर्ण हुआ था। यहाँ रहते साहित्य निर्माण की आरंभ कृत्य प्रकाशित थी। सं० १८७३ मार्गशीर्ष पूर्णिमा को चौबीसी खनन, सं० १८७६ फासुन शुद्ध १ को मालाविगत (संदर्भग्रन्थ), सं० १८७७ चैत्र शुद्ध २ को चंद्र चौपाई समालोचना, सं० १८७८ कार्तिक शुद्ध १ को विद्वत्मान बीरी सं० १८८० आषाढ़ शुद्ध १३ को आप्यामवेत मालाविषय, सं० १८८० आश्विन में प्रकाशित अष्टोत्तरी, और सं० १८८१ मार्गशीर्ष शुद्ध १३ को नृदाभाषी की रचना की। इनमें से मालाविगत व चंद्र-चौपाई समालोचना के अतिरिक्त सभी रचनाएं इस ग्रन्थ में प्रकाशित हैं।

बीकानेर के बड़े ज्ञानव्यंश के एक पर से जातून होता है कि सं० १८७४ आश्विन शुद्ध १ को श्री सिद्धचक्रवर्ती की महती महिमा पूर्ण और इसी वर्ष मित्ती मिश्रर सुदि १२ को बीकानेर में जेठ की।

## दशहरे की बलिप्रथा बन्द :-

बीकानेर में दशहरे के दिन राज्य की ओर से देवी के बलि स्वल्प जैसा मारने की प्रथा प्राचीन काल से चली आती थी। कहा जाता है

कि एक बार दरबार का मौला छूट कर दौकत हुआ भीमर के शरारों से  
 बचता । पीछे पीछे राज के सिपाही आये पर बाबाजी महाराज के  
 पास मौला मांगने की दिम्कत न हुई । अन्त में भीमर के उपदेश से  
 महाराजधिराज ने सदा के लिए मौला का बलिदान बन्द करवा दिया ।

### बलियों का राजसंकट निवारण :-

कहा जाता है कि मुर्शिदाबाद के जयसिंहाजी † ने पार्थिवराज  
 गण्डीव कीपूजारी को एक फसे का बहरण भेंट किया था वह इस  
 प्रकार का बहुमूल्य था कि राजा-राजवालों में भी उसकी लोकता छोड़े  
 नहीं मिलता । महाराजने उसे कीपूजारी से देखनेके लिए मंगवाया ।  
 बहुमूल्य पदार्थ बलियों ने महाराजा को लेना देना दिया और  
 बहरण लौटाने से बसबीकार कर गये । बलियों की विरोध मांग होने  
 पर उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया । जब भीमर को यह पटना  
 मालूम हुई तो वे तत्काल दरबार में पधारे । महाराजा ने भीमर का  
 पधारण हुन तो वे स्वागत के लिये सामने आए पर समय आए भी  
 ने महाराजा से परमाया कि :—

+ मुर्शिदाबाद के जयसिंहाजी का संत जगन्नाथ महाराज और प्रसिद्ध  
 रहा है । आपने पास अर्थात्त पदार्थों की, तथाही जयसिंहाजी का अन्त  
 करने के लिये मारता में अर्थात्त राज्य का बहुराज इसी संत से हुआ । इनके  
 पूर्व देशके और तीनों का जगन्नाथ तथा अन्य अनेक प्रकार के कार्यकारण प्रसिद्ध  
 हैं । विशेष करने के लिये पदार्थार्थार्थ की "जयसिंहाजी" नामक पुस्तक  
 देखना चाहिये ।

अथ चाटी आकरा, कहि खरी कैसी करां

प्रकट मिश्वारी चर, नरपति जानै नारदा ॥ १

महाराजा ने अपनी मूल के लिए माफी मांगते हुए खरसा लौटा दिया एवं यतियों को दो दो रुपये व मिश्रद मोंट कर व्याप्य पहुँचाया ।

**नगरसेठ के प्रशोका वचन :-**

क्योंकि ( संभवतः जगपुरके ) नगरसेठ श्रीधर जो आपके परमपूज्य थे, अपने पक्षमें प्रभु पूजा करने में आपके वचनमें दिया हुआ (२) विविध श्लोकार मन्त्र इसी मन्त्रके पु० ४०८ से ४२२ तक दिया है । इसका समय सं० १८८० के पश्चात् का अनुमान किया जाता है क्योंकि सं० १८८० में शक्ति आम्बालमयीय बालावधोक्ता इसमें श्लोका पाया जाता है ।

**श्रीश्री विनायक का उद्धार और आशावना-निवारण :-**

पूर्व कहा जा चुका है कि श्रीमद् यहां स्थलान्तिके निरुद्ध निवास करते थे, पास ही में श्री लोकीचार्पनामजी का मन्दिर था । श्रीमंथ ने सं० १८८६ में १२०००) व्यय करके इस मन्दिर का शीर्षोद्धार कराया था । प्रतिदिन सायंक लोग कारके बाहर होने पर भी दर्शन पूजनके लिए यहां आते थे । स्वयं महाराजा सुरतमिश्रजी व राजमिश्रजी श्रीमद् के पास जब कभी आया करते तो इस मन्दिरमें अवश्य पधारते । कहा जाता है कि जगन्नाथसे महारानिधि भी समय समय पर आती थी । यहां प्रतिदिन पूजा करने के लिए आने वालोंमें सुरासोंके बरफी एक

॥ यह संक्षेप श्लोका के ५६ में दोहे में है । इसके सम्बन्ध में अन्य प्रकार की किम्वदन्ती भी सुनने में आती है ।

महिला भी थी जिसे भीमदत्ते का भी दिया कि उसमें स्त्रियोंको मृतनाथजी की प्रतिदिन पूजा नहीं करनी चाहिये । पर उसने अतिके आवेशमें कोई ध्यान नहीं दिया । एकबार वह पूजा करती हुई स्वस्वता हो गई । इस महान अपवित्र कारागृहके होने से भी गौरीचरणनाथजी की प्रतिमा पर काय ही काय हो गये । अविश्व दौड़ी हुई भीमदत्ते चरणोंमें आई और मध्यम होकर कहने लगी कि महाराज ! मैं तो मर गई ! इस प्रकार भी महान कारागृह घेरे द्वारा हो गयी, क्षमा की लिये । आपके उपदेश पर मैंने ध्यान नहीं दिया, अब क्या आपही के हाथ है । भीमदत्ते कभी रात को महाराजजी से इस विषय में कया पूछा । महाराजजीने कहा—ऐसी कारागृह होनेपर अभिहित देव कबाल ही वहाँसे चले जाते हैं पर मैं तो आपके सिद्धांतसे सेवामें व्यस्त हूँ । भीमदत्ते तीर्थजल और औषधि महाराजजीके द्वारा संग्रहकर 'अठोहारी स्नान' करवाया जिससे सब कारागृह दूर हो गयी । काय भी ध्यानपूर्वक देखने से भीमौरीचरणनाथजी के विषय पर थोड़े थोड़े काय के सिद्ध हमोपर होते हैं ।

+ पूर्वाचारों से अशुचि आचारनादि करणों से ही तपस्वियों के जिने प्रतिदिन मृतनाथक वषट्मा की संवत्सा का विशेष किया है ।

१ तीर्थंकर प्रतिमा का १-८ चर्चों से विशेष अनुष्ठान पूर्वक अभिषेक करने की 'अठोहारी स्नान' करते हैं । तप, उपवास, विज्ञान नियमनादि विशेष प्रसंगों पर वह विधान किया जाता है । स-१९५० में सुप्रधान श्रीविनयनन्दुरिषी की आज्ञा से जयसीम उपाध्याय ने साद्वीर में 'अठोहारी स्नान विधि' काई जिसकी प्रति श्रीभक्ति के ज्ञानसेवा में है ।



## गुदड़ी में शीत ज्वरारोप :—

कहा जाता है कि एक बार महाराजाधिराज आल्फ्रेड द्वितीय अपने पिता को एक दिन सिवाइक शीत ज्वर आया हुआ था । आप थोड़ी दूर गुदड़ी से निकल कर का निराखे खीर प्रकृत रूप से बर्तालाप करने लगे । महाराजा भी नजर गुदड़ी की खीर गई तो देखा कि वह शीतज्वर रोगीय से कांप रही थी । महाराजा ने निवेदन किया महाराज आप जैसे महारुग्णों के पास भी ज्वर आता है ? आप आते ही क्यों देते हैं ? बीमरु ने कहा राजन अपने संचित कर्मों का मोक्ष आत्मा स्वयं है वह मोक्ष से ही सुलभ्य होता है ।

## कोठारीजी पर कृपा :—

बीकानेर निवासी गिरधर कोठारी की माँ आपसी की पुरान बला थी । गिरधर के पिता माइनों ( संभवतः मढ़ी माइता ) के साथ मौजूद करने थे । एक बार उन्होंने बोट फलपर बला कर कोठारीजी की मौजूद से बला कर दिया । बीमरु जब महार पानी के लिये गये वह बुरांत बला कर मढ़ी की समझदा पर बने न मानने पर कहा जाता है कि बीमरु ने उन्हें महाराजा सुखसिंह के पास सर्वोत्तम संवाद प्रेषार्थ निरुक्त कर दिया । हमेशा राज दरबार में जाने के कारण कोठारीजी की अवस्था अच्छी हो गई । मढ़ी माइता की विधि ने कहा—

“मदिया मत कर गिरधो, दुराजिये मैं देल ।  
दे मरानन ये नाकली, पाँच मर्यां मेला ॥”

## बीकानेर में श्रीमद् की भूमितियाँ :-

बीकानेर में आज भी के कई कार्य चलन विद्यमान हैं। बीकानेर के बड़े पण्डित्य का जन्म, देवायु, दीवानसत्ता आदि आपके समय के हैं। नाइल की गुलाब के आदिनाथ जिनालय के दरवाजे की बफेरा देकर सामने से सुलताया क्योंकि सामने दरवाजा नहीं रहने से आवाज की दृष्टि बंद थी, अब यह बसते व्यक्ति की राहुत-पावतार श्रीमन्मदेव ( सं० १६६२ बी० ब० ७ में सु० जिनबंदसुरि प्रतिष्ठित ) पण्ड के दर्शन हो ही जाते हैं। सं० १६६१ में प्रतिष्ठित श्री चिन्तामणिजी ( बीकानेर का सर्व प्राचीन जिनालय ) के मन्दिर द्वार के दोनों ओर जो हुए दायियों की आपने ही यहां रक्खाये थे। कहा जाता है कि पहले वे श्री जिननाथ जिनालय में थे जो बस सामने में रहने के किनारे और गुलामन जगह में अवस्थित था। अब कभी-कभी व वसने से मन्दिर का तथा दरवाजा ही जाने से इसकी सीमा बंद गई हैं। यह मन्दिर बख्शवत कर्मसी ने सं० १६६१ में बनाया था।

## उदरामसर मेले का प्रारम्भ :-

बीकानेर से ४ बीघा की दूरी पर स्थित उदरामसर के पास राजा साहब जिनबंदसुरिजी का प्राचीन स्थान है। वायूके बड़े बड़े तीर्थों को पार करके यहां जाता होता है। श्रीमद् ने सं० १८८४ के मिस्री साहबा सुवि १३ के दिन यहां का "मेला" प्रारम्भ किया। राज्य की ओर से रथ बोले सवार इसादि आने लगे तथा जनता भी रौखों सवारिया लेकर यहां पनाह होने लगे। आज तक यह मेला चालू है। राहुसाहब

को पूजा व गौठ-जीमन्तवारः कौण्ड दृष्टा करते हैं। उस समय का बनाया हुआ सेवन हंसजी का गीत मिले है जो इस प्रकार है :-

### गीत सारंग

मुने महीपति हुकुम सँ सिरै हुये, कनरिचो भाइया सुद पूजा भारी ।  
 पीत सँ दादा तिनदण्डूर रै फां सभे, जामो माव सँ हुनी सारी ॥१॥  
 अथवा अथवार साहुधर बहु जाविवा, संभूता कनातां पाल लहीया ।  
 तेक अथ पम हरचार ससुरार लो, कन सँ दयमा पाट कहीया ॥२॥  
 हरक अथ केसरां हुक सेवा हुनै, राम रंग बरै चरंग रीतां ।  
 सिरै गेठां घटां उज्जवा हौं कनाया, कहीचो जगल में कानी बीतां ॥३॥  
 कमस पोका रयां कहां मानव पयल, मलो हुय हजारत कलक मेले ।  
 भीम गुलदेव नाराय पलाय सँ, मंडायो सुत सदा-मुक्त मेले ॥४॥  
 इति गीत सेवक हंसजी रो कइयो ॥

यति फतैचन्दजी और जीवराजजी से धर्मस्नेह :-

श्री श्रीचिरञ्जुरि राजा के यति फतैचन्दजी से आपका कर्णों  
 स्नेह या नास की दादावली में कन तिनो सभी राजाओं के यति लोगो  
 ने शताब्द बनाई थी। श्रीचिरञ्जुरि राजा की राजा (जोली द्वार के  
 पास बाला मकान) के निर्वाण होने पर जीपद ने निम्न कविता द्वारा  
 सूचना दी थी। इस पर का "फति" शब्द जीपद की लुप्त का  
 शेषक है।

"वं प्र० श्री १०८ श्री फतैचन्दजी सहिवां सँ फति वं नारन रो ।  
 सदा बंदुत । सदा संवित सदा विवसां कर्णन यथा :—

### लौरीया चौबिला

“साल रसातल विराजल निहाल है, दूरजनसाल है साल ललैये,  
कलैये कलैये दिवानलौ जल, कलिक साल पुनै मिलैये ;  
जमिजैये तार संताप कबै न मिलै, मन बड़वा बिन बड़वा मिलैये,  
सीलै काल न्यै मई साल पै, साजन बिन मन माहि लगीये ।”

इसी राजा के बा० जयचौलसी गदि ( सीतलचरित कला-जीव  
राजनी ) तथा सांभलजी से बीमर का अच्छा सम्बन्ध था । श्री जिन-  
झ्याकदशुरि ज्ञानमंडार में बीमर के साथ इन दोनों का चित्र था  
जिसे हमने ऐतिहासिक जैन कल्प संग्रह कथ्यों प्रकाशित किया है बीमर  
की रचनाएं सर्वाधिक इसी ज्ञानमंडार में पायी गयी थी । हमने  
वहीं की प्रतियों से कथों की थी । सेह है कि अब इस मंडार की  
प्रतियाँ पत्र लब्ध बिकल गयी हैं ।

सं० १८८३ ज्ञानमंडारी के जिन काली के कदेश से  
हकिम चौधरी जयमलजी के पुत्र जीमलजी ने सं० ३० फौ-  
कदजी की विरोधराज ( पृ ४६ ) और निरघावलि सूत्र ( पृ ४६ )  
की प्रतियाँ बहुरायी थी जो श्रीजिनझ्याकदशुरि ज्ञानमंडार में  
विद्यमान थी ।

जौलमेर नरेश का आभोगन व बीकानेर नरेश के अशुराभ  
से विहाल स्थिति :—

आप की बीकानेर काले बहुत वर्ष हो गये थे । आप की इच्छा  
थी कि सन्तधिराज बीकानेर में ही हो । फिर श्री कदम्बमाने

के मंत्रों व आचमों के आशुकरा कई बार विहार करने की  
 नेकारी की तो महाराजा सुतर्कसिंह और उनके बाद महाराजा  
 रतनसिंहजी ' जो आपके परमपूज्य वे, इस दुःखस्थिति में विहार  
 करने से अत्यन्त अनुत्पन्नविनय पूर्वक रोक लेते थे। जयपुर,  
 किशनगढ़, जैसलमेर इत्यादि नगरस्थ आचमों एवं राजाभ्या-  
 राजाओं के पत्र आपसी को सुलझे के लिये बराबर आते  
 रहते थे। जैसलमेर के महाराजसजी श्रीमन्त्रसिंहजी ( राज्यकाल  
 सं० १८७६—१९०२ ) एवं उनके दीवान बरदिया सुंहरण साहू  
 भी जोरधरसिंहजी भूमंतसिंहजी के सुन्दरे बेलछुटों वाले कई  
 पत्र हमारे संघ में हैं जिनमें आपसी से अत्यन्त मतिभावपूर्वक  
 जैसलमेर पधारने की प्रार्थना की गयी है। सं० १८८२ मिति  
 माघ सुदि ११ का प्रथम पत्र मिला है जिससे साबुत होता है कि  
 पत्र-व्यवहार पहले से चालू था। दूसरा पत्र सं० १८८२ मिति  
 वदि ३ का एवं तीसरा पत्र माघ सुदि ४ का है जिसमें महाराजा  
 ने स्वयं बंदना लिखी है, चौथा पत्र सं० १८८२ माघ सुदि ३ का है  
 जिसके साथ साथ रक्ता भी विद्यमान है। इन चार पत्रों के अतिरिक्त  
 और कई पत्र नहीं मिले, जो नष्ट हो गये प्रतीत होते हैं। श्रीमद् के  
 दिव्य हुए पत्रों में एक पत्र सं० १८९० मिति पौष वदि ११ का मिला है

---

१ इसका अन्त्य सं० १८४७ में हुआ। सं० १८८५ में अपने पिता  
 महाराजा सुतर्कसिंह का सम्भाव होने पर राज्याधिकारी हुए। वे भी  
 अपने पिता की तरह श्रीमद् के परम भक्त थे। अन्तराष्ट्र के बड़े उपपन्न  
 व श्रीमन्त्रों के प्रति बड़ा आदर रखते थे इसका सं० १९०८में देहान्त हुआ।

जिससे मायूम होता है कि आपने इस वर्ष विहार करने का विचार किया था। जब महाराजा राजनिष्ठजी ने सुना तो वे स्वयं बीकानेर के पहाड़ों में पत्थर का विहार न करने की कठिनायि ले गये जो बाण्डी के राज्यों से पत्थरों को मायूम होगा। यह का आनन्दक संग्रह बहुत आश्चर्यजनक किया जाता है :—

“राजाधिराज काली रात्रि १ रै दिन को। बीमराजजी इसी मने इसी पुरमायो। एक हूँ मैं कर्ने बस्तु मांगसुं, सो जहर मने देयो पकसी। मैं का कर्ने मैं कर्ने सन आप कर्ने कोनसी। पकी काली हू १० रै दिन हबूर पयायो। कदा रदि गया, बिराजे नही, जद में करज कीनी, महाराज बिराजे कर्ने नही। जद पुरमायो हू मांगू सो कर्ने दे तो बेस्। जद मैं करज करी, साहिब पुरमायो सो हजर। जद पुरमायो, नू कटै सुं विहार का परिखाम करै हो सो सर्वथा पकार विहार कोई करस देबू नही। जद मैं करज कीनी, हू तो बीकानेर इस होस कारण जानै हो। सो मने बीस बरस कपरंत कटै हुए गया, काली पिटी आप कर्ने कोई नोचली नही। जियां नू महारा विहार का परिखाम हुआ है। जद पुरमायो जानै है पुण्य है। सो एक बार कलौषी जाबू। सो मैं आठ बार करज करी पर न मानी। कपरंत मैं कही साहिब की सीस बिना जाबू नही; कहु बिराज्या कर्ने बीस बाधां पकी पार कर्ने कलौष। पछां कदा रदि गया फेर पुरमायो जो फेर बैठ जाऊ, जद मैं करज कीनी, साहिब की सीस बिना कोई जाबू नही पकी आप पकारथा। सो महारो दासो पकी बाखान हो तो (जिस) पकार तो इस बात मैं फेर खोजसुं, पकी जिसो दासो पकी। इति कलाम् ।”

## महाराजलजी की वाग्द्वार्ति :—

जैसलमेर के महाराजलजी के पुत्र की वांछ थी और इनके जिसे श्रीमद् से बराबर प्रार्थना करते थे। अन्तर्गत में चैत शुद्ध १४ की राशि की महाराजलजी से इस विषय में पूछा। महाराजलजी ने प्रतिज्ञा के दिन आकर सुनाता किया कि इनके दो पुत्र का योग है पर इमति के सन्निधन दीर्घ के कर्मों में बाधा है। श्रीमद् ने श्रीमति प्रयोग बताते हुए श्रीमति, माता एवं सुरापाल आदि मातृक इन्द्रों के स्तन का निर्देश किया था। इस पत्र की नवरा श्रीमद् के हाथ की लिखी हुई हमारे संस्कृत में है।

## उदरामसर दादाबाड़ी का जीर्णोद्धार :—

उदरामसर नाम के बाहर इन्द्राद्वय जीर्णोद्धारिणी ' का प्राचीन स्थान है उनके आस-पास बाढ़ की प्रचुरता होने के कारण मंदिर नीचे बस गया था एवं इन्द्राद्वय के चरण भी ऊँचे पड़ा कर प्रसिद्ध करने की आवश्यकता थी। सं० १८८४ के आसपास जैसलमेर के वाग्द्वार्ति-पत्रों ' की बराबर दीर्घांतर के लेखों अन्तर्गत की के पत्रों आई थी इस अवसर पर श्रीमद् के उपदेश से लेखिकाजी ने लोदी पार्श्वनाथ जी के मंदिर में सम्प्रेतिलालजी का मंदिर निर्माण करवा कर जीर्णोद्धार सम्प्रेतिलाल का संगमरमर का विराट पद प्रसिद्ध करवाया तथा जैसलमेर वालों ने उदरामसर स्थित इन्द्राद्वय

१ देखें हमारा "पुनर्वाचन विमलार्ति" ग्रन्थ।

२ यह आनन्दराज रावस्थान में कहा प्रसिद्ध रहा है देखें जैसलमेर संस्कृत पत्र ३।

के मन्दिर का जीर्णोद्धार सं० १८८३ आषाढ़ वदि १० को कराया। मन्दिर को ऊँचा, चटा कर स्तूप इत्यादि निर्माण कराये गये। श्रीमद् के कमल से चारों को ऊँचा चटा कर स्तूप में प्रतिष्ठा किया गया। कहा जाता है कि चारों के पीछे पूर्व प्रविष्ट के समय जो चक्र रखा गया था वह विनाशुक्त गया निरुद्ध। जैसलमेर वालों ने संघ के छत्रने के लिये सौभौमिया एवं बीकानेर के संघ एवं बनि लोगो ने अपने अपने स्थान बलवाये।

**गच्छमेद :-**

सं० १८६२ में श्रीगुरु श्री जिनमहेश्वरिजी <sup>१</sup> के मन्त्रीवर में स्वर्गवासी हो जाने पर उनके पद पर अतीव आचार्य अभिषिक्त करने के लिये प्रतिगण और आत्मक समुदाय में काफी बहस हो गया इसका निर्णय होने के पूर्व ही श्रीजिनमहेश्वरिजी को आचार्य पद दे देने से बीकानेर वालों ने श्रीजिनसौभाग्यश्वरिजी को श्रुतिपद दिया। बनि समुदाय में भी कई इतर और कई उतर हो गये। आचर्यों में भी देखा ही हुआ। जैसलमेर वाले पटना श्रीजिनमहेश्वर

१ नाम गणेशा नाम के श्रीशंकरा बोहरा जिनोबन्धु की पत्नी तथा देवी के पुत्र थे। नामकी बीका सं० १८४१ में और आचार्य पद सं० १८५१ श्रावण में हुआ था। सं० १८६६ में आचर्य नेह्रुव में राजाराम गिरिजा व शिलोबन्धु श्रुतिवा से शत्रुघ्न का एक बड़ा संघ निकाला। बीकानेर का हीमन्तर बिराज्य, समेश्वरिधर यह तथा कलकत्ता के बने मन्दिर की आत्मे प्रतिष्ठा की थी। समेश्वरिधर, अंतरीय, जगदीश, पुष्पा आदि तीनों की वादासी। सं० १८६२ अश्वीन में आत्मक समुदाय ही मया। आप के गुरुवर श्रीजिनसौभाग्यश्वरि हुए।



सुरिजी ' के पक्ष में ये और बीकानेर के महाराजा राजसिंहजी बीकानेर वालों के पक्ष में । कई वर्षों तक इस विषय में सीपतान और सिपहरियों चलती रही । इस विषय के फिली ही विवरण पत्र, बिट्टियाँ और राजपूतों पर दोनों गद्दियों के बीरुजों के पास व ज्ञान-मंडलों में विद्यमान है । बीरुज ज्ञानसारणी ने इस प्रश्नो को सुलझाने का पर्याप्त प्रयत्न भी किया होगा पर गन्धमेद तो हो गया तो ही हो गया इससे कारण गन्ध की संगठित शक्ति विचार गई । सं० १८६७ भाष्य यदि १ को अष्टपुर से लंकेवी पं० गंगल ने बीरुज को पत्र दिया था जिसमें केवल इस विषय के ही समाचार हैं वह पत्र हरिसागरसुरि जी के संग्रह में है । इससे जासूस होगा है कि वह विवाद क्यों तक चला था ।

**स्वर्गवास :-**

इस प्रकार सम्बरचना, राजनसेवा तथा आभ्यास-धारा में अपनी जीवन का साधन्य करते हुए आय २८ वर्ष की दीर्घायु में स्वर्गवासी हुए । अपनी अंतिम रचना की गौरी चार्जनय सभन में बीरुज स्वयं फलमते हैं कि—

१ आय महारा के राजसुख स्वामी की पत्नी सुन्दरी के पुत्र से आय का समय सं० १८६० दीक्षा सं० १८८५ आचार्य पद सं० १८९२ में हुआ । आय की प्रभावशाली आचार्य ने । अनेक स्थानों में आपने प्रतिष्ठार्थ की थी जिनमें शत्रुघ्नराज पोलीवाह सेठ की दूक अल्लेखनीय है । सं० १८९१ में बीकानेर के राजों ने आपसे उपदेश से सन्तुष्य का विज्ञापन संघ निकाला । इस संघ में लेखक साहब अपने व्यव हुए, अष्टपुर, बीकानेर, कोटा, पोष्टुर आदि जगहों की सेनार्द पाप की, जिनमें ५००० सैनिक थे । सं० १९१४ में इनका समीप हुआ ।

साठे रुप नाठे या सब कदि है, असीब कसि लोकोकि नहीं ।  
 ई लो अठारह में मरुं, नो में सृष्टि गति केय रही ॥२॥  
 गौरीरान क्यो बड़ी देर भई ।

सं० १८६८ में वृद्धावस्था के कारण आपन्न शरीर अस्वस्थ रहने लग गया था एवं स्मरणशक्ति के ह्रास की बात आप स्वयं स्पर्शक सत्रण में प्रभु से निवेदन करते हैं । अंतिम अवस्था में समाधिपूर्वक वरदा जाने के लिये अनसन, आराधना एवं ८४ जल जीवायौनि इत्यादि की पद्धति जैन समाज में प्रचलित है । यति-समाज में प्रचलित पद्धति के अनुसार सं० १८६८ मिति अखिरान कृष्ण २ की जीवराशि दिवसिवा की राती, जो हमारे संवत् में है । इसके बाद प्रथम अश्विन कृष्ण १३ की बीकानेर से ४० लक्ष्मीरामजी ने अजीम गज निष्ठ श्रीगुरु श्रीजिनसौम्यामृतसुरिजी को कब दिया था जिसमें श्रीगुरु के शरीर की अस्वस्थता के समाचार दिये थे, इसके उत्तर में दिया हुआ श्रीगुरुजी का कब हमारे संवत् में है जिसका आवश्यक अंश यहाँ उद्धृत किया जाता है :—

“बाहरी काण्ड १५ । आलोचन पद १३ की शिक्यो आपी समाचार लिख्य की जाय्या कबहू काण्ड क्यो देर से आया, तो काण्ड मास में २ जहर दीप्त करज्यो और ५ । ५ । श्री कान्तसार गदि है शरीर की व्यवस्था मिली सो जाय्यो, शरीर को चला करायज्यो, सुखराजा पूज्यो । १ कहे कन्हार सुताकला करणों की दिल में बहुत लाग रही है सो कह देख्यो कन्हू देस आनं तितरे लो बैठा रह्यो और कोई वस्तु पास में है सो लिख ५ । अतुरमुन मुनि सत्त है इय कु देखा ठीक है और राजाभिराल से पिण्ड अपहूँ कार्य आपी पर्याप्त करता देख्यो X H सं १८६८ रा मिति द्वि० आलोचन मुदि १”

यह वह बंगाल जैसी दूर देश से आया था उस समय यहाँ के पहुँचने में कर्मान समय लगता था। वास्तव में श्रीमद् का स्वर्गवास इस पर लेखन से लगभग १३ दिन पूर्व हो चुका था। लॉमियाँ के बति मुन्नासुन्दरजी के पास एक बहुत बड़ी पोथी + है, जिसमें कितनी ही वादवालों लिखी हुई हैं। जिनमें वादवालों के तौर पर पहले ४० श्री अन्नाकलवाणजी के स्वर्ग की नींव करते हुए श्रीमद् के "सं १८६८ मिली द्वितीय आदिन यदि ३ फरवरीवार संकेतों बाबाजी नारायणी देवलोच हुआ" लिखा है।

इसके बाद मिंगसर यदि १३ को आपके दिव्य अमानन्दन से अपनी जीवराशि-दिप्तिविक्रम की, जिसमें आपका नाम नहीं है क्योंकि इस पूर्व आपका स्वर्गवास हो चुका था।

+ इस पोथी के अन्तर्गत की भी एक उत्प्रेक्षणीय क्या है। बहुत नीच परिचय लिख कर इस में बेनेही सेवारी की पर आपकी स्वर्गतिवि अज्ञात रहने से बड़ा विचार होता था कि इतने बड़े अन्तर्गताली व्यक्ति स्वर्गतिवि का साथ १०० वर्ष बिना कब कब होकर न लगा सके वह एक बड़ी बड़ी रहस्य है, पर निराश है। अन्तर्गत फरवरी तीर्थ के पार्श्वनाथ विराज्य की अवस्था अन्तर्गती निष्ठिम में आग लेने का विचक्षण मिला उभर निराशानगी की वही पवारे हुए वे इसका भी विचार बीकानेर की ओर कराया था अन्तः रात ज्येष्ठ हुआ में वहाँ आना हुआ। बागवत के शिखरिने में मुनि निराशानगी की वे लॉमियाँ के बति की उस समय वहाँ के के पास एक बड़े अन्तर्गत गल्लीय तुलने का बता गया। अन्तर्गत होने उसे देखने की उत्सुकता अन्त की और मुनिधी के साथ बतिधी के कमरे में आकर उसे ले आया। अन्त अन्त के वह पकड़ते अन्तर्गत तुलने वादवालों कीर्णक के नीचे लिखी अन्तर्गतवाणगी की स्वर्गतिवि के नीचे ही श्रीमद् के स्वर्गवास की वादवालों देखने की मिली थिसे पहले ही अन्त आनन्द हुआ।

समाधि मरुत की प्रतीक्षा में आप थिरकान से अर्द्धशत के थे, एतद् आत्मसम्मान में लौन होकर आपने मौलिक वेद का त्याग किया। राजमवन एवं लौन और जैनिक समाज में शोक छद्म गया। राजा और प्रजा ने अपना निरुद्ध सफागरी विनोद्वय को दिया।

**समाधि मन्दिर :—**

आप का अमिनसंस्कार भी आपकी भिन्न साधना भूमि—भीगीकी पार्श्वनाथ जी के मन्दिर के निकट किया गया था वर्तमान की सेदू जी के अन्तर्गत हुए भी संज्ञेकर पार्श्वनाथ मन्दिर के अहले में पीछे दक्षिणी ओर आपका समाधि-मन्दिर बना हुआ है जिसमें सामने आले में आपकी की 'अरुणप्रसन्न' अतिष्ठित हैं। जिनपर निम्नोक्त लेख अन्वीरित हैं :—सं० १६०२ वर्षे साधुसुदि ६ सं० २० ज्ञान-सारजी साधु.....

ॐ नमो समाधिभवन गुरु देव्यो, अन्तरा भीमनि कलेज्यो।

† महाराजा राजविहारी की विर गुरु भीरुज भीमसहीभानुधुरिजी के दय से :—

“तथा भी हस्त के अरजी वाह्य ही तथा भीरुजभार पांच हम एकता में बहीत अन्तरा वीर्य साधु का। और तपस्वी के पुत्रादर बहिर कवल साधु समुद्र के बहीत अहमकर्ता था। जो साधु जानवी दुष्ट भाव के कष्टों की विम की दुष्ट भीरुज से मान्य करके विरलेय करण केते थे। भीरुज भिन्न अन्तरी मोक्षही ही सुलभवी एकाता था। भिन्न से बहीत भीरु ही उप-पाद करता था, जो अन्तरी ही साधु निरति वृद्ध हुए गई है, जो विर की हस्त मान्य है। वि० पञ्चम वर्ष ३ सं० १८१८ आ।

**शिष्य-परिवार :—**

आपके शिष्य ( शिष्यालय ), गुरुकुल ( कमानकुल ), महा-

सुख (सुखसागर) \* आदि कई स्थानों में। जिनमें से हरसुख (द्विज-विजय) दीक्षा सं० १८३३ व० ११ और सुखचन्द (अमानन्दन) की दीक्षा सं० १८४४ में श्री जिनचन्दसूरि के करकर्मजों से हो चुकी थी। सदासुखजी सं० १८६१ वि० सु० २ जगदीशपुर में जिनचन्दसूरि के पास दीक्षित हुए सं० १८६० वैश्व शुद्ध ११ की सुखचन्दजी और सदासुखजी ने विशालनाथ से जयपुर के सावरण वाराचन्दजी की पूजा किया था।

एकबार सुखचन्दजी की दरवाज़ा व्याधिमन्त्र चमकथा में श्री गौरीपार्ष्वनाथ भगवान की कृपा से शान्ति हुई थी जिसका विस्तृत कल्लेख श्रीमद् ने स्वयं श्रीगौरीपार्ष्वनाथ स्वामि में किया है जो इस ग्रन्थ के पृ० १२४ में सुविष्ट है, आवश्यक कंठ बद्ध किया जाता है :—

करी मोहि सहाय गौरीराय, करीय सहाय ।  
 सुखचंद की मंद विरिधं कवर लीनी भाय । गौ० ॥१॥  
 भव प्रलाप अलाप बंदी, लौर बादी अस टाय ।  
 आछ कीखी चडी ऊँची, भूमरी बलिलाय । गौ० ॥२॥  
 मोद मंग मंग बंधी, मन न चपने भाय ।  
 वल्लभ मिल नख दसदिश, बल्लभ है जगदाय । गौ० ॥३॥  
 लामि करज करचौ खोपी, लाम राखी लाय ।  
 मो चलि की चकल पीने, विच्छ दीध कछाय । गौ० ॥४॥

१ इन्होंने सं० १८८६ में उदयपुर दादाजी में राजा बरार्द की निमन्त्रणा केव हल प्रकार है :—

\*व० १० श्रीविनायकसूरि प्रवीण व० । सुखसागरिण शाला कविता  
 सं० १८८६ वर्ष वैशाख शुद्ध ५ ।

सं० १८६४—६८ के बीचनेर चतुर्मास विवरण में ज्ञानसारजी को हा० ७ लिखा है कतः उस समय आपके दिव्य प्रविष्ट्यादि विद्यमान होंगे। वही में वि० फिरफा, वं० चतुरभुज वं० मेर जी, फिर सख्तनाथ ' नाम भी पाये जाते हैं। श्रीजिनसौभाग्यसुरिजी के पत्र में दिव्य वं० चतुरभुज मुनि सफू हैं लिखा है, इनके दिव्य जोरजी से जो सं० १६३३ में स्वर्गवासी हुए थे।

सं० १८६८ ज्येष्ठ सुदि १३ को श्रीदुग्धजी ने सजीमार्ग से श्रीकागेर वं० अमानन्दन, मुक्तसागर को पत्र दिया था। मिली विगार बहि १३ को अमानन्दन ने जीधरादि शिष्यदिखा की, कतः इस समय तक वे दोनों विद्यमान सिद्ध होते हैं।

१ अकलय जी का अनालय वेगामियों की पीत में था, इनके कोई शिष्य नहीं रहते थे श्रीगद् की शिष्य संजति निकले ही गयी।

श्रीदुग्धजीके दफ्तर की दीक्षा गन्दी सूची से अनाय शिष्य-गर्दी के अतिरिक्त निम्नोक्त शिष्य प्रविष्टी का दीक्षा समय हराजकार है :—

१ चतुरी ( चतुर्निकास ) सं० १८६९ पा० पु० १० श्रीकागेर में  
विमद्वर्कसुरिके दीक्षा

२ मेरा ( धांतिविह ) सं० १८७६ पा० पु० १२ पु० अलेर " "  
( ज्ञानसार पीत वि० )

३ लाली ( लक्ष्मीसेकर ) सं० १८७९ पा० व० ९ श्रीकागेर " "  
( ज्ञानसार वि० )

४ इंदरी ( कनराजि ) सं० १८९० वी० व० ८ पु० " "  
( अमानन्दन वि० )

५ नंदी ( नीतिजि ) " " ( मुक्तसागर वि० )

## नरेशों पर प्रभाव :—

श्रीचन्द को सामन्त-पञ्चमी मिहान, निम्हद, सर्वलोमुखीपतिवार्तापत्र आम्हालुभवी योगीश्वर से आतः इत्यन्त प्रभाव जैन व जैनोतर समाज में सर्वत्र व्याप्त था। जयपुर-भोटा प्रतापसिंहजी व माधवसिंहजी जयपुर के महाराजा आनसिंह जी के दरबार में आपका अग्रेष्ठ सम्मान था। जैसलमेर के राजा गजसिंह जी व बीकानेर नरेश सूरजसिंह जी व राजसिंह जी आपके परमभक्त थे। जिनके काम आपके व क्वादि का कुछ अलोक पिछले दुर्गों में था हुआ है। ये जयम महाराजा पणों तक आपकी सेवा में रहते थे। पणों की आज्ञाकारी के लिये महाराजा सूरजसिंहजी के पणों के कुछ अवतरण यहां लिखे जाते हैं :—“स्वस्ति श्री सरव कर्मा विराजमान बाबैजी श्री श्री श्री श्री श्री १०८ श्री नारायण देव जी तुं सेवक सूरजसिंह श्री कोइ एक इहोल नमोनारायण पंक्षक मस्तुम हुवै कर्मच विराजमान आपरी आपरी बांघीयां तुं वही सुगन्धकती हुई आपरी बांघे लागे हरमण कीचां री री आर्पद हुवै. आपरी आछा माचक मनसा बांघा मनया कर कही बात में कसर न कही आपरी इया माचक सारी बात री आनंद सुखी है नारायण री आछा में केर सनेर करसी री बांघाजी वही नारायण रे कर री चोर हरमणोरे हुसी जै री कहे कहे दोयां लोकां भुरो हुसी वैसे पौ विरोधी में लोइ न है। आपरो सेवक जाय सदा किन्ना मदरानी पुरमावै है जै तुं विशेष पुरमावण री हुकम हुसी, दूजी करज सारी कर्मै तु कही है श्री मस्तुम करभी सं० १८७० मिनो मिहानर शुद्धि १०”

“आपरो दूरसक करसुं पर लागसुं न दिन परम आनंद रो नारायण करसी आप इतरे पैला कोद कवारसो नही आ अरज ही हुजो करे तो सारा मात्मा ही सेवक टाकर री तो सख नाराय(ण) तु का आपसु ही हुतो आप कहां निचिहा तु” ।

“आपरो कवारियो हमे कबरसुं ।”

“आपरी मज्जा में निहये में तो औ सरीर रखी इतरे मज्जा बाधा कर कसर न पकसी और म्हांनि तो परमेस्वर संतां बिना दूजो कबहू मज्जा न होनी ही कोई दूजो दोसे तो परमेस्वर था संतां नै होव वैन मात्मा, सो दूजो कोई ही है नहीं”

“नारायण री ही सांगी सकल आप ही हमें नारायण तु का कोरा आप परममात्मा ही संत ही का चीतानसु जी नारायण री सकल ही आपरी अरज सुं का सादिशां नै सख ही आपरी दूरसक करसु री मन में कही अभिजाता करे ही सो आप कया पुरमाकर दूरसक दीजसी करे हुसी आपसुं और तो न है । मने तो आपरो टाकर निजसेवक जनम जनम री जापसी सेवक जाय सब किया महारानी पुरमाओ ही जैसुं विशेष पुरमावस में आसी”

जैसाजैर के मुंहवा जोरावरमल मबूता ने महाराजजी की तरफ से लिखा है कि—

“आजरे लमे में इहा सखसुख कोरा हुसी कय कबरारी है”

“आप सारी बात जाचो ही आपसुं वैषक हुसी जानी न है”

पार्श्व यक्ष प्रत्यक्ष : —

आपनी असाधारण योगशक्ति के प्रभाव से नर और नरेश्वरों



को लो बात ही क्या पर देव भी आपकी सेवा में सर्वदा नतमस्तक  
रहा करते थे। सं० १८८४ में कवि कृपाराम ने आपकी स्तुति में  
लिखा है कि—

“कसा गोरा सब बीर कह्या में, पूरा परचा तुं देवै  
चौखट चौगिन कहा सुरां रे, काह पहर हाजर रेवै।

★

★

★

यहराज की महर तुं है कसी न रेवै अवसई।  
बिनामय स्वामी सचरावर, पूरा परचा तूं देवै  
महाराज की कृपा मोटी, हिल मिल के बाधां केवै।”

मंगलान श्रीगौरी पार्वत्याय स्वामी पर आप की पूर्ण भक्ति की  
काज भी बिनामय पार्वत्याय आप से बड़े प्रसन्न रहते थे व प्रायः  
रात्रि के समय उपस्थित होकर आपसे बातेंलाप किया करते थे।  
बीकानेर महाराज सूरजसिंहजी के सात-बच्चों में अनेकवार यहराज  
जी की आज्ञा व आज्ञा—समाधानदिखा निक आया है। इसी  
प्रकार जैसलमेर के महाराजल गजसिंहजी के पुत्र नहीं या  
बीर कन्होने अपने सात बच्चों में इसके लिये यहराज जी से  
अर्ज करने की आज्ञापूर्व प्रार्थना की जिसके कतर में श्रीमद् ने  
जो लिखा उसकी नकल का आवश्यक जरा साहं पठ्युत किया  
जाता है :—

“चैत्र सुदि १४ पाइती पुर होठ राव रहयो भी पंचोई  
यहराजजी पयावो मैदंभी कानै होय सूं कहां रो आज्ञा  
ममलै पूजयौ क्यों हो लो जीयो, यहराज भुजभायो-भूम रो

राज आचर्यो अद् इय वात से जय्यस देख्यो मोहरी तरस गी  
 में अरजहरी आ लज्जा आपनै हुय राख्यो हैं । आज खुनो  
 आज लज्जा राखी पित्त आ लज्जा राख्यो हुं सब सही हैं  
 नहीं तो पाइयो राखी सोई निम्नी है । इतरी मैं माइरी  
 अद् राज अरज करी । धूमि रौ पुरमाय गया आ आचर्यो  
 से धूमि रै दिन तो अज्जा कोई नहीं । एकम रै दिन पाइयो  
 सही अद् राज राख्यो अद् में अरज कीनी राख्यो अद्  
 राजा रै पुत्र री जोइह लै से अरज करायो है, अद् पुरमायो  
 पुत्र दोष रौ इछां रे ओग है..." इत्यादि ।

आपुर्बंद ज्ञान :—

जत हो-छाई से क्यों में वति समाज में वैराग्य ज्योतिषाद्  
 ज्ञानक अच्युत प्रचार रहा है अलतः एतद् विपत्तक अनेकों अर्थ  
 आज भी जैन वतियों द्वारा निर्मित अलक्ष्य हैं । अपनी श्रौद्धा-  
 वस्था में श्रीमद् वैराग्य निष्ठ में प्रसिद्ध हो गये थे । पूर्व देश  
 आज के समय सुर्वेदज्ञान में अने जीवराज ने आपकी  
 स्तुति में लिखा है कि :—

"बैद सुखित होत जाये नव नाकी को

अज इत्यज तक्षी होत कल्याण जी  
 अद् अने जीवराज अही होत मानि तक्षी

अज को प्रकट तक्षी जाइत मुजान्त जी  
 राजचन्द्र जी के निष्ठि आनै मन्त्रदायक

सुखितो अक्षर में कीकर नगद जी

लैलाक विधान मन्दि कर्तारि को फल जस मन्दा बौराभी मान कोने सरताज है ।

अजमेर में कवि नयलराय ने भी आपके प्रसंस्तनक कवित में वैराग्य, ज्योतिष, नैवर्तन, कविता व राजनीति आदि में आपकी विचारद बतलाया है । जयपुर नगरी के चतुर्दश की चिन्तना का प्रवाद आपने लिखा था पुष्प है । लैलाकमेर नगरी तथा किले की दूरियों के का आप के आसुर्बंद विचारद होना सुचित करते हैं । इस प्रकार आप एक कुशल वैद्य थे जो हृदय और मायरीग ( रागदि दोषों ) को निम्न करने में सार्थ थे ।

कहा नैपुण्य :—

आपकी गले से लज्जकर छोटे सभी कार्यों में सिद्धता थे । इसलिये आपकी कही सुन्दर थी । ज्ञानोपकार्यों का निर्माण आप कही मजबूती से करते थे । आपके हाथ से बने कूटे, फलिया, कटकी आदि आज भी “नारायणदाही” नाम से विख्यात हैं जो बने मजबूत व कलापूर्ण हैं । आपने स्वयं अपने विहरमान बीसी के १२ में लिखल में लिखा है कि :—

“हृदय केरा हाथे कोषा, ते निग अद्व कपयै सीमा,  
जस कपजायो जस अद्वै भी, मंद लोच ते मंदोदधरी ॥”

कवि नयलराय ने आपके कविता में लिखा है कि :—

“कर्म विनकर्म सी, हृदय हजार जाके,

लैलाक में जान सब, ज्योतिष मंत्रांज को”

आपके प्रलेख कार्य में कला का दर्शन होना है । साधारण

से स्थावर-वस्तुओं में भी कुछ नवीनता और आपकी अर्द्ध-  
 क्षम रहनी थी। आपकी रचनाओं में समस्त सूक्ष्म सांस्क-  
 रिक परिवर्तन से मिली जैन परिभाषिक पाये जाने हैं जैसे—  
 'प्रवचन माला', 'सिद्ध', 'मय', 'समिति', 'सत्ता', 'विश्वमय'।

वाक्य सुद्धा :—

आप साधुकेय में रह करके से व आपने स्वल्प उपहार्यों  
 को अपने सम्बन्धों पर आरुध कर देखा विचारते थे। श्री  
 सिद्धाचल आदि जिन स्थान में स्वयं—“गुह्य वर्ये पग पंग खंडो-  
 पारखबही, कटक पीका फलल वाल्यै दुस्सी”—लिखते हैं।  
 आपके कतिपय चित्र भी उपलब्ध हैं तथा हमारे संग्रह का एक  
 पत्र इस विषय में महत्त्वपूर्ण संख्या बालता है जिसका  
 आवश्यक कार्य यहाँ पढ़ूँ किया जाता है :—

“॥ ॐ नमो श्री वाचनाली साधिका श्री बंद्ना १०८ बार  
 लिखते श्री, आपके मुखमाम पाद करता हूँ, हूँ किसी ज्ञान (क)  
 हूँ नहीं, कण्ठक बर्देकर हुंय मरणा तो आपा इसा कुछ  
 नहीं हूँ कमाया, एक आपके दर्शन तो पाया बखी जनम रे  
 गमाया। अब यह हुनिमुता, कल पर बसगा, घोषा कधि  
 पर, हल में कमासू बखी, दुमक दुमक पात, दुसले बचना-  
 मृत मरणादिक बनेक बालंदखरी मानमाखी माधुरी मुरा कल  
 देखेंय पाया अब कहां करसन पाकंगा, जो है पाया इस  
 जनम में और तो बहुत बड़ी मैं कमाया एक बड़ी दर्शन बर्दुय  
 पाया इस ध्यान से जनम जनम का पात गमाया इकना तो

सबही कृप्य कमाया, आप भवन में मुझे निर्बुद्धि को रखीये  
तो मैं कन्य कन्य कहना- सिवाय इसके और कुछ है नहीं।”

“एक बाबाजी भी १०८ हान्तर जी महाराज जी के चरणों में”

छत्रु आनन्दधन :—

आपने अपने दीर्घजीवन का अधिकांश भाग आभ्यास-ज्ञान-  
विचार श्रीमद् आनन्दधनजी महाराज के सपनों तथा पदों के  
मन्त्र, अभयान, परिशीलन व आलोचन में बिताया था अतः  
आपके जीवन में आनन्दधनजी का गहरा प्रभाव पड़ना  
स्वाभाविक ही था आपकी के पद व सपनादि में यह स्पष्ट  
होने-पार होता है। आपने अपने साहित्य, चौबीसी वाक्यचौब  
आदि सभी टीकाओं व प्रलेखन वक्तों में पचासों जगह आन-  
न्दधनजी के पद व सपनों के अवतरण किये हैं, उनके आत्मातुल्य  
व रहस्यमय वाक्यों को लिखना आपने सम्मत् था, दूसरे किसीने नहीं।  
आप उनके साहित्य परिशीलन द्वारा स्वयं आनन्दधनमय हो गये थे अतः  
स्वर्गीय भीजयराजरायचुरिजी के लिखे अनुसार यदि आपको ‘छत्रु  
आनन्दधन’ नाम दें तो सत्यक और सर्वथा संपूर्ण ही मान्य देश है।  
आनन्दधन चौबीसी के निरकल मन्त्र की कथा श्रीमद् स्वयं  
सुविधिनाथ स्वयं की प्रस्ताविका में भी इस प्रकार लिखते हैं :—

“मैं हान्तरारे वाली बुद्धि अनुसार सं० १८२६ की विचा-  
रते विचारते सं० १८६६ की इच्छाएँ किये उनको लिख्यो पर  
मैं इसी वरत्त विचारोंही की सिद्ध हूँ—”

आपके पदों में भी आनन्दधनजी का प्रभाव स्पष्ट है।

आत्म परिचय :—

श्रीमद् ने अपनी कृतियों में अपना परिचय और दिनचर्या के सम्बन्ध में जो लिखा है कन्ही के शब्दों में नीचे दिया जाता है :—

‘बंश उभेरा लिता दिन हरसरण, कम रंग बल माता  
मगत पंच इन्दी नर हुमर, पूरय बलु ब्रह्मा ॥ २ ॥

( बहुचरो पद १३ का )

बहुचरी के १२ वें पद में श्रीमद् ने अपनी चर्चा का आच्छादार्थन लिखा है पाठकों को इस पद के १० दंष्ट्र में देवता आदि के आनन्दपन चौबीसी वातावरणों में—“इहै पंच ब्रह्मसार मध्य मरुत कतर गन्ध संमदार्थ बुद्ध बचोन्मुखिचै, सरी गन्ध पर-फा सन्धनी इन्धन लेन्धने मुक्ती एकली विहारिचै, इन्धन गरी पंच १८१६ बासीली भू चर्च तिमर ने कलन करी तेहरो आराध आराध सेरोल लिखै ।”

संक्षेप :—

मानव को जन्मा पटने में लक्ष्मण बनी सदायक है। “लक्ष्मण से बलुता मिले” वाक्य की सार्थकता आधुनिक पूर्णतः समिष्टित की। इन्हीं बड़े विद्वान, गीतार्थ, बुद्ध, कल्लु कवि और सर्वमान्य होते हुए भी अपने को इन्होंने सर्वज्ञ लक्ष्मण ही माना और लिखा। जो राजा, महाराजा, साधुसंघ का आचर्यार्थ इन्हें परमात्मा के अवतार रूप मानते थे, श्रीमद् उन्हें पकड़ि लें समय कल्ले तिर सम्मान लुब्ध शब्द लिखते हुए अपने लिये “तू” जैसा लक्ष्मण शब्द लिखा है। आधुनिक कृतियों से लक्ष्मण के कुछ अवतारण यहां पढ़ स किये जाते हैं :—

“बादल बाद देखाही मुक्त सरिता बरस,  
नये मुक्त नै दे कपड़ेरा मुहाम्बरा”

( राहु जय कानन पृ० १३० )

इतनकर नाम पायो ज्ञान नहि रोहरा ।

( आर्द्रविन कानन पृ० १३६ )

“हू महा मंगलुधि, राख सु परिग्रह किमपि नहीं । देखी  
छोटी हुदै मोटाभोनी बात किम लिखाय”

( आन्याम गीता बाला० पृ० ३१२ )

“हू महा पूर्ण रोखर, कर्ता महामोहनाय”

( वही पृ० ३२८ )

हमसे मैसे मेमबर, कीच कीचौ इक मेर,

( पृ० १७६ मति प्रबोध हरीश्री )

“हुक देखा बचकी बात किम कलाप दिखानी नै हुक  
लोकीने समत कादरबा करायी”

( पृ० ३६० विविध प्रभोत्तर )

“हुक देखा अष्टाचारियो नी संगले राखि स्वकन न पायै ।”

( आनन्दकन चौबीसी राखि सा० बाला० )

निष्पृष्टता :—

कहा जाता है कि एक बार अजय अहलुर पवारों । अपने  
अहुरास एवं सिद्धियों की प्रतिष्ठा सर्वत्र व्याप्त थी । जब देवाङ्ग  
पति अहमत्या की कुदृष्टि (अपराधित) राखी ने मुना तो वह

भी प्रतिदिन भीमद के चारों ओर निवेदन करने लगी कि  
 तुम्हें कोई ऐसा कर्म दीजिये, जिससे महाराजाजी की बचतभला  
 दूर हो और मैं जल्दी विधवा हो जाऊँ ! भीमद ने  
 बहुत समझाया, पर राखी किसी तरह न मानी और बंध देने  
 के लिए विशेष दृष्ट करने लगी। अब भीमद ने एक कपड़ा  
 के टुकड़े पर कुछ लिखकर दे दिया। राखी की भद्रा और  
 भीमद की बचतसिद्धि से ऐसा संयोग बना कि महाराजाजी  
 की उस राखी पर पूर्वजन्म हुआ हो गयी। महाराजाजी बाबा  
 के बंध बरतीकरण की बात महाराजाजी तक पहुँची और  
 उन्होंने बंध के सम्बन्ध में इनकी पूछताछ की। भीमद ने कहा  
 "राजन् ! हमें इन सब कार्यों से क्या उपयोग !" जाँच करने  
 के लिये बंध कोलकर देखा गया तो उसमें "राजा राखी हूँ राजी  
 हुने तो मराने ने कह, राजा राखी हूँ कहे तो मराने ने कह"  
 लिखा मिला। इसे देखकर महाराजाजी आपकी निस्तुष्टता और  
 बचतसिद्धि पर बड़े हो प्रभावित हुए। इसके बाद महाराजा  
 जी आपके अन्तर्गत मरु हो गये थे। भीमद की इच्छाओं में  
 महाराजा आनसिंह आसीनद नामक कविता तथा उसकी बच-  
 तिका उपलब्ध है जिससे भी आपका महाराजाजी के बंध से  
 अच्छा सम्बन्ध साधून होता है। इस कविता एवं बचतिका में  
 रचयिता का नाम तो नहीं है पर यदि भीमद ने कभी रचना  
 की होगी तो बीकानेर में रहते ही, क्योंकि महाराजा आन  
 सिंहजी का राज्य-काल जयपुर के इतिहास के अनुसार सं०  
 १८८५ से १८९५ तक था है उस समय भीमद बीकानेर ही थे।



आपने पिछले जीवन में समस्त प्रवृत्तियों में भाग लेते हुए भी आप सर्वथा निर्लेप रहते थे। आपका और योग की गहरी अनुभूति में योगी के जल-कमलवत् निर्लेप रहने का अलंकार मिलता है। आप भक्त अवस्था को प्राप्त कर चुके थे परन्तुः व्यवहारिक क्रियाओं को सम्पादन करते हुए भी आप कसते निर्लेप रहते थे। जायकी वाक्का से आप सर्वदा दूर रहे। बीकानेर के गौड़ीपार्व-विनायक, कृष्णदासी, कृष्णदास आदि से जीर्णोद्धार तथा आप नाम प्रवृत्तियाँ आपके कपड़े-रो के पतलवस्त्र हुए भी पर आपके शिखरेआदि में कहीं अपना नाम नहीं आने दिया।

आप जब कौटिक टीकाकार और समालोचक थे। श्रीमद् आनन्द-चरणी, देवचन्द्रजी, " यशोविजयजी आदि के ग्रंथों पर विवेचन लिखते समय आपने सच्चे समालोचक का सर्वोच्च पञ्जन करने के लिये श्रीमद् देवचन्द्रजी, ज्ञानविमलशुक्लजी तथा मोहनविजयजी आदि विद्वानों की बड़ी ही मार्मिक स्तुति और निर्वचनपूर्वक समालोचना की है। इन टीकाओं तथा आलोचनाओं से आपके प्रखर पण्डित्य और अप्रतिम प्रतिभा का सहज पता मिलता है। इन में विशेषतः

१ श्रीमद् देवचन्द्रजी का आचार्य अनुभव और इन्द्रधनुष का ज्ञान भवन का विचार था। जायकी रचनाओं में तीन उत्पन्न जलचार का रहस्य और पवित्र वृत्त वृत्त के चर्चा है। आपके अनुभव ध्वन की रूप पौष्प को जायकी छोटी से छोटी रचना में भी मिले बिना नहीं छोड़ी। श्रीमद् बुद्धिवाचस्पति ने जायकी रचनाओं पर मुख्य हीन छोटी-बड़ी समस्त रचनाओं का संक्षेप रूप प्रत्यक्ष विधा और आचार्य ज्ञानचक्र मंडल की ओर से

यह है कि आज़ेम्बर महापुरुषों की गुरुता व अपनी गुरुता प्रदर्शित करते हुए विषयपूर्वक आपसे उद्गार दिये गये हैं। यहाँ पाठकों के परिज्ञानार्थ, श्रीमद् देवचन्द्रजी द्वारा आन्यात्मवेत्ता पाशावयोग से कुछ कथनरस दिये जाते हैं।

“फिरी अबदमी गव्या ना बीसा यह “पर करतार” कह्युं। फरामी गव्या ना बीसा यह मां “करै कर्म बुद्धि” यह्युं कह्युं। ते परकरतार मां करै कर्म बुद्धि मां रहस्याये कमिल पद्यो क सम्पये हैं। मैं आलुपुषी ज्ये फिरी अझर पदनाये जो मिल बिसे हैं पर महाकविराजे पाहुं न बिचार्युं दखै पर प्रसन्न विरहू जगदी मैं आलुं जग्याहुं हैं। फिरी हूँ महात्मबुद्धि हूँ। तेबी व स्थाने सुख पुसे बिलोस्याये व रहस्यार्थ प्रह्लादोपर करवुं। पर दख्ये बोबीसी (मां) फिय रहस्यार्थ पुनरति दूखे दूधित हैं। ते सिद्धवाने पद मां स्थानक नहीं।”

श्रीमद् देवचन्द्र भाग १—२ नामक विशालग्रन्थों में उन्हीं प्रकाशित कराया है। एवे- जैनसम्राट में श्रीमद् आनन्दचरणी के पञ्चाद आन्यात्म उत्पत्तिता के कम में आपका ही नाम लिखा जाता है। श्रीमद् आनन्दचरणी के जो नामकी एक पूर्व का ज्ञान होने का लिखा है वह आपके आत्मधारण पश्चिमत का परिचयक है। आपके जन्म बीकानेर के बनीमलती पाँव में कृपिका कुम्भीद्वारा की पत्नी, घर-बारी की बुद्धि से सं- १५८५ में हुआ था। सं- १५५९ में आपकी दीक्षा हुई जर्मनिक निहार राजस्थान व विन्ध में, फिर कुम्हार राज बीकानेर में अष्टम कम के हुआ। गुणप्रधान श्रीविश्वचन्द्रमूर्ती की शिष्यार्थपरा में वा- दीपचन्द्रजी के आप विन्ध में सं- १८१५ में आपकी वाचकपद मिलत और जयी वर्ष महापुरुषों में आपका वर्णन हुआ।

“ए वर्तमान २०० विरसे बरसो ना बरस मां पढ़ा बरिराजान बरन्ध  
 बोधा निहाय लेदवा बरवा, नै आरुपसो पद अति विरोध हतुं । नै हुं  
 महामन्त्रबुद्धि, राखत तुं परिज्ञान बिम्बि नही लेदवी मोटे गुहे  
 मोटाघो नी बात बिम्ब रिताय । परं बावक नै अति आम्है मै  
 हम्बो करवा मांद्यो । तिहां बिम्ब योजना मां सम बिस्म होय तिम  
 लिख्युं मोदये लेदवी लिखुं । “अरुगु संग” बली अगल कर्त ।  
 “कै गुवरंग” । पुनरपि “गुह गुहयोग पी” । एम बे गाथा मां बर  
 लिख्यो गुह रम्ब गुम्बुं ते पुनरोक्ति दूको दूपित करिया छै ।  
 आधुनिक संहिताय बलि ते निर प दूष्य तो टाली जो एहू मै मोटे  
 कये प मोटुं दूष्य मां ॥ टाल्युं प बिचार्युं”

“स्वगुण हम्बपरीय नै अम्है कर्ता करय कार्यनी एकता न  
 संनय न निराबाय पयुं संनय लेवी “स्वगुण आधुन पकी कर्मा पूरे”  
 प बाव प्रथम गुंयुं योग्य अगल अगल छै लेने अम्है कारकबल  
 स्वभावी सम्पूर्ण सामाने बिम्ब सली पके निर हुं बड़ा पूर्वोक्त कर्ता  
 महाबलिबल परं विरुधैविचारणीय ।”

“लेखना अम्हाने चिंतन करने आहै, इहां बर्य न्याय सुख्यो,  
 गुंथी लेवी नीचो गुह्योय यो । नै एम गाथा ना पीछा पद नै  
 बरमोही नै बिस्म जाय, इहो गुंथी ते ले पल ले बीरमोह बारमै  
 गुह्योय नी बात छै परं मने ते गुंथा अम्हो कर्मा करयो ।”

“अहोसमीगाथा नै अति पद मां अम्ह पद गुंथी आई ३६  
 गाथा मै निराबाय पद गुंथी तिहां अम्ह निराबाय प बे रम्ब प अर्थ  
 एक छै परं मुनै अम्ह अम्ह अर्थ करयुं, परं पुनरपि छै ।”

“इहां कर्ता में दुस राज्य संबन्धी न हुंनो सिम मुत नौ संयुक्त अर्थ होय ते इहां सिद्ध भां संबोधनित बांझ्यो भयो । सिहां तो जे सम्बाध संबन्ध छै चिरी कुत आगत रति राज्य संबन्ध । ते बीछराना यह सिद्धे विराजमान नौ राज भो जम्बाध पर मुक्त मे कक्षरतुं कार्य कानु ।”

बीमरु देवकद्वती इन साधु समुदाय उपार्थ से काशीभ्यामाक कायलराय यहां कानुन विधि खाते हैं :—

“ए के पदों में विरोधाभास छै ते चिन्तित सिद्धुं एर हुं म्हा नियुक्ति बच्छार हुं जैन वो जिहो हुं, यद्वागो याजनी अस्मिन् छै सिम्बाध कर्ता नौ मोटो याजनी छै, पर सिद्धान्त सम्बन्ध विरोधाभास कवन सदा सक्षय जैन विच्छा जाम्बा पक्षी न सिद्धुं ते कर्ता सिम तुं चोर धनुं छै लेयी सिद्धुं”

“पदुं जे कर्तुं ए क्षयिक भावे कवन ते विरोध छति सटक द्विज याजना सिम्बाधनी न्यायको मां स्यो कर्तन करयो पर ए कविराज नी योजना नौ पद सुम्बाध छै तेज यज्ञ मे गहरपहर भागे नी पाछे, पाछे नी भागे हुंछो जाल्यो ज्ञान ते जने पोते दिखार लेज्यो । सम्बाध विच्छा अंगोपांगवांग कवित्त, बारबार एक पद तुं बाज्यो ते पुनर्वाक दृश्य कवित्त ते पक्षीन सिम्बाध में खेती खेती लेज्यो, एक “निज पद” कम ज्ञान गून्चो छै ते निज लेज्यो इच्छो मुचने दृश्य मां लेज्यो बीछुं पदने छटक सिम्बा सन्नयनाकरी सम्बन्धामयो पुस्त छै सक्षय ना कवन नी योजना केवळ ते गहरपहर छै ए किन बीछी सहित छटक योजना सटक छै । योजना करयो ए पद निज न्यायी छै, कौमुदी कर्ताये सिम्बा नी बाध इच्छा करयो, ज्ञान यो न ययो ।

जहाँ ए बात सुनी न सिध्द हो ए लिखा बाँधइ जालो मुख-  
कोकरजायै एकारखो जिम् । गुजरल मों ए कहिवा है—बान्दवम  
द-ध्याली मिनराजसुनि । बन्वा हो अग्रवधकरी, ४० परो-

[illegible]

विजय \* टागोरद्वारा चेतो चन्द्रो तेज समर्थो, व० देवचन्द्र जी ने पूर्व जन्म एक हनुं ऐसी गहरफरिया, मोहनविजय \* फण्यास से

२. यशोनाथराय यशोमित्रजी के साहित्यकाण्ड के उल्लेख करते हैं। इन्होंने काली में तीनवर्षे रहकर विद्याभ्यास किया। यशोमित्रराय व्यासवर्धन आपकी कृपासे श्री. आपने संस्कृत, गुजराती और हिन्दी में लेखों रचनाएं कीं। कहा जाता है कि हरिभद्र-सूरिजी के पञ्चाद, लोचनभद्र संस्कृत में ऐसे यशोमित्र दार्शनिक विद्वान् आपकी हूए हैं। केवल व्यास पर ही आपने ही ग्रन्थ बनाने का कहा जाता है, केवल ही कि दोसे श्री में ही समुचित प्रकार के व्यास में आपकी १५—२० कृतियां उपलब्ध नहीं रही। आपका जीवन-चरित्र "सुनसोपनिषद्" नामक समकालीन रचना में पाया जाता है। आपकी यादगतिगत सूत्र साहित्यसंग्रह भाग १-२ में प्रकाशित हैं। सुप्रसिद्ध विजयमित्रोपाध्याय आपके सहपाठी थे, उनकी अंतिम अपूर्ण रचना श्रीमत् राम जी. पुत्री आपकी ने की थी जिसकी कई वर्षों आश्रयक मदनमूर्धा में प्रवेश प्रसिद्ध है। सं० १७५६ में आपका सर्वप्रथम पुत्रा का। आपके उत्सर्गगीत पर श्रीमद् ज्ञान-राजी ने काव्यमयी लिखा जो इसी ग्रन्थ में प्रकाशित है। आपके एक नाम पर ( जब तक भाई नहीं मन ठाम ) का ज्ञानराजी ने आनन्दचन्द्रजी के कविता काव्यता है पर उसके अन्तर्गत "विद्वान्-धन सुखस विजयी". नाम होने से ये रचना यशोमित्रजी की निश्चित है।

३. फण्यास मोहनमित्र उपपाध्याय कानिचन्द्र राधे के शिष्य थे। इन्होंने सं० १७५४ से सं० १७८३ तक कई राज चौपाई, आदि भाग कृतियों लिखी-कीं। इनकी रचना सरल, मधुर और रोचक होने से वह प्रसिद्ध है। सं० १७८३ में रचे हुए चन्द्र रास की श्रीमद् ने हिन्दी-देवी में समाजीकृत लिखी है।

गोटकरां शुभ मेधागत अर्थ लिखतुं छै ते बहुत प्रमाणी अर्थ लिखीस,  
 बिहो सरीसो अर्थ दोसो ते मज्जे दूख न बज्जसो, बहुत बिदल  
 अर्थ सरीसो दूख गही" "आगे नवमी गाथा रे पहले पद में माण्डव  
 आर्ये नो दुर्गा रे इहो पद गूँधो ए पद नो सम्बन्ध बारमें गुच्छारी  
 बिना मिले नहीं पद कर्त्तार गूँधो तेही मने पद रो अर्थ करखो ते  
 लिख..... किउ सिन्धव कर्त्तार आर्ये पद गूँधो तेही पुनः  
 अर्थ लिखी"..... ।

### ज्ञानविमलश्रुति की आलोचना :-

श्रीमद् ज्ञानम्बक जो महाराज की चौबीसी पर श्रीज्ञानसारणी  
 महाराज का आवयन बहुत गम्भीर था । ज्ञानम्बकजी के तत्त्व-  
 ज्ञान और आत्मनुभवमय यह शब्दों पर विवेचन होना बहुत  
 आवश्यक था, क्योंकि श्री ज्ञानविमलश्रुति " ने उत्तर दिया

१. आप विमलश्रुति जीसाल बाबा की गली कनकावली के पुत्र थे ।  
 आपका जन्म सं० १९१४ दीक्षा सं० १९२२, सं० १९२७ में पम्परा पद,  
 सं० १९४८ में सूरिपद प्राप्त हुए । सं० १९७० में आपके उपदेश से  
 कार्यरत का एक संघ निकला । आपने संस्कृत और भाषा में अनेक ग्रंथों  
 की रचना की जिनके सम्बन्ध में जीव सुन्दर कविगी काव्य २/३ में लिखा  
 चाहिये । आपके रचित राजनादि कैशों की संख्या में उपलब्ध हैं जिनके  
 संग्रह का २ भाग प्रकाशित हुए हैं । सं० १९७७ वाटन में आपका  
 श्रीमद् देवचन्द्र जी से मिलना हुआ था । उनके सहस्रहस्त विनी की  
 मायावती बताने पर आप बहुत प्रभावित हुए थे । सं० १९८२ में संन्यास  
 में आपका समर्पण हुआ था । आपकी सं० १९९८ से सं० १९७५ तक  
 रचनाएं उपलब्ध हैं । गद्य-पद्य और श्रुति के साथ साथ थे ।

लिखा था। पर बीमरू के फिर अध्ययन की कसौटी पर यह विचारपूर्ण और सदा नये सदा। अनेक स्थानों में कार्य स्थिति और अविवारपूर्ण लिखे गये। फलतः ही 'ज्ञानविमलशूरिजी का रचित वास्तवबोध, अनायास ही बीमरू के आलोचना का विषय हो गया और बसपर आपसो कभी और सार्थिक आलोचना करनी पड़ी। यद्यपि आपसो यह वास्तवबोध प्रकाशित हो चुका है फिर भी एकदमों से इन आलोचना के बंटों को छोड़कर मनमाना संस्करण प्रकाशित किया है अतः पाठकों की जानकारी के लिये वास्तवबोध के समालोचनानामक बंटों को यहां बहुत किया जाता है :—

“ज्ञानविमलशूरि इस दण्ड में भी जोड़िये चारी नै लिखिये लिखी दण्डनै जोड़ुं ते किहां पकरी अर्थ लिखी अलस्य भोड़ुं विचारुं लेखन लिखन भी अलस्य ही ते कोई पूछे किहां ते अलस्य, ए अमिनन्दन ना यह मां 'अमिनन्दन जिनदरान कसिये, एखी अर्थ अमिनन्दन नरमेजर ना मुक तुं देखुं तेनै कसिये ही पकरी कोई हीने लिखी ते बाहिरी एखुं लिखी एखुं की विचारुं दरान राज्ये जैन दरान तुं कमत है किम एत गथा मे जीते पदे "अत ए मेदे रे जो अर्थ पूछिये" ते नरमेजर ना मुक देखन मां मत मत मेदे खुं पूछिये नै तेन अर्थ हूँ तो आगत ए मां 'सुख खाये अहमेव' ते नरमेजर ना मुक दरान मां अर्थ अत मेदी अह गहुं खुं माने पर अत यह अलस्य लिखी खुं”

ज्ञानविमल करी अरथ, कनची न लिखिये विचार।

तेथी ए उवना कवी, लेख लिखी अविवार ॥१॥

“कोईकदिसो विन विचारयो खुं लिखी ते, कदिसी गथा मां



‘मत मत मेरे जो लख सुखियाँ सहु बानै बहमेव’ ॥ एवु मां परमेस्वर ना मुक्त हरांन नो स्वी विरोध्य पिटी हरांन शब्दे सम्पत्त कार्य लिख्युं लिहां इय न लिखायुं कमेन्न्दन किन हरांन, जैन हरांन ते जिना वल वल मेरे पुझी बहंजल स्युं बानै पिटी बनि हुरिम नयबाह, बालमबाहे सुकलम को नही, पीछी करी मारन बंचहं, एव मां मुक्त नो सम्पत्त नो स्वी विरोध्य मुक्त्य लिखायौं न बोहौ”

( कमिन्दन क० बाण० )

“इहां चन्द्रमसुजी नी कवना मां जयम ज्ञानविमलसुरि इय लिख्युं लिहै सुद्ध बेतना चहुद्ध बेतना मों बहै हैं । कनवि बालमायै कयावि मायै बाह्यो माटै सखी मायै सखि कही निव सुद्ध बेतना नै सखी सुमति भद्रदि सम्भयै निव ★ ★ ★ ए स्वपहो वचन सुवकर्तयेन कइनी ते सुवकर्ता हो भावक न हुतो परं बर्धकर्ता इम लिख्युं, ते ते कानो ।”

( चन्द्रमस क० बाण० )

“ज्ञानविमलसुरि महा पण्डित हुत, तेकर कबहोना सीइय बर्धन्यो हुंन हो समर्थ बर्ध करी सकता । तेकर हो बर्ध करतै विचारया बर्धन न्यूनज करी, ते’ मैं ज्ञानखरे मारी सुदि चतुसौं सम्पत् १८५१ बी विचारतै विचारतै सम्पत् १८६६ बीइयएव माये तमो लिख्यो पर मैं इजरा बरसां विचार विचारतं हो सी सिद्धि परं ऐइनी बोरी बंजित विचार विचार लिख्यो हो सम्पूर्ण बर्ध बालो परं ज्ञानविमलसुरिजी ये हो असम्पत् व्यापारी स्युं सीदी बेच्छे करै नही पीटी न समयै निव ज्ञानविमलसुरिजीयें रिग लिखतं तेकरा म बालमबाही एव बंजित नो लख्य निहोर बीनी, बर्ध

स्वर्ग स्वर्ग सम्बन्धित भी मिलता न मिली ।” (सुविचित्रित स्वप्न वाक्ता० )

सुखकर्ताये शीतल जिनकी स्वप्ना में “रक्षित स्वर्गित त्रिभुवन प्रसुता निम्बका-संयोगे रे” ए गद्य में पांच द्विक संयोगी त्रिभंगी बतानी हैं नै कर्षकरता । ज्ञानविमलसूरै पदुं लिखतुं “रक्षित स्वर्गित ने कसका पीरकला कर्म इराजानै बिसे व्यक्तल है । त्रिभुवन प्रसुता पामी ने कदाभीनता ए कस सुख निम्बका नै संयोगे कसका रक्षित स्वर्गित । त्रिभुवन प्रसुता कने निम्बका १ ए त्रिभंगी सुम्भ मांदि, सायरी हैं ए लिखत निहां की ज लिखयो हैं । कर्ष करयोग प्रसुतला थोड़ी प्रसूती, चिरी “इत्यदिक् बहु भंग त्रिभंगी” निहां बहु भंग त्रिभंगी ने कसने ए त्रिभंगी लिखला ही मोदुं निचामुं कां कसति १ नास २ परमेश्वर मां कयी संभवता सत् १ कसत् २ सत् सत् ३ ए त्रिभंगी की संभव न हैं ” (शीतल जिनका० वाक्ता० )

“कर्ष करतै ज्ञानविमलसूरै “जी जेयंस दिन अंतरजामी” पदुं कर्ष लिखतुं यथा-जीजेयंसदिन अंतरजामी मारा मन मां कसका हो, वे मारी निचामराये इम न जोहये, निम पती सुमति सहित आनन्दपल ली बचन परमेश्वर की हैं यथा”—इत्यादि

“कर्ष करणये कर्ष करतै यो कर्ष आमाद वरी ना भोति वरी लिखयो ज्ञाप्य है । ✽ ✽ ✽ एक कनेक कृम नयपादे पदुं कर्ष इन लिखतुं हैं । कृम निहो कये करी नयनाकी कनेक रूपी हैं । कर्ष लिखत हैं ए वरी जो रहस्यार्थ लिखता वाली ने मास्यो हृत्पे कीन् ए लिखत कर्षकृम यथाप मासै हैं ।”

( जेयंस जिनका० वाक्ता० )

“अर्थ कर्ता ज्ञाननिष्ठाहूँ ए माना नो अर्थ करता, ई छुं तो महामूर्खोत्तर पर आई तो मामूर खेड़न बिचार्य जगज्य है क्या— ★ ★ ★ सयुं संभव पर राजगी तुं बाप खरदूं ही मलार” ( विप्लव जिन सबन बाला० )

“ए सबन नो अर्थ करतां अर्थकर्ताये मूल चीज न बिचार्युं—  
 धार तरवार की तो लोहिली परं १५ जिन की चरखामल सेवा  
 मां विविध विरिचा सयुं सेवै, फिरी चरखेला मां गच्छ ना मेद  
 लख नी बाल बंदर मरग जिन काज करवाने सयौ सम्बन्ध ?  
 फिरी चरखेला मां निरपेक्ष सनेह बचन, कूडा भाषा नी सयौ  
 सम्बन्ध ? फिरी वैद्यरुज कर्म नी दुख मरग नी दुखरा, कच्छुब सूच  
 मांसबा मो, पाप पुण्य नो सम्बन्ध सयौ ? परं चरख सेवा—चरित्र  
 सेवा ए अर्थ न पन्थुं चरखेला पदसेवा भाग्युं लेदू थी पल  
 अर्थ मे सिधनी की मिली पर्यंत अंधोबुन्ध परं अंधावला न  
 आस्था गल ।” ( अर्जुनजिन सबन बाला० )

अर्थकर्ताये अर्थ करतां “देखै परम निधान” आई निधान  
 रखै कर्म निधान पहनो लिख्यो नै आई “निधान” रखै खरख  
 प्राप्ति रूप निधान देखै ए अर्थ है । कर्म प्राप्ति रूप निधान अर्थ  
 नथी संभवतुं , ★ ★ ★ पहनो पिया अर्थ  
 करित है परं लिखवानो सखनठ नथी” ( कर्म जिनसबन बाला० )

ए सबन मां अर्थकारके ‘कहो मन किम फलदाय’ ए पद नी  
 अर्थ करते मन प्रसन्नकरत आई ने कहौ पदुं परमेश्वर पी कछुं ने  
 ए बचन बिरह है । परमेश्वर ने मन्थुं कर्म न संभवै”

( सान्नि जिन सबन बाला० )

ए उबन मां कर्मकर्तोये 'नॉले कल्लै वासे' ए पद नु कर्ब  
 इम लिक्कुं जे चिन्ने कंडं कल्लै वांक्कुं करै ते ए पद नु ली  
 कल्लार्य, कल्लै सट्टिये, कल्ल पद नु कर्ब जालि मां नांजै, राज्य नु  
 कल्लार्य जौइये ते इम, परं मोटा निनुम, माथा ने सट्टिज जाणी जे  
 कर्म नें कर्तो कर्म करतां विचारया बोळी राळी परं एखी माथा  
 ली ते कर्म, कर्मकरता ने कल्ल विचारी ने कर्म लिक्कुं जौइये  
 निम "लिक्कु एव ना लिक्कु" एखुं कदयुं जे जे कल्ले चिरी कल्ल  
 पिडु लिक्कौ बोक्कु विचार्युं कया—सूचकर्तोये प्रथम वाया ना  
 कल्ल एव मां ए वाड कदयुं निम निम कल्लुं माजै ए पद नु कर्ब  
 कर्तोये लिक्कु निम निम कल्लुं कल्लु सुक्ति मार्ग की विचारीत  
 माजै जे एव उवा ने लिक्कुं एव कल्लुं राज्य नु कल्लुं निम  
 माय तेथी कर्मकर्तोये कर्ब ली कर्म करतै सूत की बोळी विचारया  
 बोली चिरी जे "कल्ले जे कल्लो साळी" एखुं कर्ब लिक्कुं माड  
 रोसाळी ते रोस कल्ले मन मां इर्वावंत इम लिक्कुं ने मन मां रोस  
 निम काम जोधाजि मन मां एव नवी संभवता तेथी माडरोसाळी  
 ले न सम्वै चिरी केळुं कर्वावर्ब कली ने लिक्कुं जौ साळी ते देरा  
 चिरोये कल्लियाळी ना माड ने कळै जौ ते देरा चिरोये ली कल्ले लिक्कुं  
 जौइये ली सर्व देरा चिरोये कल्लियाळी ना माड ने साळी न कल्लिया हुये  
 कल्ले देरा कल्लिया हुये ली परं कल्लेदेरी मां कल्लियाळी ना माड साळीज  
 कळै जौ कल्ले ते देरा चिरोये कल्लियाळी ना माड ने साळी कळै ए  
 लिक्कल्लु सुं कल्लु" ( श्रीकृष्ण जिनकालन काला )

“ए उबन ली कर्ब करतै कर्मकरके “परपदै छांदकी जिह  
 पदै” ए पद नु कर्ब पर कल्लिं जुदाल ली कल्लिं ली कल्लिया उवा क

इच्छा जिहां पौं ते दिज पर सम्य नौ निवास एली जे इच्छावासी  
 कइतुइ अनुभव लेहिल परसम्य कहिये । ए कइतुइ शिखरी पिस  
 पर नौ तो पुद्गलार्थ भाव पर नद राव तु कइतुइ अर्थ किम  
 संभव नै कइतुइ सी कइतुइ जेहनी छाया संभव पर अर्थकता नै  
 अर्थ करते कइतुइ मोक्ष विचार्य असाव जे चिरी एक एली ललि  
 मीत नौ तुम साथे जगनाथ नै जगनाथ तुम साथे एक पली मीत  
 एली गमे नरमी छे । एली से लाल गमे पुद्गल व्यवहारें तुम  
 साथे मीत बांधनार छै प्रथम मोप कइतुइ मोहि कोइ राखनार  
 नथी वासतु चिरी वाथा नौ कइतुइ मां विरोधाभास मासे छै  
 पूर्व इल मां से परपक्ष सम्बन्धी अर्थ लिखतु, कइतुइ इल कइतुइ  
 करी ने तुम्हारा करतु लो हाथे मीत ने तुम्हारे राखनार ए क  
 पक्ष तुम्हारे  
 ( अरनाथ सा० वाला० )

“अर्थकारके पोखरी गाथा ने कोजे पदे पामर करसाजी  
 पामर करसाओ नौ अलि पंक्ति से से कहे से एक कद करी ने मूँछ  
 एकल अर्थ कइतु चिरी इरामी गाथा ने अले मीते पदे दोष निहण्य  
 जिहां एक कल तो दोष तुं निहण्य कहिये ए अर्थ कइतु चिरी वा  
 लिखी ने दोष तुं निहण्य निहण्य भया पइतु अर्थ करी दीखु  
 चिरी आठमी गाथा ने कोजे पदे जगद्विषय निवारक पद तुं अगत  
 ने विचनकारी से निहारी ने पइतु अर्थ करी दीखु तेतु अर्थ मानी  
 बुद्धि प्रमाने लिखतु ते जोख्यो. आनंदधन तु आनंद्य आनंदधन  
 साथे गइतु  
 ( श्री ललि जिन सा० वाला० )

“अर्थकारके ‘जग केज ए आनंद एकज’ ए तीली गाथा तु  
 अर्थ विरुद्ध पर विरुद्धय न कइतु ए एकल गथा मां अर्थ ठिकामै

निरपेक्ष कल्प सिद्धी लुं प्रथम नद केजोति ★ ★ ★  
 ए कए सिद्धालुं लुं कर्म ए एक स्थानके लिखुं पर अन्य  
 स्थानके लिखुं केहु केजुं क लिखुं पर मोटा

( मुनिमुखा जिन स० बाल० )

कर्मकर्तों के के स्थानके के के विद्वद् लिखुं ते ते मारै  
 लुं मुनै मोटाधोना कर्म नो कप्रमान केजलोक लिखुं पर कर्म-  
 कारके कर्म करै अलग ही लिखुं नहीं । कर्मकार मां  
 विचारय अलग अलग है यथा—सदा सिद्धिप्रदाय मीपल  
 राजा—कुरुक्षेत्र के तो बाह्य सत्ता विवरय करता हम लुं प्यो ने  
 कर्मकारके कर्म करता लिखुं आत्मा भी सत्ता ने कर्ता नो  
 विवरय आत्मा मां सिद्धिदान है ए लुं लिखुं इसी तो आत्म सत्ता  
 ने विवरय करता लुं रहस्य कर्तुं तेही संकल्प योग केई आत्म  
 सत्ता मा विवरय करत कदा बिरी पक्षी आगल पक्षी “जही  
 हुग बंग” केहु कर्मकारके लो नो लघुनामान्य कर्म कर्ता  
 सचकार नो रहस्य लो हुग बंग कम ए ने बंग लो—लामी नाम  
 पामी बिरी एही आगल लोही गथा मां जीजो पद लोकासेक  
 कर्तांकल मलिये लुं कर्म लिखुं लोक ते पंचाक्षिप्रपात्रक  
 अलोक ते कर्ताक्षिप्रपात्रक वा लोक ते रूपी इत्य अले अलोक  
 ते अरुपी इत्य इय लिखुं ते मेद लोका नीमांसक कदा तेमा  
 पंचाक्षिप्रपात्रक लोक मां लुं मेद अलोक कर्ताक्षिप्रपात्रक  
 मां लुं कर्मेद बिरी वा लिखने लोक अलोक लुं अरुपी इत्य कर्म  
 लिखुं ते सौम्य मीमांसक मां पंचाक्षिप्रपात्रक वा रूपी अरुपी  
 इत्य एक लोक मां लुं सम्भव पर लिखिवा अलगा गथा लिखिवा

लेखक अटकावही नहीं एक रहस्य विचारों अन्तर्गत है किरी  
आमल पित्त पत्ते डिक्करी इयज लिखतुं है मे तमे ए टम्बामा अर्थ  
अने ते टम्बा नो अर्थ जोह नै विचारस्यो तहसे प्रकट अन्तर्गतस्यै  
एया है निबन्धिते जारी मूह मर्ते लिखतुं है पर कर्ता नो गंभीरात्म  
कर्ता समनै० ( नमिनाथ स्वयन वास्त० )

“अर्थ करै अर्थ लिखतै” जित्त ओची तुम ने जोहं पित्त ओची  
ओची राज एक बार तुमने ओचो-ए चो ने दोष कलनकै ओचो  
राज तुमने ओचो राज नो अर्थ लिख्यो तुम ओचो हे राजन्  
तुम नै ओचा नो अर्थ लिख्यो, को पोनना दस मास तुम ने  
ओचो निराओ अहं पालो नो विचारओ ह्यो ए कविराज राजन्  
तो अर्थ भिन्न भिन्न तुमनेके दूषण दूषित पर योजना करता की  
रहो। तेचो मल्ल अहं तो अहं विचारुं ह्युं पर केह बार ओचो  
ओचो अर्थ करी ने केमल कई गया। “किरी एक तुमने बटु  
कयी” तिरां तुमने ए अहंराज्यो है परकल आख्या पित्त पाइ किरी  
गया ए स्वामी तुमने कर्त लोक की प्रकट मते किरी कविराज की  
नो अर्थ लिख्यो प्रमूजीये पोला नो कविराज ह्युं बाबा ने ए  
प्रमू निमित्तो क्य बस्यो मुं प्रमू ए बस्यो एको बचन राजीमली  
नो ह्ये पर कविराज्यो गयो। ( जो मेमि जिन सा० वास्त० )

चन्द राजा राज की समालोचना :—

अठारहवीं शती में कवि मोहनचिन्मय एक प्रसिद्ध कवि हुए हैं,  
जिनकी कविताय राम—बीपार्थ स्वयन्दि की भाषा कृतियों वरलब्ध  
हैं। गल तीन शताब्दियों ( १७ वीं से १९ वीं ) में राखे का खुल  
प्रचार हुआ है। और हजारों की संख्या में भाषाकृतियां निर्मित हुई।

ज्वालामय में 'रातः एव' सम्बद्ध अथवा रात्रि के समय भोला लोगों के सम्बद्ध रात वाकर कथा विवेचना करने की प्रशस्ती यति समाज में प्रचलित + थी। सतराही राजाजी के नैषध कल्प दृश्यादि के निर्माता विद्वान् आचार्य श्रीजिनराजशूरिका 'अवाम् वचनी' के रूप में देवचन्द्रजी इस सन्तु समाज के ठगने के आइसखों में नाम था, चुका है। आपकी राजिमद्र चौधरी जैव 'समाज में स्रष्टा प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी थी। इसकी सचित्र प्रतियां भी पर्याप्त संख्या में उपलब्ध हैं। श्रीमद् ज्ञानसरणी के जिले अनुसार बौद्ध-विजय जी ने राजिमद्र चौधरी के अभिलेखिता में हीन विज्ञान के लिए की कथित कथा चन्द्र राजा के रात' की सं० १७८३ में रचना की थी। श्रीमद् ने इस ज्ञति की समालोचना की ही विद्वत्पार्श्व और अपूर्व ढंग से लिखी है। इस ज्ञति के इन्द्र-दोष-सम-विज्ञान में आकाशों का हीनविज्ञान, असंबद्धता, असंसार दोष, वामेयोपम व स्वच्छ पराच्छ वक्ता असंबद्धता का निरसन करने हुए हिन्दी के ४१३ दोहों में (जिनमें भी सर्वोच्च दृष्टान्तिये भी हैं) मार्मिक आलोचना की है - उन दोहों की पढ़ना प्रारम्भ करने पर खोदने की इच्छा नहीं होती,

+ तेराभी कज्जदाम में भाग भी चार्नुवास में रात्रि के समय रात एक घना बता है।

\* चन्द्रः वह जोर कहा प्रतीत होती है जब मैं भी इस पर काम्य मिलता है देखी जब धावली का वर्ष ४ सं० १०।

१ वर्ष करन कारण करी, बौद्ध चंद्र चरित्र

रात चरित्र रचना थी, रात चरित्रो संख्या : ३।

राजिमद्र जी चौधरी रचना हीन विज्ञान का कारण व चौधरी रची पर रचना में अंतर रात्रि काय केव केराली है।



इसमें केवल दोषों का उद्घाटन ही नहीं है अपितु अपने आत्मनिष्ठ हेतु बुद्धि और उपमाओं से कुछ दोषों को व्यवस्थान द्वारा कर आलोच्य राजा की सोमा में नौदुर्गती अभिवृद्धि की है। अपने हाँ को यह एक ही रचना है और समालोचना का आदर सपदिष्ट करता है पाठकों की जानकारी के लिए यहाँ उनके छोटे से अवतरण दिये जाते हैं।

काव्य १ पाद्या १३ की तृतीय पद्य में—दृष्ट आलिका धई—कत्यों गूँधी पर आलियो राजा किम समानै छिद्र झोल लेखी बारी गूँधी पोष्य हुती पर कवि की योजना मात्र पद्यक रुपि नी लई।

कपड़ पर पड़ को, न कर सके कवि यह,  
सो दूषण कलंकार को, कैसे करे प्रयत्न

★ ★ ★

इह दूषण कलंकार के, विवरण करे न जाय  
इस दो को पट इस की, कौनों अधिक कहाय

★ ★ ★

निह निह चन्द चरित्र को, नाम लेत कविराय  
चोरी प्रगटै कोर कै, तो ॥ सौजन्य काय

★ ★ ★

इह कवि लेते जान है, तैर जैसी बुद्धि।  
होय तने को कथन है, बाकी सुहावुनि  
अपनी बुद्धि प्रमान पर, कवि कविता कर जेत।  
देखत कवि ब्रह्मदि सख, दूषण मूफन देख । १।

मर्ग वाच वाचक शरभः कम्प्य पर शर्मैव  
 स्वर पद्म देहादिभ्यः, पर कवि नर लक्ष्मि । ३ ।  
 सिद्ध में ज्यों कृष्णों, सिद्ध में ज्यों पद्म  
 को गज घोरा को लक्ष्मी, घोरा कौन गमन्द  
 कर्ता कलमब मो, संभव करै है ।

तुलौ दोरो लै

नौ बरस का संव रहे, आया रहि अवशेष  
 खेल बरस दोरो निमै, अपराज पाही विशेष । ४

इस ग्रन्थ में सुभाषित व लेखनियों का भी समावेश करने के साथ साथ उपमाओं को लक्षित करने में अर्जुन रचनाशैली व पण्डित का परिचय दिया है ।

कविवर बनारसीदास जी के सम्बन्ध में आई हुई कतिपय पञ्चानुवाद व विविध नव सम्बन्धी मान्यताओं की आलोचना आपने भाष्य पद्विधिका तथा विविधशक्ति आत्मप्रबोध क्षीप्ती में सुजन सौख्य व भाषाद गुण युक्त कवित्वों में की है । जिन्हें पाठकों को इसी ग्रन्थ में पढ़कर स्वयं ज्ञात कर लेना चाहिये ।

चिह्नता :—

आपकी अपने समय के व्यक्तित्व के विद्वान और गीतार्थ से । आपकी की कृतियों में आत्मज्ञान, अनुभवज्ञान व छन्द-आलंकार कलादि प्रत्येक विषय का पण्डित्य मलमल है । जो जो आपकी कृतियाँ सभी विषय की हैं परन्तु आध्यात्मिक कृतियाँ सुमुखों को सन्तान आनन्द करने के लिये की ही व्यक्ती है । आपकी रचनाओं

में आपसी में वचनों का वह सहाय्य और अवसर देकर विषय को स्पष्ट किया है। इन अवसरों में जोरबिचार, कर्मवच, चैत्यबंदनभाष्य, समयसार, आवश्यक निर्युक्ति, पुण्यमाहात्म्यकरण, विशेषावश्यक, आचारंग, स्वाभंग, भगवद्गीता, उद्योग्यवन, अनुयोगहार, प्रसन्नभाष्य, देवकोश, भगवद्देवसूत्रि का सहा-  
य्य और स्तोत्र, सारसंग व्याकरण, तत्त्वार्थसूत्र आदि भाग्य प्रकरणों तथा श्री अलङ्कार श्री, देवचन्द्र श्री, चरित्रविषय श्री, हरचन्द्र पाठक, मोहनविषय श्री, जिनराजसूत्रि श्री आदि की कृतियों तथा केवलाध्य, पाणिनी, काकिल्या, कवीर, मर्दुरि इत्यादि के वाक्यों का श्री स्वान स्वान पर नामोद्वेगपूर्णक निर्देश किया है। आपने अपनी कृतियों के अवसरों को वचनों स्वानों पर दिये हैं जिनमें कतिपय उद्धरण तो आपसी कृतियों में प्राप्त हैं, अवशिष्ट "समुचित्य" या तो प्रासंगिक हैं या वे जिन ग्रन्थों की हैं वे ग्रन्थ अवश्य हैं। इस ग्रन्थ में आये हुए अवसरों को परिशिष्ट में देखना चाहिए। आपने स्वयं प्रासंगिक ग्रन्थवितर्क,<sup>१</sup> वास्तुता,<sup>२</sup> प्रभुति ग्रन्थों के परिशीलन का उद्देश्य विविध प्रलोचनार्थ ग्रन्थों में किया है।

१ कुप्रविष्टमिदं गेन दिनाकर उचित गेन व्याख्या वह प्राथमिक ग्रन्थ है। इसपर यदि रचना श्री भगवद्देवसूत्रि की कृतियों विविध टीका प्रकाशित हो चुकी है। श्रीरूप ने सद्यः प्रकाश के लिये मैं इस ग्रन्थ के ५५००० श्लोकों में से ४०० श्लोक सर्व शरीर का उद्देश्य किया है।

२ भारतीय वास्तुविद्या ग्रन्थों साहित्य बहुत विस्तृत है। इस

माया—

आपका अन्य राजस्थान (रिवाजत बीकानेर) में होने के कारण आपकी मातृभाषा राजस्थानी थी। आपने अपनी कृतियोंमें राजस्थानी तथा गुजराती मिश्रित राजस्थानी व हिन्दी भाषा का प्रयोग किया है। जैन कवियों ने अपने ग्रन्थों में गुजराती भाषा का प्रयोग इस्तीस्न किया है कि गुजरात-मारवाड़ आदि सर्वे देशीय आपकी व संघको वे रचनार्थ समान रूपसे उपयोगी हो सके। पूर्वकाल में गुजराती और राजस्थानी में आपकी भाषा अधिक अन्तर भी नहीं था फिर भी जैनाचार्यों के साहित्यपूर्ण गुजराती भाषा को प्रमाणमूल मानने का बीमर ने आध्यात्म-बीका के बाह्यप्रयोग में दिखा है :—

“बाह्यप्रयोग रचना रचुं, गूढरपर भी बाग।

‘पूजाचार्ये अति उत्तम, आपी करी प्रमाण।”

आपका राजस्थानी, गुजराती और हिन्दी भाषा पर तो पूरा अधिकार था ही पर मल, जालेरी, सिन्धु आदि भाषाओं की भी आपकी अच्छी अभिरुचि थी। पूरव देश सर्वत्र ईद में बंगला भाषा के शब्दों का भी निर्देश किया है। अब आपकी कृतियों का मायाओं की दृष्टि से वर्गीकरण किया जाता है :—

विषय से छोटे-बड़े लगभग २०० ग्रन्थ एते पाते हैं। बीमर ने प्रमेतर ग्रन्थ पु० १००५ में बाह्यप्रमाण नामक ग्रन्थ के २००० श्लोक एवं पदों का संलेख किया है। इस ग्रन्थ में सुनिर्माण के १५ प्रकरणों का वर्णन है। जो ग्रन्थ फिरसे रचित व कदा प्राप्य है, संश्लेषणीय है।

हिन्दी—इत्तीसी ४, पूरब देस बर्नन खंड, बंद चौपाई समा-  
लोचना, प्रस्ताविक अष्टोत्तरी, कामोद्दीपन, माहाविष्णु,  
निदानवाचनी, प्रतापसिंह समुद्रबद्ध काव्य,  
चौबीसी, ज्ञानसिंह आशीर्वाद, कटुत्तरी ।

राजस्थानी—संजोव-अष्टोत्तरी, आत्मनिन्दा, नवपदपूजा, बासठ  
सार्गवा, हेमदण्डक, आत्मनिन्दा, ज्ञानसिंह आशीर्वाद  
वचनिका, प्रतापसिंह समुद्रबद्ध काव्य वचनिका,  
विविध प्रश्नोत्तर नं० १-२, पंचसमवायविचार,  
विहरमानचौसी ।

गुजराती—आध्यात्म गीता बाळावचोप, साधुसुखसाय बाळा०, आ-  
नंदधन चौबीसीबाळा०, प्रश्नोत्तर ग्रन्थ नं० १ (हिन्दीके  
प्रश्नोत्ते उत्तर); आनन्दधन पद बाळा० आदि ग्रंथोंमें  
राजस्थानी मिलित हैं, कहीं-कहीं तो कुछ राजस्थानी  
भाषा हो लिखी है ।

गुजरावरे—आपकी भाषा कहीं गुजरावरेदार की जिसका यहां बोझ  
नमूना उपस्थित किया जाया है :—

“ये नगर सेठ की कई हाट में कान्हीं राख के लिख्यो छै ।  
बरमब भय सुनिहार बका केई मुझ करीआ इसी ही कहिता  
हुसी । बिना सुण्या आनीजै छै ये लिखी न हुसी.....” ये  
आध्यात्म गीता रा बाळावचोपमें बोझी लिख्यो सो कपर लिखियो  
जिणरो सारो उत्तर दरावसी । हुंयो परमाव रो राणी हुंयो हूयूं हूं  
आपरी कपासु जाझी हुंयो, इसो लिख्यो सो हुं वो जाझी होचरूं

पहले बर्तने आच्छाद कर लेख्यैपदिहो जायरी दक्षी दुष्कान्या पडै पातस्या  
ओ रो कुम्है छै इज रो कछर ओ छै" । (विनिष प्रश्नोत्तर नं २)

"अर पुरमायो तू अठै भुं बिहार रा परिणाम करै छै सो  
सर्वभाषकार बिहार कोई करल देहू नही अर मैं अरज कोनो हू को  
बोझानेर इगहीज कालज आबो ओ सो बने बीस बरस उपरंत  
अठै हुब गया सो म्हारो चिरी आब तर्हि कोई बोकछी नहीं,  
जिनसुं बिहार रा परिणाम हुवा छै ( जेसलमेर को हिये पत्र से )

रे चेतन तूं कासी कपति सो देख ! कोई बार मां पमै केई बार  
पुज पमै केई बार पुत्री पमो केई बार सखी पमो रे आरा नाच ली  
देख । ठगरी बेटी अछी को हे माताजी हे पिताजी हू इतरा पाप  
कर हूँ सो कुल भोगवसी, बेटी करसी सो भोगवसी, सो बिहार  
पडै इन संसार मै × × रे चेतन ! तूं करै हू. रे तूं कुन ? बिहा  
मांविही छट तूं होज हुबै । ( आत्मनिन्दा )

अर मैं कछो म्हाँरे सो मैज रो नाक छै हू को 'चमुकार विषमज  
नहीं' इसो पाठ कर देहू । ( भावपद्विशिष्टा टिप्पण )

पद्यवि भाष संस्कृत प्राकृतदि भाषाओं के ओ प्रकाश बिद्वान  
वे पर आत्मिक कर्मकार की दृष्टिसे आत्मने सारे मन्त्र देख भाषा-  
ओं में हो गिये । संस्कृत में रचित केवल दादासाहब की हो  
पूजार्थ तथा आत्मनिन्द आत्मीबादलक कवचव्य है ।

**भक्ति व कवित्व—**

भीमद का हृदय वाचकका से हो जिनैकर भगवान के प्रति  
भक्ति से व्यक्तोत बा । बीबीबी, बीबी तथा लयनादि पद्यों

में आपने बड़े ही मार्मिक रूप में भक्ति-बहुगार प्रगट किये हैं। कहीं दार्शनिक विचार तो कहीं कलाज्ञान और कहीं उत्प्रेक्षाएँ व आवावेश में बहोकि तथा स्वात्मन्य तो कहीं आत्मानुभव तथा शान्त, वैराग्य और करुण रस की भागीरवी कहावी है। बहुचरी व विहरमान बीभी में कहीं मतवाद स्थिति, कहीं आत्मदशा, कहीं रहस्यानुभव, तो कहीं सुरल प्रसुभक्ति तो कहीं क्यमाओं की छटा का निदर्शन किया है। बदाहरण कहाँ तक दिये जाय, पाठकों से अनुरोध है कि इसी मध्य में प्रकाशित कृतियों को आत्मसात् कर सौहार्मिक व आत्मानुभव द्वारा निहाले हुए नव-जीव का रसास्वादन करें।

### विचारधारा—

जीमूट को अपने दीर्घजीवन में कान्तानुभव द्वारा जो अनुभूति मिली, आपकी जीवनचर्या एक विदेश प्रकारसे खिल गयी। आपने जो कुछ लिखा वह परिष्कृत सत्त्विक और मंजि हुए होश विचारों का परिणाम था। बाद-विवाद, झिजा-कहाव और नाना प्रवृत्तियों के विषय में विचार करने से आपकी आत्मदशा बहुत ही स्व सेवी की विदित होती है। वर्तमानकाल में कुछ चरित्र को अपेक्षाकृत दुष्प्राप्य मानते हुए भी आप किसानों को एक आश्चर्यक अङ्ग मानते थे। अन्ध-विश्वास और पशुज्ञान के सम्भव से मोक्षमार्ग की सुलभता, निश्चय-व्यवहार मन्त्र-मन्थनीकी दौरके सहारा खींचने व दीक्षा झोड़नेमें मगल-लाग में आकाश में चढ़ते हुए परंग ३१

चारित्र्य का परिहार, आत्मविभूति इत्यादि विषयों पर लक्ष्मीजीयां चंद और बाह्यावरोधादि व्यापकी सभी कुलिका प्रेक्षणीय हैं ।

### लोकोक्तिों का प्रयोग

मीमांसा ने विषय का स्पष्ट समझाने व हेतु युक्ति व प्रमाणादि से प्रत्यक्षीकरण के लिये अपने ग्रंथों में लोकोक्तिओं का प्रचुरता से प्रयोग किया है । संक्षेप अष्टोत्तरी तथा प्रस्ताविक अष्टोत्तरी इस विषय के सफलता कदाहरण हैं । पाठकों को स्वयं इन ग्रंथों का रसास्वादन करना चाहिये । चंद चौपाई समालोचना भी इस विषय की प्रचुर सामग्री प्रस्तुत करती है । आनन्दवन चौबीसी तथा दूसरे ग्रंथों से कुछ लोकोक्तियां उद्धृत की जाती हैं :—

१ फिरे ते चरै, बान्हो भूक्यां भरै, २ प्राये प्रीत न बान्ह,  
३ वरुन हृत्य न बज्जह, दो हृत्यां तासी, ४ आस करियै तेनी  
आसंगो स्यो, ५ परना लक्ष्या पर्यी चारै, पान्डीचन नै पेड़ा ।  
६ पाझक बाही पीठि छाहीं, ७ रामीनी तुं बाय सरहुंही मझार ।  
अवनोक्ति—रीता भर भयां दुलछावै, अजभरिबा तुं फेर भरै ।

सुदाके हुकुम बिगर दरखतका पत्ता भी दिखने न पावै ।

दरखत का पत्ता भी ताबे हुकुम के है क्या मजदूर

बिगर हुकुम दिखे ।

छिन्दु देशीय—“दिख नंदर दरिमान, खंभी कमो ज्यो फिरे

हुम्मी मार मंझादि, मंझाही सामकं छरै । १ ।

हुम्मी मारल ही सझी सझां कसलां करल्य

म्यारो हीर न दिखयो हुम्मी से मारल्य । २ ।”



बचनोक्ति—दैवाने मोलरू मनुष्य दैवाने मुवळू पयू काजमत्  
 विहरमाण बीसो में बी इसी प्रकार कहावटों का प्रयोग  
 किया है। जैसे—

- १ “जासंगो किम कीजिये रे, करिये जेइनी जात”  
 ( सुगर्मवर स्तवन )
  - २ “जिम गहिछी नो पहिरणो हो” ( सुजातकिन स्तवन )
  - ३ “दूध दिपंती गायनी, काव सहू सई” ( चन्द्रबाहु स्तवन )
  - ४ “जिम भोजे कामछी रे, तिम तिम भापी होय” ( अतिथीवै  
 स्तवन )
  - ५ “ज्ञानसार मे पार चढ़ै नही काठ की रे” ( नेमजिन स्तवन )  
 चंद चौलाई समाझोचना के भी बीड़े से अवतरण देखिये—
  - १ “काछा झा खो उड़ि गया, बचका पैठा आव्य ।  
 दुखतोदास गढ़ पाछटै, जरा पहुँची आव्य ।” १ ।
  - २ “कनक कचोले दिन कछु, सिइनी पय न खाव”
  - ३ “पतंग वाला लिम्बा”
  - ४ बच्चों का खेल :—सुरज देवता लम्बड़ियोह काठे रे  
 लम्बड़ियोह काव, बारा बालकिना ठंडा मरै
  - ५ “छोटा दूल्हा परनछै, लम्बो होत सुराज ।”
  - ६ “को सुज को दुख देत है, पवन देत कछुमोर  
 कछुमै सुजके आपछो, बच्चा पवन के जोर । १ ।
- बीछनेर के बग्याण परमाने के तरबूने—बचारे अतिथीव  
 स्वादिष्ट और मीठे होते हैं। उनका वर्णन इस प्रकार किया है :—

★ "को जायें ब्रह्मण के, मति होत महीर ।

ओ मरुवाचरु वसत सो, जाणत गुरमि समीर ।"

पद्यार्थों की बोली जानने के विषय में प्रचलित लोक कथा:—

८ "तब दीक्षा पूँछा बड़े, कम पट मास पियंत

कन्मस सिन्धु पूँटी दिरै, बिद्वान बान समर्थत"

संक्षेपकछोचरी आदि कृतियां तो राखिया के रोहों की  
माति स्वयं ही सुभाषित रूप हैं ।

## रचनायें

जीमदू ने बाल्यकाल से लेकर वृद्धापस्था तक अपना जीवन  
गुरुद्वेषवास में बिताया था । कनकी शिक्षा-दीक्षा गुरुपरंपरा-  
गत विद्वानों के सत्सामधान में हुई थी । स्वकीय प्रतिभा और  
वत्सलधि मिल जाने से सोने में सुगंध वैया संयोग हो गया ।  
आपने सभी विषय के ग्रन्थों व शास्त्रों का अवगाहन किया  
था । अतः आप एक सर्वतोमुखी प्रतिभासम्पन्न और समर्थ  
विद्वान् वैभार हो गये । आपने जिस विषय को शिक्षा अधिकार  
पूर्णक देखनी पड़ा थी । आपके ग्रन्थों के परिशीलन से आपके  
गहरे शास्त्रज्ञान, काव्य, कोश, ईद, अर्थकार, व्याकरण, दर्शन,  
न्याय आदि सभी विषयों के सफटमेचा और पारगामी होने का  
सदृश परिचय मिलता है । जब आपकी कृतियों का संक्षेप में  
परिचय कराया जाता है ।

## भक्ति काव्य

कृति	रचनाकाल	प्रकाशित पुस्तक
(१) चौबीसी—सं० १८७६ मार्गशीर्ष सुदि १५ बीकानेर १-१२		
(२) बिहरमानवीसी—सं० १८७८ कार्तिक शुक्ला १		बीकानेर १३-३०
(३) स्तवनादि भक्ति पद—संख्या ३०		११३-१३३
(४) शत्रुघ्नच स्तवन—सं० १८६६ फाल्गुन वदि १४		१३५-१३६
(५) बाबासाहेब के २ स्तवन—		१३४
(६) पार्ष्वनाथ—महावीर स्तवन ( आनन्दधन चौबीसी ) बाळाबखोब	सं० १८६६	

## छात्रीयविचार गर्भित

- (१) छात्रीविचार स्तवन सं० १८६१ माघ अशुक्ल अक्षयतृतीयादि
- (२) नवतन्त्र स्तवन सं० १८६१ माघ वदि १३
- अशुक्ल अशुक्ल " "
- (३) दण्डक स्तवन सं० १८६१ चौथी शुक्ला ७ अशुक्ल " "
- (४) हेमदण्डक सं० १८६२ मार्गशीर्ष शुक्ला १४
- (५) बासठ मार्गशीर्ष अन्त रचना स्तवन सं० १८६२
- चैत्र शुक्ला ८ रागा ११२
- (६) ४७ बोझागर्भित चौबीसी सं० १८६८ दोषावली
- (११६१ स्तवन रत्न मञ्जरी)

## दासोन्निक

(१) यह दर्शन समुच्चय भाषा—यह ग्रन्थ प्राप्त नहीं है, एक सङ्ग्रह में—जिसमें ४० श्लोकार्थित चौबीसी के स्तवन व पद भी हैं—निम्नोक्त अंतिम काव्य मिले हैं :—

चन्द्राधनी—बुद्ध नवाङ्क सांख्य जैन दर्शन करै

जैननीय वेरोच मिलै ते यह छहै

इन यह हूँ को विम्व विम्व करनन करै

गिरबानी ते ज्ञानसार भाषा करै ॥ १ ॥

दोहा :— गिरबानी भाषानते, बड़ी बीच ते बीच ।

पुरुष अम्भावस कहाँ, वज्रक वज्र अतः(किह) बीच ॥ २ ॥

कोय कहैगो बावरी, कोय कहैगो मूढ़ ।

इसे विम्व सिद्धि की तूँ क्या जानै मूढ़ ॥ ३ ॥

बुद्ध मुनीजन सागरे, गुरुर छेद कर दीन

दोरा परज्यों मैं बलिकरी, कौन नवाई कौन ॥ ४ ॥

नयमग सोच विचारियै, अति बीचम नयबाद

आगम की गुरुमग नहीं, अति मोटी विचबाद ॥ ५ ॥

छरक विचार विचारियै, बाद विबाद अविबाद

अनुमग ते रस पीबियै, यह हूँ को इक स्वाद ॥ ६ ॥

## प्रस्ताविक

१ संशोध अष्टोत्तरी सं० १८३८ ज्येष्ठ सुदी ३ दोहा १०८ पृ० १६३

२ प्रस्ताविक अष्टोत्तरी सं० १८८० शोक्लनेर " ११२ पृ० २०६

३ गूढ़ बावनी सं० १८८१

१४ पु० २६३

इसका दूसरा नाम निदासबावनी है। पं० बीरचंद के शिष्य निदासचंद को महेश्वर कर इसकी रचना हुई है। इसमें गूढ़ार्थ प्रहेलिकार, मुक्तिय की गई है जिनका कवर कुटमोट में छिप दिया गया है। ये प्रहेलिकार बौद्धिक विकास और मनोरंजन का उपयोगी साधन है।

### छत्तीसी, बहुचरी आदि

१ आत्म-प्रबोध छत्तीसी

पद्य ३६

पु० १६६

२ मति-प्रबोध छत्तीसी

गाथा ३०

पु० १५६

३ भाव चटुचरिका सं० १८६६ का० सु० १

कितानमात्र गाथा ३६

पु० १४०

४ चारित्र्य छत्तीसी

गाथा ३६

पु० १६६

५ बहुचरी पद ५४

पु० ३१ से ५६

६ आभ्यासिक पद संग्रह पद १०

पु० ६६ से ११२

### गद्य रचनाएँ

१ आनन्दघन चौबीसी बाऊलबोध

२ आनन्दघन गीता बाऊलबोध सं० १८८० बीकानेर पु० २८१ से ३२६

३ साधुसमाज ( देवचन्द्रजी कृत ) बाऊलबोध प्रकाशित  
श्रीमद् देवचन्द्र भाग १

४ चरित्रविजय कृत उत्तमार्थ गीत बाऊलबोध

पु० १८०

५ जिनमल व्यवस्था गीत बाऊलबोध

पु० ८० से ६४

६ अष्टमनिन्दा	पृ० २१८
७ पंचसमवाय विचार	पृ० २७१
८ हीमावली काळावबोध	पृ० १७७
९ आनन्दवन पद काळावबोध ( पद १४ )	पृ० २२४ से २६२
१० विविध प्रश्नोत्तर ( १ )	पृ० ३६७ से ४०७
११ विविध प्रश्नोत्तर पत्र ( २ )	पृ० ४०८ से ४२९

### पूजा साहित्य

१ नवपद पूजा	पृ० ४२६
२ श्री विनङ्गराजसूरि अष्टावकरी पूजा व० श्रीविनङ्गराजसूरि चरित्र	
३        "                        "	प्रकाशित पृ० २७६

### छंद विज्ञान

महापिङ्गल—पिङ्गल के छंद विज्ञान पर आधारित १६४ पद्योंमें यह ग्रन्थ रचकर सं० १८५६ फागुन कृष्ण ६ को बीरवा-  
देरमें पूर्ण किया। इसकी रचना कवचीय, सुन्दरजाकर, चिन्तामणि  
आदि छन्द मन्त्रों के आधार से हुई है। अक्षरवाली ( नाछ )  
के १०८ मन्त्रों और वेद के मिलाकर कुल ११० छन्दों की  
रचना होने से इस ग्रन्थ का नाम श्री 'महापिङ्गल' रखा गया है।

आदि-दीप्ता—श्री अर्चिर्वत् सुशिद्ध पद, आचमन उपमाय ।

सरस लोक के साधु कुं, प्रसन्न श्री गुरु पाय ॥१॥

प्राकृत तें भाषा कर्त, महापिङ्गल नाम ।

सुखे बोध वाचक सबै, परसस को नहि काम ॥२॥

असीमाय सागर खड़े, जगमा कैयें होय ।  
 झुत पूरव जगदै सखल, है जगज हूँ जोय ॥३॥  
 जो विद्या सब जगत की, इनमें रही मिलाय ।  
 नदीनाथ के पेट में, ज्यों सब नदी समाय गता ।  
 विमल विद्या सब प्रगट, नामराज में कीन ।  
 लोग बहिर जुड़े कहे, पुन विचार अति कीन ॥४॥  
 सेवनाय बाणी रहित, जुनि विवेक में हीन ।  
 हनु दीरघ गल जयज की, संकलना किम कीन ॥५॥  
 जगद जुगिहा जगत में सेवनाय है मुख्य ।  
 जग साख रचना रचै, सो नहि निपुण मनुष्य ॥६॥  
 ए सब कल्पित बात है, विद्या जगद विधान ।  
 पूरव है जगमें मयो, पद बाधा को जान ॥७॥

अंत—आदि मध्य संगल करण, संपूरण के होय ।

अंतिम संगल हूँ कहे, जगज कवि संगैत ॥ १४४ ॥  
 जो दधि मंथन की किया, ताको जोड़ूँ सेद ।  
 मौलान जिसमें मंथन को, जगम सेद निवेद ॥ १४५ ॥  
 परि समाप्ति मधि आई, हूँ कृपा व्यापार ।  
 नौका बिन दधि सिरनको, को करि सके प्रसार ॥ १४६ ॥  
 जंझूरीपे मेर सम, जवरन को खुंग ।  
 खुं शरीरमें गच्छ सखल, सरतर गच्छ वरमय ॥ १४७ ॥  
 गीर्वाण्वाणी आरदा, मुक्त से आई प्रगट ।  
 दाते सरतर गच्छ में, विद्या को आर्यद ॥ १४८ ॥

ताने दिशा समान विमु, जीजिनसामसूरीत ।

ज्ञानसागर धामा रची खरखर गनि खनि ॥ १४६ ॥

चौपाई—संवत्त काये फिर मय देव, जयजन माये सिद्धसिद्धेय ।

फगुन नवमी उज्जल पक्ष, कीनी उज्जल लक्ष विपक्ष ॥१४७॥

रूपदीपते भावन किये, वृत्तरत्न ते केते छिम् ।

चिहामनि ते केद देव, रचना कीनी कवि मति पेख ॥१४८॥

बहिं वस्तारन कर बहिं, मेव मर्षटन कियो मह ।

आहुन काशीन पवित्र लोक, मय कटिज छलि देई कोक ॥१४९॥

बोहा—इक सौ आठ दो मेरके, वृत्त फिर मति मय ।

बाहें बाकुं बाबिपौ, माये बाळा खंद ॥ १५० ॥

॥ इति बाळानिगळ खंद संपूर्णम् ॥

**समालोचना :—**

खंद चौपाई समालोचना—कवि मोहनविजय को चन्द राखा चौपाई पर विराड् आलोचना लिखकर श्रीमद् ने हिन्दी साहित्य की बड़ी भारी सेवा की है । हिन्दो में संभवतः इस दिशा में यह पहला व्यत्न था । सं० १८७७ मिरां चैत्र कृष्ण ९ को बीकानेर में ४१३ पत्तों में इसकी रचना हुई । इसका कुछ विवरण 'समालोचना' रूप में श्रीमद् का परिचय कराते समय दिया या हुआ है । यहाँ मूल के आदि और अन्तिम भाग उद्धृत किये जाते हैं ।

आदि—५ निचै निचै करी, छलि रचना की माय ।

खंद अठ्ठकारै निगुन, नहिं मोहन कविराज ॥ १ ॥



बोधा लंदे विस्मय पद, कही लीन दस मात ।  
 सम में थारै हू परै, लंदे गिरै क्षात ॥ २ ॥  
 सो ली पड़िछै ही पदै, मान रची दो बार ।  
 अलंकार दूषण निरु, क्षिप्त पदत विस्तार ॥ ३ ॥  
 प्राकृत विद्या में निपुण, यदि बाकी पद हेत ।  
 प्रथम शब्द दो जानके, एक पदम कर देव ॥ ४ ॥  
 ऐसे केले जानके, मात्रा अविधी देव ।  
 एक जानके छिन्न दिखी, कौनों छिन्न अशेष ॥ ५ ॥

अन्त—यट विनयटनी यटकत, यटता बिना यटत ।

अन्योन्ये असंबद्धता, लोही चंद चरित ॥ १ ॥  
 बायें सीधूं, मधुरता, रचना बचन संबन्ध ।  
 सुगंध छोक पाते कही, सबलें मित्र प्रदन्ध ॥ २ ॥  
 कविता कविता शास्त्र के, सम्मत् मूष्य देव ।  
 अलंकार दूषण लक्ष्मी, सबले अव्यं विरोध ॥ ३ ॥  
 हीनाधिक मात्रा पदै, क्षिप्त देव को दोष ।  
 लंदे गुरु मात्रा बदै, सो शास्त्रे निरदोष ॥ ४ ॥  
 पद आवै लंदे गुरु, लंदे ही लघु दोष ।

हीनाधिक मात्रा बदै, लघु गुरु मानो सोव ॥ १ ॥ इत्यादिपाठः  
 पर कवि कृत कविता बहुत, नई कलन को हेत ।  
 परमेश पद्धता बोलवा, कुछ परीक्षा देव ॥ २ ॥  
 दूषण सब कवितानि के, मूषण विपुष लंदेव ।  
 करवर बदने कृत्य सब, नयनहीन न लक्ष्मि ॥ ३ ॥

ना कवि की निंदा करो, ना कल्लु राखी कान ।

कवि कुत कविता सात्य के, सम्मत लिखी सचान ॥ १ ॥

दोहाधिक दश प्यार सै, प्रस्तावोक नयोन ।

खरखर भट्टारक गखै, खानखार लिख दीन ॥ ३ ॥

भय भय पयपय माय सिध, मान काम लिख होय ।

चैव किशन दुखीवा दिने, संसृष्ट रस बीध ॥ ४ ॥

इति श्रीचंद चरित्रं संपूर्णं । संबन्धवत्तुविद्वान्यष्टादश शतानि  
प्रमिते मासोत्तम मासे क्षेत्र कृष्णकल्पादिषौ मासकृत्वा  
श्रीमद्गुरुदेवस्य गच्छे पं० आणंदविनय मुनिस्तुष्टिस्तु पं० कछ्वा  
पीर मुनिस्तु पठनार्थं निर्दिष्टि । श्री । श्री सूर्यचरणधर मध्ये ॥

इस प्रति की पत्र संख्या ८० और मोतसर के पत्रि ६० श्री  
सुमेरमछत्री के संग्रह में है । अक्षर सुन्दर व सुवाच्य हैं । हाथों  
के किनारे पर लक्ष राम की अन्धान्ध हाथों के बड़ाहरण हैं ।  
अनेक स्थानों में कठिन शब्दों पर लिपिही भी लिखी हुई हैं ।  
खानखारजी के दोहे आदि सूत्र के चारों ओर=संकेतों के साथ  
लिखे हुए हैं तथा पंक्ति व गाथा का भी निर्देश किया हुआ है ।

### अलंकारिक वर्णन व वचनिकार्य

प्रतापसिंह समुद्रबद्ध काव्य वचनिका—यह कृति जयपुर  
ज्योतिष प्रतापसिंह के वर्णन में ३२ दोहों में चित्रकाव्य रूप में  
रचा है । अन्त में कद्दायना शब्द दिये हैं । इसी को वचनिका  
काव्यावरोध टीका बड़ी मयूर राजस्थानी भाषा में लिखी है ।

कामोद्दोषन—यह ग्रन्थ वि० सं० १८१६ मिस्री चैत्र शुद्ध ३ को जयपुर नरेश ववापसिंह की प्रशंसा में बनाया गया था। इसकी भाषा कुछ हिन्दी है, कवना-लक्ष्मणों की छटा और कवि की प्रतिभा पद-पद पर झलकती है। कामदेव के साथ महाराज की तुलना करते हुए जीमद ने इसका नाम भी कामो-द्दोषन रखा है। इसमें दोहा व सवैयादि कुछ भिन्न कर १०० पद्य हैं।

आदि—तारिन में चन्द जैसे मद्गम दिन्द तेरे,  
 मणिनि में मण्डि लों मिरिन मिरिन्द ।  
 सुर में सुरिन्द महाराज राज कन्द हू में,  
 माधवेश नन्द लुका सुरवद लुकन्द यू ।  
 धरि करि करिन्द मून भार की कमिन्द मनौ  
 जगत को बन्द सुर तेज तेन मन्द यू ।  
 आशय समन्द इन्दु लौ पुंव क्याकौ  
 मदन कर गोविन्द प्रतपे प्रताप नर इन्द यू ॥१॥

कान्त :—संज्ञा सम्बन्धी दोहा :—

रस सर अरु गज इन्दु कुनि, माधव माध उदार ।  
 सुकल लीज विष लीज दिन, जयपुर नगर मन्दार ॥२॥  
 बड़ सरसर जिनसाब के, शिष्य राज यधि राज ।  
 ज्ञानमार मुनि मन्दमति, आग्रह प्रेरण काज ॥३॥  
 मन्द करौ पट रस भरी, वरनन मदन अलौह ।

जसु मातुरिता में जगति, संस्र संस्र मई लख ॥४१॥

सुधरनि जन मन रस दिखै, रस भोगनि सहकार ।

मदम लोभन मन्य बह, रन्धी कन्धी लीकार ॥४२॥

अय करता करता है, यह कवि बचन बिहास ।

ऐ या कवि को कन्ह है, है हम लखे दास ॥४३॥

इति श्रीमद् बृहत्सत्कार गच्छे पं । य । श्री ज्ञानसार सिद्धिरचितं  
कामोद्दीपन मन्य सम्पूर्णम् । संवत् १८८० वै० सु० ३ श्री बीकानेर  
दि० । पं० । लक्ष्मीविकास ।

पूरव देवा वर्णन छन्द—यह मन्य ११३ पद्यों में है । वेङ्कटी  
वर्ष पूर्व बंगाल का, चित्तौड़ कर मुर्शिदाबाद जिले का  
वर्णन छन्द की तरह इस कवि ने लिखाकर कवि  
ने अपनी अमूर्तिम प्रतिमा और वर्णन छन्द का  
अच्छा परिचय दिया है । इसका साहित्यिक व  
सांस्कृतिक महत्त्व जानने के लिए पाठकोंको प्रस्तुत  
मन्यके अन्तमें प्रकाशित इस कृति का स्वयं पठन  
करना चाहिए ।

### प्रकाशित कृतियाँ

श्रीमद् की कृतियों में इस प्रकारके अनिर्विण्ण कविपद्य रचनार्थ  
अन्यत्र प्रकाशित हैं । जिसमें १ जीवनविचार स्त० २ नवतन्त्र स्त०  
३ दृष्टक स्तवन हमारी ओरसे प्रकाशित समयरत्नसार में, ४ देव-  
चन्द्रकी छत्र साधु सम्झाय तथा श्रीमद् देवचन्द्र भाग २ में

तथा ६ आत्मनिष्ठा, पंचप्रतिष्ठासमय की पुस्तकोंमें मूल तथा इसका हिन्दी अनुवाद भी प्रकाशित हैं। बादासाहब की पूजा, श्री जिनदत्तसूरि चरित्र ( कतराहट ) व जिन-पूजा-महोदधि में प्रकाशित है। श्रीआनन्दधनजी कुल चौबीसी के बाळाबबोब के कई संस्करण मित्त-मित्त खासों से प्रकाशित हुए हैं।

आनन्दधन चौबीसी बाळाबबोब को आषाढ भीमसी मासिक में प्रकाशित हो किया है पर वह संस्करण सर्वथा भ्रष्ट और परिवर्तित रूप से प्रकाशित हुआ है। श्रीमद ने बाळाबबोब की भाषा राजस्थानी मिश्रित हिजले के साथ साथ इसमें श्री आनन्दधन जी आदि के पदों के अवतरण, प्रसंगानुसार भावों के स्पष्टीकरणके हेतु स्वनिर्मित दोहोंको "मधुक्ति" की संज्ञा से संयुक्त लेकर कृति को विशिष्ट चमत्कार पूर्ण बना दिया है। इसमें श्रीमदने आनन्दधनजी, जिनराजसूरि, बरोबिजबजी, मोहनविजयजी, देवचन्द्रजी, काहिदास और कबीर की कृतियों के अवतरण बहुत किये हैं जिससे साहित्यकी दृष्टिसे भी इसके महत्वमें अभि-वृद्धि हुई है पर प्रकाशक महाराज ने इन सुमधुर कृतियों को निकाल कर कुल का साथ इरन कर दिया है तथा भाषा को भी वर्तमान मुकराही का रूप दे दिया है। जिससे राज्याधीन भाषा, लेखनपद्धति और आत्मासुमन तथा उत्कर्षी बच्चों के आस्थादन से पाठकमन्य वञ्चित रह गये हैं। श्रीमदने जहाँ भी ज्ञानविमलसूरिजी के बाळाबबोब की आर्मिक समालोचना की है, प्रकाशक महोदय ने इन बाक्यों को सर्वथा निकाल

देने में ही अपनी सफलता समझी है। इससे श्रीमद् की समा-  
लोचन पद्धति और बंधायी स्पष्टवादिता अन्धकारमें अन्तर्हित हो  
जाती है। प्रकरण खोजकर भाग १ की प्रस्तावना में प्रकाशक  
महोदय लिखते हैं कि :—

“चौथी ग्रन्थ श्री आनन्दधन जी महाराज कुछ चौबीसी नो  
हे अने ते बाळाबबोब सहित हे। अभ्यास्य ज्ञान या शिक्षर  
कर विराजमान करदा श्री आनन्दधनजी महाराज अने तेमनी  
चौबीसी अग्रजसिद्ध हे। तेमना अभ्यास्य ज्ञान विषे अत्रे  
विशेष लक्षणांनी कार्यरत आनन्दधनका नवी। बड़ी साक्षर  
पुस्तो ज्यारे तेमनी चौबीसी बाबि हे तथा हेतु अभ्यसन करे  
हे ह्यारे तरत तेमना अन्तःकरण मां अभ्यास्य ज्ञान नो विकस्य  
प्रगट भाव हे चौबीसी कर ने बाळाबबोब बाचीन गुजराती  
भाषा मां छापयेछो होवा बी तेनो आधुनिक गुजराती भाषा मां  
सुबराची अने आ ग्रन्थ मां छापयेछो हे। कारण के ते प्रभाषि  
करवानी सूचना अमने अनेक अभ्यासित्री तरत बी बयेछो  
हयो। ते सूचना अमने वास्तविक छाववा बी सरकार नो हेतु  
जायी तेन करेछ हे अने ते प्रभाषे करता बाळाबबोब कडां बयानेछो  
आशय तेन भाव पण दूर करवा मां जायेछो नवी जेवी  
अभ्यासित्री ने ह्ये ज्ञान नो उत्तम प्रकारे समज बवा संभव हे।

२२ स्तवनों के अर्थ पूर्ण करते हुए प्रकाशक लिखते हैं कि—  
इति श्रीआनन्दधनजी कुछ बाचीसी। आ बाचीछ स्तवज नो  
बाळाबबोब ज्ञानसारजीय कुण्ठाद मां रही संवत् १८६६ ना

भादरवा सुद १४ ना रोज सम्पूर्ण कर्षों से प्रमाणे आराध छद्  
 क्षापण भूख गई होय से बाचनारे सुधारी बाचयुं । बड़ी बीड़ी  
 प्रत ऊपर आनन्दधनजी ना लेखा वे स्वयनो हठा से पोतानाज  
 करेला हठा अने तेनी ऊपर ज्ञानविमलसूरि बाळाबबोध कर्षों छे  
 से हवी पड़ी ज्ञाया छे "अबपद रामी हो," "बीर जियेसर  
 चरणे छागुं" इत्यादि । अर्थ—इतिमी महाबीर जिन स्वयनः श्री  
 ज्ञानविमलसूरि श्री ए बाळाबबोधन चौबीसे स्वयनो ऊपर कर्षों  
 छे । देवचन्द श्री ए कर्षों नवी अही ज्ञानसारजी को बाळाबबोध  
 ज्ञान्यो छे अने हवे पड़ी ना तेमनाज वे स्वयनो छापेला छे—  
 वासजिन ताहरा रूप तुं, चरम जियेसर ।

प्रकाशक महोदय ने बाळाबबोध कर्षों की प्रशंसा भी प्रका-  
 शित नहीं की । सम्भव है ज्ञानविमलसूरिजी पर की हुई स्पष्ट  
 आलोचना ने प्रकाशक और अभ्यासी महोदय को आलोचना  
 का अर्थ निकाल देने को प्रेरित किया हो ।

प्रकाशक महोदय ने जिन दो स्वयनों को आनन्दधन जी का  
 सूचित किया है वे श्री ज्ञानसारजी के बाळाबबोध में दिये  
 अनुसार श्रीमद् देवचन्द्रजी कुछ प्रभावित होते हैं—

१ वह बाळाबबोध भी परिचित रूप से प्रकाशित हुना है । जैन अर्थ  
 प्रसारक समा द्वारा "आनन्दधनजी कुछ चौबीसी लखतुक तथा बीस  
 स्वायत्त तप विवि नामक पुस्तक में छपी है । हमने ज्ञानविमलसूरिजी  
 कुछ चौबीसी बाळा= लिखा है पर वास्तव में वह बाळकचन्द वेला  
 भाई हत ही है । समा के प्रकाशकोंने ज्ञानविमलसूरि का नाम न  
 मान्य अर्था से लिख बाळा है ।

आनन्दधन चौबीसी के २० स्वयनों पर कर्षोविमलजी के  
 बाळाबबोध रूपों का उल्लेख मिलता है पर वह असम्भव है ।

“भवद्मा सुवसना ना जंघा भी सिद्ध नै तिसै बजागर  
अवस्था होय विम देवचन्द्र सविधि”, आनन्दधन नो चौबोली  
महावीरजी की कवना में कहु” — “आनन्दधन प्रभु जानै”  
( मल्लि जिन स्तवन वाङ्म० में )

“होय सबन आनन्दधन नाम ना अइमराबाद ना मंडार  
माहि भी, होय ज्ञानविमलसूटि होय स्तवन देवचन्द्र सविगी कृत  
होली ने मारी मति सबन रचना करवाने कइसो इति सटक  
[ पार्श्वप्रभु स्त० वाङ्म० ]

“आनन्दधन प्रभु जानै” यह जो देवचन्द्रजी कृत कवय  
सूचित किया है वह ठीक आनन्दधन नामात्मक स्तवन में प्राप्त  
होया है अतः यह कवि श्रीमद् देवचन्द्रजी कृत होनी चाहिये ।  
श्रीआनन्दधनजी ने बसोसम्भव २२ स्तवन हो रचे होंगे । व  
महावीर स्तवन जो जो पूर्ति स्वरूप रचे गये उपलब्ध हैं, इनका  
बगीकरण इस प्रकार है—

पार्श्वनाथ स्तवन

आदि यह

प्रकाशक—

- १ प्रभुसुं चर्यंकव पार्श्वना वा० ७ टवासद् स० मायकचंद  
बेलाभाई ( आम्बासोपनिषद् ) जैनयुग वर्ष २ में भी  
२ पारमजिनराइरा कवसुं वा ७ ज्ञानसाद टवासद् ५० प्रकरण  
रत्नाकर भाग १  
३ प्रभुसुं रामी हो स्वाभी माइरा वा० ८ देवचंदजी टवासद् ५०  
प्रकरण रत्नाकर भाग १ मायकचंद बेलाभाई  
४ वास प्रभु कवसुं सिरनामी ज्ञानविमल टवासद् ५० जैनयुग  
वर्ष २ १०-१४६



स्तवन नं० ३ का टका गा० ७ का लृपा है पर हस्तलिखित प्रति में गा० ८ देखी गयी है ।

## महावीर स्तवन

१ बीर जिनेसर परमेसर जसो गा० ७ टकासह प्र० मागकचंद  
 बेलाभाई टकासह प्र० जैन युग वर्ष २ कदूरविजयजी टका०  
 २ चरम जिनेसर विगत स्वकपतुं रे गा० ७ ज्ञानसार टकासह  
 प्र० प्रकरण रत्नाकर भाग-१

३ बीर जिन चरणे सारुं, देवचंद्र टकासह  
 ४ कदना कपकता श्रीमहावीर जो रे ज्ञानविमल टकासह जैन  
 युग वर्ष २ वृ० १४६

श्रीमद् के वाक्यावली को सा० मोरेश्वरजी भयवानदास ने भी प्रकाशित किया है पर वह भी श्रीमती माणिक के अनुसार ही है। तथा नवतत्व स्तवन 'नवतत्व साहित्य संग्रह' में भी प्रकाशित हुआ है पर वसे भी गुजराती भाषा के साथ में छाक दिया गया है। आपके कई पद कई संग्रह मन्त्रों में प्रकाशित हैं।

## आन्तिपूर्ण कृतिये

आवक श्रीमती माणिक महाराज ने असबिज्ञास, बिनय-विज्ञास और ज्ञानविज्ञास आदि का संग्रह संव प्रकाशित किया है जिसकी प्रस्तावना में ज्ञानानन्दजी के रचित ज्ञानविज्ञास को श्रीमद् ज्ञानसारजी कृत सूचित किया है।

इसी के आधार से हिन्दी जैन साहित्य के इतिहास पृ० ७८ में श्रीमद्के विषयमें पं० नाथूरामजी मेमोने इस प्रकार लिखा है:—

८ ज्ञानसार वा ज्ञानामन्द—“आप एक श्वेताम्बर साधु थे। संवत् १८६६ तक आप जीवित रहे हैं। आप अपने आप में मल्ल रहते थे और लोगों से बहुत कम सम्बन्ध रखते थे। कहते हैं कि आप कभी कभी अहमदाबाद के एक स्मशान में पड़े रहते थे। स्वमाधवदास अने स्वयंभू संमद नाम के संमद में ज्ञानविज्ञान और संयमतरंग नाम से दो हिन्दी पद संमद छपे हैं जिनमें क्रमसे ५२ और २५ पद हैं, रचना अच्छी है। आपने ज्ञानन्दधन की चौबीसी पर एक वचन गुजराली टीका लिखी जो छप चुकी है। इससे आपके गहरे आत्मसुख का पता लगाता है।”

प्रेमीजी के व्ययुक्त कथन में कोई ऐतिहासिक तथ्य नहीं, जीमद के कभी भी अहमदाबाद के स्मशानों में पड़े का प्रमाण नहीं देखा गया। हाँ, बीकानेर के स्मशानों के निकट रहना कहा जा सकता है। ज्ञानसार और ज्ञानामन्द दोनों भिन्न-भिन्न व्यक्ति थे, किन्तु ज्ञानामन्दजी के पदों को ज्ञानसारजी कुछ बचाने की भावना के उत्पन्न आवश्यक भीमसी मान्य है। प्रेमीजी ने तो उनका अनुकरण मात्र किया है। वस्तुतः ज्ञानविज्ञान में ज्ञानसारजी का एक भी पद नहीं है। ज्ञानामन्दजी काशी वाले जीधुन्नीजी (पारिजनधि) महाराज के शिष्य और सुप्रसिद्ध श्री चिदानन्दजी महाराज के गुरुभ्राता थे। ज्ञानामन्दजी के सम्बन्ध में हमारा लेख ‘जैन सत्य प्रकाश’ में प्रकाशित हो चुका है।

आनन्दधन बहोतरी टको—सीमद् बुद्धिधामरसुरिजी महाराज ने आनन्दधन पद संस्कृत भाषावर्ग के पु० १५६ में सीमद् ज्ञानसारजी की इस कृति का इस प्रकार प्रत्येक किया है ।

“सीमद् ज्ञानसा (ग) र जी के जेम्मे सं० १८६६ ना भाद-  
रवा सुदि १४ ना दिवसे सीमद् आनन्दधनजी नी बहोतरी कपर  
टको पूर्यो छे । तेम्मे आनन्दधनजी साधु देव धारण करता हवा  
एव स्पष्ट टका मां बर्णायुं छे । सीमद् ज्ञानसा (ग) र जी पय  
बीकामेर ना स्मृतिमान पासो मूँपड़ी मां साधु ना केने रहवा हवा  
अने साधु ना देवे पंच महाव्रत नी आराधना करता हवा ।”

यह प्रत्येक भी स्मृति दोषसे ही हुवा विदित होता है क्योंकि  
व्यस्तुंक्त संवत् आनन्दधन बीबीसी बासावबोध का है । बहोतरी  
के तो कुछ ही पदों पर सीमद् का बासावबोध स्पष्ट है जो  
इसी संवत् के पु० २२४ से २३२ में सुदित है ।

ज्ञानसारजी का व्यक्तित्व महान् या सारी कन्नौसजी  
रासाजी उनकी जीवन प्रवृत्तियों से आन्दोलित थी । आपकी  
रचनाएँ बड़ी महत्त्वपूर्ण और विराट हैं इसलिये आपके  
व्यक्तित्व एवं रचनाओं पर स्वतन्त्र ग्रन्थ ही निर्माण हो सकता  
है पर रचनाओं के साथ जीवन परिचय के पृष्ठ सीमित हो  
हो सकते हैं, इसलिये हमने संक्षेप में आत्म्य सारी बातों पर  
प्रकारा कालने का प्रयत्न किया है । अन्त में आपके गुणवर्णन  
में विभिन्न कविओं द्वारा रचित अष्टाष्टकियों में से थोड़ी सी  
चुनकर यहाँ ही आ रही हैं जिनसे समकालीन व्यक्तियों का  
आपके व्यक्तित्व के सम्बन्ध में जो अन्तर्भाव हो जायगा ।

## (१) श्रीमद् ज्ञानसार की गुण वर्णन

सर्वार्थ सुख कान्तबो छिबो विषाखा छोच ।  
 देव नारायण दासबु को आनन गति अछोच ॥१॥  
 अकारे इच्छोकरै, छाक मैक री छुटि  
 मात जीवन दे अनमीया, साँठ जान गर साँठ ॥२॥  
 बास जोगलै बैठ सुँ, दीवाँ अनन बदर ।  
 बरस बार बीली गया, बारोकर री बार ॥ ३ ॥  
 श्रीजिनछाभसुरोसक, भदुरक भूषाक ।  
 श्रीकानेर ज कीर्यै, चडती गति श्रीसाक ॥ ४ ॥  
 सीस बङ्गला बङ्गमयी, बङ्ग भागी बङ्ग रीक ।  
 रावचंद राजा क्षुधि, पगटबो पुष्प वसीत ॥ ५ ॥  
 त्रिण पाटै इम कछि लपे, बाग्यो को निरद्वेज ।  
 बारै इंदर बीछरै, तरण पसारै सेज ॥ ६ ॥  
 प्रगटै सुरतसिंह बच, मिश्रयो अनन री मीत ।  
 ज्ञानसार संसार में, आखी लोक काहीत ॥ ७ ॥  
 सीस सदासुख साहुरै बलि आर्ये चौ राज ।  
 अणये सो री सांभल्यो आगर दीडो भाज ॥ ८ ॥  
 बाबाजी बागक अखै, अखै राठोडो राज ।  
 करार गुर समझा अखै, रतन अखै महाराज ॥९॥

## (२) सीरटीया दूहा

कायम बस कीबाह, काहो छीनो छोक में ।

परम अमृत पीबोह, पीबो तै होइ नारदा ॥१॥

अपनी धन आयोह, नर हो जेहरो नारया ।

भूपति धन आयोह, संतारै खिर सेहरी ॥२॥

रथ भद्र पाकर राज, पुण्य प्रमाणै पांसीया ।

जाग्रत जोगिराज, खोले बैठी खिनक में ॥३॥

हो जेहरो तूँ हीन, करणी करनी तूँ करै ।

बाबा करणी बीन, निहचै राखै नारया ॥४॥

बारण कलम न्याक, गूहो तूँ मरीचो गुणे ।

खिरजस कीरत धान्य, निरधक जगमें नारया ॥५॥

मौत तयो मनुजान, मुनिवर बनि मौन हुं ।

अवसर में उपकार, सदा करीबै सेव हुं ॥६॥

जामे जागनहार, मूरक भेद न जानही ।

पांजन रै कुलहार, चित में समझै चतुर नर ॥७॥

इक धन लेत खिनाय कर, इक धन दैत हसंत ।

ससिर करत पतकार तर गैहरा करत बसंत ॥८॥

( ३ )

दूहा :—मैं बंदन निसदिन करूँ, पठ पठ वाक्य धीन ।

बड़े दयाल नरानि नूँ सागर बुद्धि सुजानि ॥ १ ॥

सबैसी —सीक संतोष समझकै सागर ज्ञान विवेक गुनन के भारे ।

अर्थ वरम अह मोल सुगर्भ जोगल्लुल के जाननहारै ॥

काम किरौष कुँवार हटावत हूँ कुलुद्र कलंक तै न्यारे ।

सबू न सेकक लेक निसंक नूँ हाथ सहज धृमा करवारे ॥१॥

क्षमा करिअर ज्ञान गुणवी ध्यानि बगवत पारिधि ।

सत्त्व गुरुवी मत्त मंडप सत्त सम्झाही शारिधि ॥

क्षिप्त दृष्टी लंघ्याम ल्यावी प्रेमवाकर पारिधि ।

सेल सत्त रत्त ठेल छोट्टा पैल पानू मारिधि ॥१॥

ब्रह्मा :—पाणि पथिअरुं पैलके लेलै दसमै द्वार ।

अनन्त बाली गगन मै, जहा सचरि रंकार ॥२॥

कंद लहं क कुंजीकरै, सो कहीयै निज सूर ।

लह लेव ताके बस, ज्ञाना रहै न नूर ॥३॥

नूर बंद कपू भगवतै, सविष किंमहुं सूर ।

मिल्यो ब्रह्मेरो भगव सत्त, गयो करम अच दूर ॥४॥

गिरवा गोरक्षनाथ कपू, दत्त कपू दरस दयाळ ।

देसै जती नरान्धू, पूज परम कुमाळ ॥५॥

परमात्म स्वार्थ सकळ, द्वावैत निजसंत ।

सपत्त दीप सोभा करै, मदिया कोट अनंत । १ ।

कह्या पै ई...करो, तुम दाता मै दीन ।

मै सो महा मसीन हो, तुम हो बके प्रवीन । १ ।

( ४ )

ज्ञानी वैद्य नरविषय गुरुवी, सकळ लोक ने समझावा ।

अद्भुतरूप अखंड सप अमोह मूर्ति ने पिण मन जाया । का० ॥१॥

वैद्यन कै सी अद्भुत सिद्ध देखू, मानव भव की पद पाया ।

सकळ दिग्गो मूर्त्युकी कलाहुं, नरभव इसकळ दावा । का० ॥२॥

देखन में तो जोनी जंगम, पौर पैकंवर सब जाया ।  
 सानी सन्पासी मुखापर भूता, पारना को नहीं पाया । ॥१॥ स०  
 गङ्ग चररासी में गिरया गिरया गुन गौतम में गिर राया ।  
 सबधि सबधि में नाथ कर्षो, करवा अहापद पाया । ॥२॥ स०  
 सम अरै में नाथ नारायण, परमिष्ठ देवठ पूराया ।  
 धन्य धन्य भाषा सब सोऊन की, जवैदुति दुति २ काया । ॥३॥ स०  
 ( सुकनजी संगह )

### ( ५ ) सत्वणी

सकल गुण परवीन सरस है । गुण में सोभा है भारी ।  
 इन कलपुग में करी कपला, पाव बंदव है नर-नारी ।  
 काका गोरा सब बीर कहां में, पूष परचा रूँ देवै ।  
 जोसठ योगिन सदा गुरुरि, अह पहर हाजर रैवै ॥१॥ स०  
 गुह नरान अरु शिष्य सदासुख, सारी बाता सुनकारी ।  
 राम रीत सबै जस नामी चार खूट जालै सारी ॥२॥ स०  
 ज्ञानी बहै बचन के साथै, सूरवीर है सरसाइ ।  
 महाराज की महर हु है, कमी न रैवै अब काइ ॥३॥ स० ।  
 विज्ञानन सांघी सचराचर, पूष परचा रूँ देवै ।  
 महाराज की कृपा मोटी, दिख भिन्न के बाता कैवै ॥४॥ स०  
 परसन देक्यां सब सुखकारजै, कवियथ रूँ कहरंग करै ।  
 हाथी बोझा और पाछसी, सरवर गच्छ सब लेज धीरै ।  
 संवत अठारै वरष चोरासिये, कसुन सुदी चोदध दिनै ।  
 सुती होय बिकांया माहि, कृपाराम सुति भिमें ॥५॥ स० ।

( ६ )

दोहा :—जलमें बारा ईसवर, नर कुल लखै नराज ।  
 गह्वर करत नरुहै गुमन, मरुहल कही भोग ॥१॥  
 मित्र न भाने बीरता, इन्द्रिया गच्छ जाय ।  
 नर पुर सिरे नरायण, सायक गह्वर मुख छाज ॥२॥  
 पुरुष पक्षिम पैछीया, कही बीठा बहु जोष ।  
 नारायण नर पुर सिरे, हुबो निके घर होष ॥३॥  
 सतबाही जलीया सिपा, जग मग गोरख ओम ।  
 मुनिराजा नारायण मुष्ट, मिह्वर रेहिनी नेम ॥४॥  
 बायक ओरै केहरा, वेद प्यास दुख बाँध ।  
 सतसुख नाराय नरपुत्र, नरग बंस तुल्य राज ॥५॥  
 नारायण नर पुर सिरे, कजली बीजो न जायो ।  
 सिध बेछो राधा सुख, अवतारी अरु जायो ॥६॥

( चतुरस्रुजजी संग्रह पत्र १ से )

( ७ )

दोहा :—सुग में नारायण जली, सुरकुल लखोसरूप ।  
 साया कुल पट बीछीया, सुकुली नबाधै मूर  
 ओ मन केन अपार जग नही राधा बिहंग ।  
 ओ पुरुष असबाद, जग में नारायण जली ॥  
 ओ मन मस्त अपार, हानै निज बाइयो इच्छ ।  
 हण भाधै असबाद जलीया निज सौख्य बली ॥



आशा नहीं आपार, नर बाहुन कोचै नहीं  
ओ अंग लेखत असवार, जोख रै कट पैले लती ॥

दोहा :—परममत्त विन राजके, ज्ञानसार परबीन ।  
सत सीकहि पाछै सदा, रहै उपस्था कीन ॥

( ८ )

कविच :—दक्षिण प्रचीन ज्ञान माहरो समुद्र लीसो,  
कारै मयफंद मंध, दूर ही गयो रहे ।  
पंचमल भारै साधु गुन ही अंग विचारै,  
प्रसिद्ध मरान द्विदै क्षमा लीयो रहे ॥  
विद्यमान देत है बल्लभ सब सायकहुं,  
भाखै भगवत सूत्र अरथ को दियो रई ।  
नहीचै विचार देखो ऐसो मुनिराजकुंहुं,  
बिनराज जु के पद परकस गयो रहे ॥

दोहा :—साधु संकीर्ण जेटीया, बयो बनोरन दूर ।  
सुख संपति आनन्द बयो, गयो बलिहर दूर ॥१॥  
चतुरसा की पूष कुं, कसै न कोऊ टांक ।  
जेहे सुग के सींग में, सुपै ही में बांक ॥  
नयन बयन अर नासिका, है सबके इकठोर ।  
कहबो सुनबो अमलबो चतुरन को कहु कोर ॥  
गिर सरवर यो सुवरमे, भार सीजबो नाहि ।  
सुख दुख दोऊ होत है, ज्ञानी के पद माहि ।  
नयन बयन अमृत रसै, रूप अमोघम सार ।  
ज्ञानसार सुख माहुरा, सुगत लका दातार ॥

( ९ )

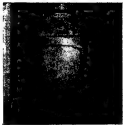
समेधा :—सुख में गोपाळ कमल में कमल नैन,  
खेदसा में सीताराम बनमें बनवासी है ।

देख में बाहारा चनेली में कतुरमुख,  
 केवहा कनाया नामा पानी पारी है ॥  
 गुरुदा बदा में दीनबंध जाफरा में जगन्नाथ,  
 मोतिबंध मदन व मीरी में मुरारी है ।  
 रूप मंजरी में राबेहण्य रेहणी में केसोराय,  
 देखो नाराय नाम पुखी पुखवाती है ॥

( १० )

( कवित्त बाबाजी जैनराजजी को कछो सेवक नवकराजजी  
 की अशमेर मध्ये )

सोधत गुण सागर, है बुद्धि को लजामर ।  
 गुनियन को आगर सो बड़ो जैनमयी है ॥  
 सबही विष लानक, है असुव से बापक ।  
 वे दीर्घ मच्छनायक, यों कान्त हव रही है ॥  
 रांयचंदजू के होरा लेरे पराचिहुं विरा ।  
 सौल संतोष विष, ओपे अपिक सतो है ॥  
 कवि कहै नोछलाह जाको बापों है विराह ।  
 सो दाता गुरुदास, देखो नारायनजती है ॥  
 कविता में पुनित देखो रीति राजनोत हुं मैं ।  
 जीत के प्रबल काम, जीत अस कंत को ॥  
 करमें विषकरमां सो, हुमर हमार बाकै ।  
 बैराग में जान सब जोतक मंजरी को ॥  
 बोधि भव जीवनको गौतम सो ज्ञान बाकै ।  
 मान दानराज जानै बान द्वित संत को ॥  
 जिनकाभसूर चंद राव शिल राजव को ।  
 निहचै नरायण है भेष भगवंत को ॥



श्री कृष्णदेवराय की समाधि ( लालिचन्दिर )



श्री कृष्णदेवराय के लालिचन्दिर का प्रवेश द्वार



श्री ज्ञानसारणी (नारायण श्री)  
 हरमलनी, मृगनी श्री सदासुखी श्री कन्देरा श्री हृग

# ज्ञानसार ग्रन्थावली-खण्ड १

## ज्ञानसार पदावली

### चौसी

१-श्री ज्ञानम जिन साधनम्

राग भैरव—( छठस प्रभाव नाम जिनजी को गाईये—पदनी )

ज्ञानम जिहंदा, आसंदकंद कंदा,  
याही तैं चरख सेवै, कोटि सुर इंदा ॥ अ० ॥ १ ॥  
मरुदेवा नाभिर्नंद, अनुमौ चकोर चंदा,  
आप रूप कौसरूप, कोटि ज्युं दिहंदा ॥ अ० ॥ २ ॥  
शिव शक्ति न चाहूं, चाहूं न गोविन्दा ।  
ज्ञानसार भक्ति चाहूं, मैं हूं तेरा बन्दा ॥ अ० ॥ ३ ॥

२-श्री अजित जिन साधनम्

राग भैरव—( जाने सो जिन अकल कहानै, सोचे सो संसारी )

अजित जिनेसर काया केसर, तूं परमेश्वर मेरा ।  
सेद बुद्ध सुविशुद्ध मुक्ति भग, प्रापक है पद केरा ॥ अ० ॥ १ ॥  
अकल अमूर्तीक अविनासी, आत्म रूप उजेरा ।  
मलख निरंजन अकल अकार्ह, असहार्ह पद तेरा ॥ अ० ॥ २ ॥

अज अरुजी चिदमन अवहारी, अभिया शब्द घनेरा ॥

दीनबन्धु हे दीन दयानिधि ! ज्ञानसार तुहि केरा ॥अ०॥३॥

३-वी संभव विन साधनम्

राम मेरव

( राम मंत्र अज ३ हरे २, हरे राम कहि २ राम नाम कहि हरे हरे )

संभव संभव संभव कहि कहि, संभू संभू मति कहे कहे ।

संभू सयंभू संभव नामा, यातें मन मति मरम पाहे ॥सं०॥१॥

संभव संभू सयंभू अभिन्ना, इह संभू मिथ्यात मर ।

शक्तिमंत विन कद संज्ञा तें, कनक धतूरे नाहि लहे ॥सं०॥२॥

राम दोष मिथ्या परमिति बट, मिट मर अमर सारूप वहे ।

ज्ञानसार कहि उन संभू में, संभवरूप न भिन्न कहे ॥सं०॥३॥

४-वी अभिनंदन विन साधनम्

राम बेलावत

अभिनंदन अवधारी मेरी, मैं हूँ पतित विहारी ॥अ०॥

पतित उपासन विरुद्ध अनादी, वाकी ओर बिहारी ॥मेरी०॥१॥

केते मतिष्ठ उपास विरुद्ध लखि, मेरी केर बिसारी ।

एक उपासी अपने विरुद्ध, कपुं नाही उजवारी ॥मेरी०॥२॥

धोरे करज बडि वात सिद्ध हूँ, पशुं न आलस टारौ ।  
अवसर समझी बिनती करहुँ, ज्ञानसार निसतारौ ॥५०॥३॥

५-वीं सुषति बिन स्तवनम्

राम मेरव ( आगे सो जिन बत कहाये, छोडे सो संसारी )  
सुमति अघेसर चरख सरख बडि, कारख करख तिरख की ॥  
बहिरावतता छोड आपना, अन्तर आत्म भावै ।  
धिरता ओगै चरख सरख की, करखता समबावै ॥५०॥१॥  
जिन स्वरूप संजोगै आत्म, समबावै सुख चीनै ।  
समबावै सुख सुखि अभिन्नै, आप सुभावै लीनै ॥५०॥२॥  
आत्म सुभावै आत्म बदत, व्यापकता सरपणै ।  
ज्ञानसार कहि चरख सरख की, आत्म अपरख रंगे ॥५०॥३॥

६-वीं वदमशु बिन स्तवनम्

राम मेराव

पशुम वशु जिन तूं मुँदि स्वामी, तूहीं मेरा अंतरवामी ।  
हूँ बहिरावत तूं अपरुषी, तूं परमावत सिद्ध करुषी ॥५०॥१॥  
हूँ संसारी बवि बित्तकारा, तूं यस्यादिक दूर निचारी ।  
हूँ कामादिक कापी रागी, तूं निष्कामो परम विरागी ॥५०॥२॥  
हूँ जड संगी जड भिचारी, तूं आत्मता परबित धारी ।  
दीन हीन तैं करुणा कीजै, ज्ञानसार नै निव पद दीजै ॥५०॥३॥

७-वीं सुपास विन लावन्य

एक बेलावन (मेरे लो चादिये)

श्री सुपास विन लादरी, सुख दरसक चाई ।

आधुनकी नो उठि नो, कन संकन न्याऊं ॥श्री॥१॥

सुदासुद नयै करी, पुन निरचै मारु ।

चिबहारी नय चापला, अत ही उल्लाऊं ॥श्री॥२॥

बस्तु मती विन दर्शनी, वस्तु सीत नमाऊं ।

झानसार विन पंख नो, नै मेर न पाऊं ॥श्री॥३॥

८-वीं चन्द्रप्रभु विन लावन्य

एक रामगिदि (कुंछु विन मनकी विन ही न चाई)

मनुषी समझायी नहि समझै, समझायी नहि समझै ।

ज्युं ज्युं सठ हठ कर समझाऊं खुं खुं उलटौ उलटौ ॥म०॥१॥

ज्यानारुद थई जो पाऊं, लो मांपूरी पूंमै ।

एहवी कुनै समझावण हारी, जे समझी नै सुलझै ॥म०॥२॥

चन्द्रप्रभु जी करैष सदाई, लो क्यूंही पदिबुझै ।

झानसार कइ मनुषा नै, लो क्यूंही आख्यां सुझै ॥म०॥३॥



६-श्रीसुविधि जिन स्तवनम्

काव ( रे जीव जिन चर्म कीजिये )

सुविधि जिनेसर साहरो, मत तव जे ज्यौं ।  
 ते मिथ्या मति नहि प्रसै, मत ममत न तायै ॥सु०॥१॥  
 थावक उधावक मतो, ए सरव ममती ।  
 तिह किछ जिन मत देन नै, मति समझौ सुमति ॥सु०॥२॥  
 ज्ञानसार जिन मत रता, ते रहिय<sup>१</sup> पिछायै ।  
 शुद्ध सुपरखित वस्त्रमी, अनुभव रस माखे ॥सु०॥३॥

१०-श्रीश्रीतल जिन स्तवनम्

राम—घोठ

ऊजला राम नाम मनाजी ॥ऊ०॥  
 थां<sup>२</sup> खेखी चोखी राखू, उलझ्या उलझ्या ठाम ॥मना०॥१॥  
 पां मदि खू<sup>३</sup> नदि तुम्ह बाहिर, शीतल शीतल धाम ।  
 रामयै मिथ्या ताप समावस, जिन गुण सक आराम ॥म०॥ऊ०॥२॥  
 राखी जनम थकी मिथाई, सारथो हूँ शुभ काम ।  
 ज्ञानसार कई मन माता, साखी दाखी नाम ॥म०॥ऊ०॥३॥

११-श्रीशेवांस जिन स्तवनम्

राम बेलावल—( पद्म प्रभु जिन साहरो, तुम्ह नाम सुदाने )

श्री शेवांस जिन साहिवा, सुख अरव इमारी ।  
 समरथ सामी खू<sup>४</sup> मिल्या, रहिया जनम बिसारी ॥श्री०॥१॥

दीनदयाल कृपाल नो, नो विरुद धरावै ।  
 अन्तर आत्म रूप नी, ते सगति जगवै ॥श्री०॥२॥  
 शक्ति सदाई आप हूँ, तौ निज पद सीजै ।  
 ज्ञानसार अरदास नी, भाषा सफल करीजै ॥श्री०॥३॥

११-श्रीवासुदेव जिन साधनम्

राग—बैष्णव

वासुदेव जिनराज नी, बुद्धि दरखण भावै ।  
 मत्-मत् ना उनमादिवा, बौद्धि खनम गमावै ॥वा०॥१॥  
 मत्-मत् नी जगज घी, तत्वातस्व न बूझै ।  
 राग दोष मति रोम घी, पर भव नहिं धूझै ॥वा०॥२॥  
 ज्ञानसार जिन धर्म नै, सग नय समवाहै ।  
 अनुगामी नै संपजै, आत्म ठकुराई ॥वा०॥३॥

१२-श्रीविमल जिन साधनम्

राग—कलियुग

माई मेरे विमल जिनैतर सामा ।  
 आत्म रूप नी अंतरवामी, परखामै परखामी ॥मा०॥१॥  
 अविरोधे गुण मखीय अमेदी, साधकता नी सिद्धै ।  
 तेहिज सकुँ तूँ बुद्धि तरक, चेतनता नी चहूँ ॥मा०॥२॥  
 रूप अमेदै शक्ती अमेदी, विमल विमलता भावै ।  
 आत्मता परब्रह्मन प्रयोगे, ज्ञानसार पद पावै ॥मा०॥३॥

१४-वीं अर्धत त्रिन सतनम्

राग वैजापल—( वरुणप्रभु त्रिन ताहरी, मुद्दि नाम सुहावे )

तूँही अनंत अनंत हूँ, बलि चरख नी चेनी ।  
 मान मेला सादिव करयो, ली दी अवगुण देरी ॥तूँ० ॥१॥  
 चूक मरयो चाकर सदा, ते सनमुख देखी ।  
 ली सेवक स्वामी तखी, स्वी गदिसी लेली ॥तूँ० ॥२॥  
 ली गुनदा वगसै कटै, स्वामी सलहीखै ।  
 ज्ञानसार नी सादिव, निव पद सौंपावै ॥तूँ० ॥३॥

१५-वीं अर्ध त्रिन सतनम्

राग वैजम—( मारु मन मोहूँ रे श्री० )

धर्म जिनैतर तुम्ह तुम्ह धर्म माँ, मेद न होय अमेद रे ।  
 सचा एकै धर्म अमिन्नता रे, ली स्वी एवही मेद रे ॥ध० ॥१॥  
 राग दोष मिथ्या नी परखितै रे, पन्थमिथी परिणाम रे ।  
 हूँ संसार तैह बी संसरुं रे, ताहरुं शिवपद धाम रे ॥ध० ॥२॥  
 तूँ नीरानी तूँही निरमदी रे, निरमोही निरमाय रे ।  
 अजर अमर तूँ अक्षय अव्ययी रे, ज्ञानसार पद राय रे ॥ध० ॥३॥

१६-वीं शक्ति विन सत्त्वम्  
राम सारंग

जब सब जनम गयीं तब चेत्यौ  
पाछल वृद्धी पीटै लामे, चेत्यौ सो ही न चेत्यौ ॥अ० ॥१॥  
शब्द रूप रस गंध करस में, अजहु रहत अचेत्यौ ।  
संवर करणी सुखसां सिरकै, आश्रय बांहि अनेत्यौ ॥अ० ॥२॥  
संयम मार्ग प्रवर्त्तन समर्थै, आत्म रहत पछैत्यौ ।  
संत जिनैसर ज्ञानसार को, मन कबहुं नहिं जेत्यौ ॥अ० ॥३॥

१७-वीं कुलुताम विन सत्त्वम्  
( कदा अज्ञानी जीव क् )

कुन्धू जिनैसर साहिबा, सुन अरज हमारी ।  
हूँ शरसागत ताहगै, तूँ शिव भग चारी ॥कुं० ॥१॥  
शिव भग नै अवगाहनें, तैं शिव गति साधी ।  
आत्म गुण परगट करी, आत्मता लाधी ॥कुं० ॥२॥  
दीन जाह करुणा करी, शुभ मार्ग बसावै ।  
ज्ञानसार जिनधर्म श्री, शिव पदवी पावै ॥कुं० ॥३॥

१८-वीं अरि विन सत्त्वम्  
( तूँ आत्म गुण जाह ने जाह )

अरि विन अशुभ अद्भान विधान,  
मर्च क्रिया निष्कृता मान ॥अ० ॥१॥

तीन तरफ भी वे ओल्लास, वेदिय शुद्ध अद्भुत तू जग <sup>११</sup>  
 बलि उरघ्न न भापै जेह, बीजुं लक्ष्य रहनु एह ॥अ०॥२॥  
 तीजुं अवबद्ध करणी करै, ते निज रूप नै निहचै वरै ।  
 ज्ञानसार शिव कस्य अमूल, अर जिन मास्युं अद्भु मूल ॥अ०॥३॥

१६-श्री बल्लिजिन स्तवनम्

राग रागिनी (आज महोदय रंग रली री)

मन्त्रि मनोहर तुम्ह ठकुनाई ॥अ०॥  
 सुता भयै तैं छप बजाई, पंढ सुपोषा देव घुराई ॥अ०॥१॥  
 जय जय घोष न मायो जग में, अनमिष नारकिने मुख पाई <sup>१२</sup> ।  
 सुर वनिता मिल माई बधाई, सुरपुर में बांटत बधाई ॥अ०॥२॥  
 ईशानी घर आंगन नाचै, भर मुक्ताफल चाल बधाई ।  
 ज्ञानसार जिन जनम जगत की, हरख हकीमत किन बरसाई ॥३॥

२०-श्री मुनिमुवत जिन स्तवनम्

राग बेलावल—(श्री महाराज बजावै)

मुनिमुवत जिन वंदौ, अहसम अरुचिनिहंद आनंदौ ॥सु०॥  
 हूँ सद्बुद्ध वंदन रुचिता, उदर्यै अनुभव चंदौ ॥सु०॥१॥  
 वस्तु गतै निज कत्व प्रतीतै, मिथ्यामति अति वंदौ ।  
 कुशल विलास आलमता कुनै, परचै परमाणंदौ ॥सु०॥२॥  
 कारण जोगै कारण सिद्धी, हूँ आनै मतिमंदौ ।

ज्ञानसार की ज्ञानसारता, सम भासै जिन्ह चंदौ ॥न०॥३॥

११ की नमि जिन स्तवनम्

राग आस्था—अब हम अमर सप न मरैने

अंबर देहो मुरारी, प निम्ह)

नमि जिन हम कलि के संसारी, पुद्गल के सहिचारी ॥न०॥

क्या बूझै हम बंदन पूजन, नमन मान शुच तारी ॥क०॥१॥

पुद्गल खावै पुद्गल पीवै, पुद्गल पयर पधारी ।

पुद्गल संगै हमही सोवै, पुद्गल लगन सुप्पारी ॥न०॥२॥

बंदनादि नी आत्म अर्पण, जिन संबंध न बारी ।

ज्ञानसार नी ज्ञानसारता, नमि जिनवर सहिचारी ॥न०॥३॥

१२ कीनेमि जिनस्तवनम्

राग वसंत ढाक—(परमशुद्ध जैन बहो क्यु होवे)

एसै वसंत लखायौ, नेमि जिन एसै वसंत लखायौ ।

परम ध्यान सिधरी की तायै, मिथ्या शीत पटायो ।

किंचित शीत रखो अब चित की, वारि मांगस्य आयौ ॥न०॥१॥

शुक्ल ध्यान गुदरी बगवै जिन, कैसे शीत न जावै ।

ठंड पट्यां जिन पाय् इंद्री, मन गरमी नहिं पायै ॥न०॥२॥

जिन गरमी जिन हाथ पैर सँ, साधु क्रिया किम कह्यै ।

साधु क्रिया जिन ज्ञानसार गुन, शिव संवाद किम सोवै ॥न०॥३॥

२१ श्रीगणेशाय नमः स्तवनम्

राग राममिरो—( अंबर देखो सुरती )

पास जिन तूं है अम उपगारी, तूं है जग उपगारी ।

जग उपगारी बिरुद पारकै, लोखैं सखर हमारी ॥पा०॥१॥

जगवासी में जो मोहि राखो, जो नौहुं हो तारी ।

बिरुदैं चारो जो नहि तारी, मोहि करन' की सारी ॥पा०॥२॥

पतिउ उपगारन बिरुद तिहारो, बाहुं बधुं बिसरीजै ।

ज्ञानसार की अरज सुखीजै, चरख सरख राखीजै ॥पा०॥३॥

२२ श्रीराम जिन स्तवनम्

राग मैरव—(अम जग आवे नहि मन छाब)

धीतराग किन कहि बधमान ॥वी०॥

सम बिसमी जिन समता राखै,

हीनाधिक नौ भयो अविधान ॥वी०॥१॥

प्रत्येक जगपादिक देखी, परिक्रम में आपै सनमान ।

अपमची जलझीझा करखी, तारखो सीस विनीतौ मान ॥वी०॥२॥

चोशालैं नै अविनीतौ लख, असांस भवे दोषी शिव धान ।

ज्ञानसार नै हथियन आपै, दो दीठैं देखै न समान ॥वी०॥३॥

कलश-महालि, राम—धनाधी ( धनगुण जिनके )

गौडेचाही तैं बुद्धि, सुधि बुधि बीबी ।

तुम्ह सदायें बुद्धि पंगुर बी, जिन गुण नम गति सीधी ॥गौ०॥१॥

अक्षर पटना स्वपद साटनी, भाव बेध रस बीबी ।

अंध बाधिर आराध नहीं समझूँ, सी श्रुत ऊँचीसीधी ॥गौ०॥२॥

काला-बाला छद्म बी करि नै, भक्ति इति रस पीपी ।

सुमति समय तिम प्रवचन माता, सिद्ध नाम गति लीपी ॥गौ०॥३॥

वर सगुर बख रत्नराज गणि, ज्ञानसार गुण बेधी ।

बिक्रमपुर बिगसर बुद्धि पूजम, बीबीचूँ स्तुत बीपी ॥गौ०॥४॥

### इति पर्द

पं० अक्षर ज्ञानसारनिर्गुणः कृत चतुर्विंशितिका समाप्ता ।



## ॥ विहरमान वीसी ॥

श्री सीमंघर जिन तावनय

राग—करेलका परदे रे

किम मिलियै किम परचियै, किम रहियै तुम पास ।

किम लवियै तबना करी, तेह थी चित उदास ॥१॥

सीमंघर प्रीतकी रे, करिये कौन उपाय, माखो कोई रीतकी रे ।

ते देखै जायू नही, मिलियै स्यौ सम्बन्ध ।

जो निजरे मिलयू नही, सी परिचय प्रविसंधि ॥२॥ सी०॥

प्रथम प्रकृत नैं अभिलखी, पाछल करिये पास ।

ए अलुकर जायया बिना, परिचय नौ प्रतिपास ॥३॥ सी०॥

परिचय बिछ कोई सदा, न दियै बैसख पास ।

पासै हो बैसख न दे, रहिया नी सी आश ॥४॥ सी०॥

जो रहियै पासै सदा, लो अवसर अस्तास ।

करियै बिछ मोटा कदे, न करै निवट निराश ॥५॥ सी०॥

जो कालै तुम परख नी, सेवा करस्यु साम ।

एक कालै मुझ बन्दना, प्रीछेज्यो परिशाम ॥६॥ सी०॥

दूर यकां कमठी परै, महर नजर मदारास ।

ज्ञानसार थी राखज्यो, सरस्यै लो सहू काज ॥७॥ सी०॥

२ श्री जुगमधर विम सावनम्

(बीरा चांदला । ४ पेशी)

जुगमधर विमगात्र श्री रे, तुमसूं निवड़ सनेह ।  
 करपा बांछूं दासजी रे, किम तुम दासी छेहो रे ॥१॥  
 जुगमधर विम, सबस बिपासक एहो रे ।  
 राम बिगनिया, राम बिना नहीं नेहो रे ॥हु०॥ २॥  
 मूल बिना नहीं कलरा रे, ग्राम बिना नहीं सीम ।  
 सास बिना जीवित नहीं रे, राम नेह नी नीमो रे ॥हु०॥ ३॥  
 हूं इय भरत नी कीकली रे, तुं शिव वासी सिद्ध ।  
 सरिखा विष न हुबै ऊदै रे, प्रीत रीत नी सिद्धो रे ॥हु०॥ ४॥  
 आसंगी किम कीजियै रे, करियै जेह नी आस ।  
 ज्ञानसार नै प्रीछज्यो रे, चरख कमल नी दासी रे ॥हु०॥ ५॥

३ श्री बाहु विम सावनम्

( मयसागर द्वीप जो होले )

बाहु विनेसर सेना सारी, हूं जाखूं विष सुविधैं सारी ।  
 द्रव्य माव पूजा बे मेदै, प्रथम अमय अहोष असेदै ॥१॥  
 मन निरपल विम रुचि पूजा नी, असेदी विष ए न हुवानी ।  
 अंग अंग द्रव्य पूजा जेह, सेइनी सुविषा बांछैं एह ॥२॥

असंख्यात मन ना पर्याय, मान पूजा ना भेद कहाय ।  
 उषणम चीश सयोमो ठाणै, चौथो पञ्चमि भेद बलाणै ॥३॥  
 जे प्रवचन नौ वचन न छेदै, ए माख्यौ जिन पंचम भेदै ।  
 क्षिरिया करै समय' अलुमारै, बंचकता नौ लक्ष्य बारै ॥४॥  
 निमज्जी' एकंउ पक्ष न लाणै, ते जिन सत्तम भेद बलाणै ।  
 ज्ञानसार जिन पढ़िया जेइ, जिन सब मानै अद्भुत एइ ॥५॥

४-सत्सुखाहु जिन स्तवनम्  
 ( ललनां नी पेशी )

श्री सुखाहु निर्माद नौ, परम धरम परमाख ॥ललना॥  
 श्रीश्री त्रिकरख शुद्ध श्री, जिन आगममम' लाख ॥ल०॥१॥श्री॥  
 इग विह सम सत्ता मई, दुबिहै दो नय बार ॥ललना॥  
 तीन कत्व त्रिविधै मख्यौ, श्री दानादिक च्यार ॥ल०॥२॥श्री॥  
 पक्ष विह पंच महाप्रते, छविह जीव निरूप ॥ललना॥  
 सग विह सग मय निरभई, अद्भु विह प्रवचन माय ॥ल०॥३॥श्री॥  
 हत्पादिक बहु भेद श्री, धर्म कसो विवदार ॥ललना॥  
 निरचय आत्म रूप श्री, लक्ष्यत धर्म विचार ॥ल०॥४॥श्री॥  
 असंख मवै उदयै हुवै, ते विवदार सरूप ॥ललना॥  
 निरचय अंतिम मव लई, ज्ञानसार रस रूप ॥ल०॥५॥श्री॥

५-श्री सुजात जिन स्तवनम्

रास—(दिपरे जगत गुरु)

मैं जाण्यो निरवै करी हो जिनजी, जिन धर्म सम नहीं कोय ।

सकल नपासय<sup>१</sup> जाणनै हो जिन, धर्म जगत ना जोय ॥१॥

सुख रे सुजात जिन, तुम्ह धरम समो बंद को नहीं ।

तिथ इय भव हो मुक्त शरणी एह कै, इय जिन को<sup>२</sup> जग

में सही ॥२॥सु०॥

जिम गहिली नी पहिरखो हो जिन, तिथ सहु धरम कथम ।

कर्म-गहित करता कहै हो जिन, इम किम मिलौय बचस ॥३॥सु०॥

ईश्वर प्रेयो स्वर्ग में हो जिन, नरकैं आवै जीय ।

भूत मई केई कहै हो जिन, यदपच्छायैं सदीव ॥४॥सु०॥

मिथ्या मत मद मोहिया हो जिन, स्मू<sup>३</sup> आखैं नय बाद ।

ते बिन कृण समझी सकैं हो जिन, 'ज्ञानसार' संवाद ॥५॥सु०॥

६-श्री स्वयंभू जिन स्तवनम्

( महिर करो जिनजी )

श्री स्वयंभू ताहरौ जिनजा, विरुद सुण्यौ में कानकै ।

परम पुरुष जिनजी ॥

सेवा सांची साचवै जिनजी, तेहनै वी शिव जानकै ॥६०॥१॥

न्युं करि पहुँचै तुम कनै, तो किम सारुं सेव कै ॥५०॥जि०॥  
 अलगां ही ही ताहरी जि०, आस धरुं नितमेव कै ॥५०॥२॥  
 जो निजरां सन्मुख रहै जि०, तो कल प्राप्त होय कै ॥५०॥जि०॥  
 पंखी हो पहुँचै नही जि०, मुक्त संभव नही कोय कै ॥५०॥३॥  
 इहांही ही अवधारज्यो जि०, वीनति बारबार कै ॥५०॥जि०॥  
 तुम सरिखौ समरष भखौ जि०, पाम्पौ परम उदार कै ॥५०॥४॥  
 तू जगतारक हितकर जि०, स्वयंप्रसू जिनराय कै ॥५०॥जि०॥  
 ज्ञानसारनै तारवा जि०, कोजै बेग उपाय कै ॥५०॥जि०॥५॥

॥ श्री अष्टभगवान् जिन सतगुरु ॥

राम—( भेषिक नन आचरिब बधो )

तुम परब्रह्म नै परब्रह्म्यै, हूं निजरूप नौ कर्ता रे ।  
 तू बुद्धि साधक सिद्ध हूं, तू हूं सम इम सच्चा रे ॥  
 अष्टभगवान् जिनरायजी ॥१॥

पूर्ब रूप नै अमिलपी, तो निरखू निज रूपो रे ।  
 पर परिश्रम नै परब्रह्म्यै, हूं कारक भव कूपो रे ॥२॥अ०॥  
 मिथ्यात्वादिक हेतु नै, परिणामि परिणामी रे ।  
 हूं बांछू अठ कर्म नै, कर्म कलौ नौ कापी रे ॥३॥अ०॥  
 संवेगादिक लक्षणे, चेतनता नौ रापी रे ।  
 हूं कर्ता निजरूप नौ, ज्ञानादिक गुण पापी रे ॥४॥अ०॥

ए गुण गुणिय अमेद हैं, "शिव ज्वलौ निरबाधो रे ।

अरुज अपुनराचर्य थी, ज्ञानसार गति साधी रे ॥५॥अ०॥

८ श्री अनंतवीर्य बिन स्तवन ।

राग—( सोरभधर करजो बजा )

इम मीठ्यां हूं तुम कनै, दो मीठ्यां अति दूर ।

तीनू लखख मेलण्यां, निदानन्द रस पूर ॥१॥

अनंतवीरज अवधारज्यो, गुपति रहिस नौ ए बात ।

मोटा मरम न दाखवै, तेम पराई जे तात ॥२॥अ०॥

श्री मेल्यां की लहु सभी, अन्वय लखख धार ।

व्यतिरेकी नै मेलण्यां, पंचम गति दातार ॥३॥अ०॥

हूं तुम मेद न एकता, ली किम इकौ जी मेद ।

जुंजन करयें ताहरें, पर परहित नौ ए सेद ॥४॥अ०॥

तुम्ह ह्रुम्ह अंतर भेटवा, ज्ञानकरख मुख धार ।

ज्ञानवार मुख एकता, चेतनता नौ व्यापार ॥५॥अ०॥

९ श्री विशाल बिन स्तवन ।

राग—( कदवा फल लैं कोधना )

श्रीविशाल जिनराज नौ, परम परम सुखवीरौ रे ।

कर्म नाश नै कारखौ, ए सम अवर न मीठौ रे ॥१॥

अथ जय बिन धर्म अवल मे ॥

शब्द अरथ नव एकता, बलि सापेक्ष वचनो रे ।  
 मारुपो अनंत मगवंत जे, तिम भाखी ते वचनो रे ॥२॥अथ०॥  
 पण इत दुनव काळ ना, मत ममती उनमादी रे ।  
 के तुम्ह थापे ऊपरै, तेह विरंदावादी रे ॥३॥अथ०॥  
 आपकवादी इत कहै, जिन पूजा नै काजी रे ।  
 फलिय कतरवी बीषवी, हम जवै जिनराजो रे ॥४॥अथ०॥  
 ऊयापकवादी कहै, पूजा नहीं आचरखा रे ।  
 बिना आरंभ पूजा नहीं, जिन धर्म नहीं पिय जयगार रे ॥५॥अथ०॥  
 दुख कली नै कतरवै, जिन मुनि हिंसा दासी रे ।  
 साठ दया ना नाम में, जिन पूजा जिन भाखी रे ॥६॥अथ०॥  
 मत बदी मत ताखी, धर्म तत्व स्पू जाखी रे ।  
 ज्ञानसार जिन मत भ्वा, ते मत ममत न ताखी रे ॥७॥अथ०॥

१० ॥ श्री गुरुदेव जिन स्तवन ॥

राज—( वन २ संघति सावै राजा )

जो हूँ गायो गाउं ताहरी, तौ पिय जाखी न माहरी रे ।  
 मारय बलवां आरै मारी, तौ स्वी दास नै सारी रे ॥१॥  
 सुरप्रभु जिन तुम किम रोखी ॥  
 संमुख हूँ परपूठे कोषो, अधिकी सेवा जाखी रे ।

जी कोई चूक करी ते बगसी, पिश इवदौ स्पर् ताखौ रे ॥२॥६०॥  
 जे कोई दास करेसी सेवा, अवसर अरज बखावै रे ।  
 ओ बगसेवा नी नहीं मनता, तौ किम सेव करावै रे ॥३॥६०॥  
 सेव करावी देवा टाखौ, हसि नै दांव दिखावै रे ।  
 ते स्वामी नै सेव करातां, क्युं डी लाज न आवै रे ॥४॥६०॥  
 कहिया नी बिबहार सेवक नौ, करवी स्वामी सारु रे ।  
 ज्ञानसार नी खपर लहेस्यौ, तौ सहु कहिस्वै बारु रे ॥५॥६०॥

११ ॥ श्री वज्रवर विन सारवम् ॥

राग—(आवर ओष कमा गुण आवर)

श्री वज्रवर हूं सैंदुख मिलियां, चाई लूँ सुम्ह मय जी ।  
 प्रह उठी नै समवसरण में, बांदि ते फन भय जी ॥श्री०॥१॥  
 न सहुं तुम श्री सैंदुख मिलिया, तौ पिश तुमचै पास जी ।  
 भाष परुं शिर ऊपर ताहरी, तेव कहू अरदास जी ॥श्री०॥२॥  
 जो इतला बीजा नै तारी, सुम्ह बांदि सी भूल जी ।  
 पांच मेद जिनराज करै जी, तौस्यौ कबौ बल जी ॥३॥श्री०॥  
 अवसर समझ करी अरदासैं, तौ पूरवस्यौ हांम जी ।  
 बहितै बारै आस न पूरी, पड़तावै स्यौ आम जी ॥४॥श्री०॥



पेट बांध नै सेवा सारै, ते रासीजै दास जी ।

ज्ञानसार थी सेवा चाही, किम नवि पूरी आस जी ॥४॥श्री०

१२—श्री चन्द्रानन जिन सावनम्

राग—( इच पुर कंजल कोई न लेसी )

चन्द्रानन जिन पूर्व उपाई, करम प्रकृत तैं उदयै आई ।

आरज देश आरज कुल पायो, जैन धर्म नै सरखै आयो ॥१॥

रुच रंग बल लांभी आय, पांचू इन्द्री परगट पाय ।

सुगुरु संयोगे संयम लीधी, मन बचने नही पासन कीधी ॥२॥

हुभर केला हाथे कीधा, ते पख उदय उपायै लीधा ।

जस उपजायी जस उदयै थी, मंद लोभ ते मंदोदय थी ॥३॥

पाछलि पूंथी सरखे सारै, एहनै बुझानस्था आई ।

ज्वाण वयै करखी नही कीधी, दिव इन्द्रिय दमनै सी सिद्धि ॥४॥

पिछ बछसायां गरज न काई, थी किम स्वामी होय सहारै ।

अल्प समाधि मानख शुभ देख्यो, ज्ञानसार कीनति मानेज्यो ॥५॥

१३—श्री चन्द्रबाहु जिन सावनम्

राग—( बहिला ऊपर मेढ़ )

मैं जाण्यो महाराज कै, राज निवाजस्यौ दो लाल ॥रा०॥

बीती सहु जमवार कै, लाज नौ काज स्यौ हो लाल ॥ला०॥

सेवीजै तरु छोट, ते अते फल दियै हो लाल ॥अ०॥

न दिखै तौ पिछ पंथी, बीसामी लिये हो लाल ॥बी०॥१॥  
 आज लगी कर मोड़ी, सेवीयै सदा हो लाल ॥से०॥  
 कीची हूँ बगशीश, संभालीजै कदा हो लाल ॥स०॥  
 तौ पिछ पिछ इक भूलूँ, फिर तुम्ह माँझरुँ हो लाल ॥कि०॥  
 बगसेवा नौ बार, बाँक सब माझरुँ हो लाल ॥बा०॥२॥  
 जेहन देवा होय, बाँक न्यारै कदै हो लाल ॥बा०॥  
 दूष दीवती माय नी, लाँव सहु सदै हो लाल ॥सा०॥  
 मय मय ओलग कीनी, साम संभारियै हो लाल ॥सा०॥  
 हिव पिछ सेवा सारुँ, किम न विचारियै हो लाल ॥कि०॥३॥  
 माँगू न तुम पास, अनंती अह कदै हो लाल ॥अ०॥  
 माहरी हुक नै देतां, जीव न किम वदै हो लाल ॥जी०॥  
 अहि पराई आव, दवावी गलसी हो लाल ॥द०॥  
 इस लक्ष्य कुछ साम, अनंती दाससी हो लाल ॥अ०॥४॥  
 त्रिजगत स्वामी विहृद, अनादि ताहरो हो लाल ॥अ०॥  
 हूँ पिछ जमवासी, तूँ सादिव माहरी हो लाल ॥तूँ०॥  
 चन्द्रबाहु जिन मंदिर, निजर मर राखसी हो लाल ॥नि०॥  
 ज्ञानसार नौ जीव, हुलस यश दाससी हो लाल ॥हु०॥५॥

१४ ॥ श्री कुर्याम विन स्तवाम् ॥

(आज निहोरी रे दोसै नाइहो)

सँसुल तुम श्री किम ही न मिल सकूँ, ली शी मन श्री बात ।  
 कदियै कुल सुख नै धोरप दिवै, हम सोचूँ दिन रात ॥१॥सैं०॥  
 काल अनंते जे मैं दुःख सखा, तू आयौ जिनराज ।  
 दिव ओनी संकट ना भय सको, राखीजै मझराज ॥२॥सैं०॥  
 तुम बिख किछ श्री ए बीनलि, करुं कीषां श्री हुयेसिद्ध ।  
 जे पोते संसारे संसरै, ते किम आवै सिद्धि ॥३॥सैं०॥  
 संकट भिटवा काख सेवियै, पोतै संकट घाम ।  
 दुबंठा नै बाँहै निलमीयै, निहचै दूबै आम ॥४॥सैं०॥  
 तारखा तारै तूँही तारख्यै, तूँ तारक निरधार ।  
 अरज करुं दिव साम कुर्याम, ज्ञानसार नै तार ॥५॥सैं०॥

१५ ॥ श्री नेम विन स्तवाम् ॥

(करतां सँ ली मोख सहू हूँसी करै रे)

नेम प्रहृ दिव केख विचै, धोरज घरुं रे ।  
 बीली सहू जमवार, काज किम ही न सरयूँ रे ॥  
 ली ही सेवक ताइरी, अवर न मन गमै रे ।  
 पिछ फल शपत विष, मुक्त आशा किम समै रे ॥१॥

धीमे धसा कर अवर, देव इस मय कहूँ रे ।  
 तौ प्रह तुमची आंख, बांछ किम ही न किहूँ रे ॥  
 पिण दिव इस किम निभसी, साम विचारियै रे ।  
 झुझ मन धीरज हुय, तिम किमपि उचारियै रे ॥२॥  
 मीरासी उमवार, केस पर बोलियै रे ।  
 निख आस्पायै मजुज, जनम किम बोलियै † रे ।  
 शरयार्द साधार, बिरुद बी धारभ्यौ रे ।  
 तौ हवदी सुण वाठ, ताव दिव धारभ्यौ रे ॥३॥  
 तारथा केता तारिठ, तारै छै बहु रे ।  
 झुझ बेशा आलस कर, बैठी धूँ कहूँ रे ।  
 आव जमे जो अवर, देव नै सेवती रे ।  
 तौ जगनासी सर्व, देव कर पूजती रे ॥४॥  
 पिण तुम आगम वाण, सुखी तिम नहि कर्चै रे ।  
 घोरी चक्र फिरतां, अन्न किम ही न पचै रे ।  
 अदा घोरी चक्र, वासना खाटकी रे ।  
 ज्ञानसार बे बार, चढै नदी फाट की रे ॥५॥

१६ ॥ श्री ईश्वर विनस्तपन ॥

राग—(नीरा भाँदला)

आपणचै तेहवै बिना रे, गति कही केम जग्याय ।

जौहरी बिख विम रखन नौ रे, मोल किछै नबि दापौ रे ॥१॥

किम करि कीजियै, सेवा भेद अपारो रे ।

किछ परि लीजियै, चाहै लखख नौ पारौ रे ॥३॥कि०॥

दीधा बिख दातारता रे, सुबै केम लखाय ।

ओलम बिख ओलम तखी रे, रीत न आखी वापौ रे ॥३॥कि०॥

आज लमै ओलम तखौरे, जायचौ नहीय विवेक ।

ते द्विद किछ विव कीजियै रे, सबल विमासख एको रे ॥४॥कि०॥

दूर थकां ही राखज्यो रे, मुक्त सेवक पर भाव ।

तुम्ह सरिखै समरथ बिना रे, कछपै नहि निर्माची रे ॥५॥कि०॥

बादल बिख गिरवर तखी रे, छाया अवर न थाप ।

झर बिना असि धार में रे, केसै डम न मरापौ रे ॥५॥कि०॥

समरथ झर बिना कदै रे, कमलन वन बिकसाय ।

नयवर कुंम प्रहार नौ रे, सिंह बिना किछ पायो रे ॥७॥कि०॥

जलधर बिख सरवर तखी रे, पेट न अरट मराय ।

सबल पवन प्रेरै बिना रे, केसै घोर घरापौ रे ॥८॥कि०॥

मन बंझित देवां मणी रे, कल्पवृक्ष समरत्न ।

त्रिम शिव सुख मैं आपका रे, तू लावो परमस्थो रे ॥६॥कि०॥

प्रीत हकंसी पालिस्पी रे, ईसर बिन बिनराज ।

ज्ञानसार नैं तौ हुस्यै रे, निरचै शिवपुर राखो रे ॥१०॥कि०॥

१७ ॥ श्री वीरसेन बिनहावन ॥

राग—(दियरे कल्पवृक्ष सुख समझित नीची आपियै)

मैं मांझी अति गति पसी हो बिनजी,

छोड़ दिया छै पाव ।

इस छोटे पंचम भरै हो बिनजी, तुम हाथे बिरभाव ॥१॥

सुख रेदयाल राग, सुभ महरि निबर भर निरसियै ।

तुम्ह सुनिबर हो तुम्ह सुनिबर साग कै,

मेघ अमी पक्ष बरसियै ॥२॥सु०॥

जे चेखानो माजनी हो बिनजी, तेहनी अचिकी हूँस ।

खोनी पिछ नवरै पड़ी हो बिनजी,

इन्ह कह्यै तौ खँस ॥३॥सु०॥

आपमती मानूँ नहीं हो बिनजी, केहनी हितनी सीस ।

दित करणी नहीं आदरुं हो बिनजी,

न बहूँ हित मग बीस ॥४॥सु०॥

आंधो भीत बरपो रहूँ हो जिनबी,

ज्यूँ ही दिन ज्यूँ रात ।

कहिली किमपि न मय करूँ हो जिनबी,

सम विषयी जे बात ॥ ५ ॥ सु० ॥

पतिव उधारस ताहरी हो जिनबी,

विहद परीषनिवाज ।

हुकमें बी न निवाजस्यौ हो जिनबी,

तौ किम रहसी साज ॥ ६ ॥ सु० ॥

हैं सेवक प्रभु तूँ पसी हो जिनबी, बीरसेन जिनराय ।

ज्ञानसार गुणहीन बी हो जिनबी,

करस्यौ राख सहाय ॥ ७ ॥ सु० ॥

॥ ८ ॥ श्री देवप्रसाद जिन सतवत ॥

दास—श्री लखेश्वर दास जिनेश्वर जेठिये

आज सुगै फल प्राप्ति सो तुम बी कई,

सु करसी परकाश, सह खानी नहीं ।

स्वामी बी नहीं कहियै, तौ केद बी कई,

अवसर पाम्यै साज, बात किम नहि कई ॥ १ ॥

सह नी सेवा छोड़, साचबी ताहरी,

सी तैं कीध सहाय, सांकड़ै माहरी ।

देवल देवल देव, कथा अन पूजता,

दीठा-धम कण कंचन आशा पूजता ॥२॥

हैं तो अवर न मांगूं, जो चारित फलै,

तुम्ह सदायै हुम्ह मन नी आशा फलै ।

एइवै अवसर दास नै, आप न आसस्यो,

पाम अनंती रिद्ध नै, कहियै मागस्यौ ॥३॥

बी पिय सेवा सारू, पिय भिजती नहीं,

साम-सेवक सर्वथ नी, बात न का रही ।

राखेवौ सम्बन्ध, तो आज निवाजियै,

देवयशा बिन लोक नै मोसै<sup>१</sup> लाजियै ॥४॥

जे पोते निरंजन, तुमनै स्फुदियै,

कपदी नहीं जे पास, रीझावौ स्फु<sup>२</sup> लियै ।

पिय जिनराज नी महिर, लहिर एके हुस्पै,

ज्ञानसार संसार-निवास बी छूटस्यै ॥५॥

१६ ॥ श्री महाभद्र जिन सावनम् ॥

एग— ( दिवरे जगत गुरु )

मैं तो ए जाण्यौ नहीं हो जिनजी, हुम्ह बी श्वकी भेद ।

पुस्तोचम भई राखस्यौ हो जिनजी, एदिव हुम्ह मन सेद ॥१॥



कहि रे महाभद्र तुम करुणानिधि किश विधि कहैं ।

तुम ऊपर हो करुणा नदी अंश कै,

हैं करुणानिधि किम लहैं ॥२॥क०॥

जो सेवक नै तारस्यो हो जिनजी, तो दूरस्यो साह ।

चाहैं बिसुख्यो राखसो हो जिनजी,

तो स्यो कनिस्वी पाह ॥३॥क०॥

तारण केला तारसो हो जिनजी, तारै छै जयनाथ ।

आज लगे हो माहरी हो जिनजी, चीठी न चड़ी दाथ ॥४॥क०॥

दिव बहिली बाहर करौ हो जिनजी, राख्यो चाही साज ।

ज्ञानसार नै तातवा हो जिनजी, डील न कर जिनराज ॥५॥क०॥

२० ॥ श्री अमृतचौर्य चित्र स्तवनम्

गग—कामक्षिणी करतार भयो सी पर किन्तु

साहिवियै साहिवियै ससनेही किश निरागियै रे,

जे चालै तुम लैद ।

तेहनै आपै अनंती संकश रे, हो लोकी मव मव कन्द ॥१॥सा०॥

जे नहीं चालै ताहरै कथन में रे, न करै वचन प्रमाण ।

तेहनै आपै नरक निगोद तू रे,

निरुपम दुःख नी साख ॥२॥सा०॥

हूँ अपराधी निशुभ आश्रय नै रे, शिर पर धारूँ साम ।

इम जगजी नै ओ तुम तारस्थी रे,

तौ सरसी झुंक काम ॥३॥सा०॥

ओ अपराधी मोड़ी तारस्थी रे, तुमकी दोरपक जोय ।

अरज करूँ विम कीजै कान्छी रे,

विम विम मारी होय ॥४॥सा०॥

नीति रोति समझी नै मादिवा रे, अजितवीरज अम्दास ।

धीरज न कीजै पहिली दोजियै रे,

ज्ञानसार शिव वास ॥५॥सा०॥

॥ कलश-प्रकृति ॥

(काश — काशिमह धर्मौ, अन्विष्टा)

इम शोचूँ जिनवर जिनराया, आत्म संपद पाया जी ।

जैन साम खरखर करपाया, अमई अमम अमाया जी ॥६०॥१॥

रत्नराज मणि गणि मणि शीसे, ज्ञानसार मुजमीसैं जी ।

आवक आग्रह प्रेरण करसैं, मान सहित अति दीसैं जी ॥६०॥२॥

संवत अठार अठ्ठांतर वरसैं, पीतम केवल दिवसैं जी ।

विक्रमपुर वर कर चौमासैं, तवन रथ्या उन्लासैं जी ॥६०॥३॥

इति पं० श्री ज्ञानसारचिह्निक कृत विराति जिन स्तुति सम्पूर्णम् ।

# बहुत्तरी पद संग्रह

(१) राग—मैरव

कहा भरोसा मन का, अबधू मित्र रूप छिन जिनका ॥क०॥

छिन में तादा छिन में सीरा, छिन में भूखा प्यासा ।

छिन में रंक रंक तैं राखा, छिनमें हरख उदासा ॥क०॥१॥

सीधकर चक्री बलादेवा, इह चंद्र बगहिदा ।

आसुर सुरवर सामानिक वर, क्या राखा राजिदा ॥क०॥२॥

संतारी जीव पुदगल राखै, पुदगल धर्म विनाशा ।

या संगति तैं जन्म मरख मन, ज्युं जल बीच पलासा ॥क०॥३॥

मित्र भाव पुदगल तैं भावै, तूं अनकल अविनाशा ।

ज्ञानसार निज रूपे नाहीं, जनम मरख भव पाशा ॥क०॥४॥

२ राग मैरव

एही अवध तमासा, अबधू, जल में कासा प्यासा ।

है नाहि है द्रव्य रूप तैं, है है नाही वस्तु ।

वस्तु अभावे बंधादिक नौ, संभव नहीं अवस्तु ॥ए०॥१॥

बंध बिना संतारी अवस्था, घटना घटै न कोई ।

पुण्य पाप बिख राउ रंक नौ, मित्र भाव नहीं होई ॥ए०॥२॥

सिद्ध सनातन शुद्ध सवाँ, जो निरवयव नय भावै ।  
 तो बंधादिक नौ आरोपस्य, तीन काल नहि पावै ॥ए०॥३॥  
 हृदय कमल करसिद्ध भीतर, आत्मरूप प्रकाशा ।  
 पाहुं छोड़ दूर तर सौजे, अंधा अमल सुखासा ॥ए०॥४॥  
 साधमई सरसंगी मानै, सत्य विषय सुभावे ।  
 स्वादवाद रस नौ आस्वादी, ज्ञानसार पद पावै ॥ए०॥५॥

२ राग—मैरव

और खेल भव खेल बाधरे, आत्म भावन भाव रे ॥अ०॥  
 ऊपत विनाश रूप रति रसिम, जड़ के मत चित काय रे ।  
 अभिनाशी अनघट चिदरूपी,  
 कालै तुं न कलाय रे ॥अ०॥१॥  
 रोग सोग नहि सुख दुख भोगी,  
 जनम मरस नहि काय रे ।  
 चिदानंद घन चिद आभासी,  
 अमई अमय अमाय रे ॥अ०॥२॥  
 गज मुकुमाहादिक मुनि भाषी,  
 जड़ संबन्ध विभाय रे ।  
 तत्सिद्ध केवल कमला अविचल,  
 अक्षय शिवपद पाय रे ॥अ०॥३॥

इत्यादिक दृष्टान्त घनेरे, केतो लौं कदिवाय रे ।

आत्म तत बेदी सय निघ नी,

अन्य अमरा न कदाय रे ॥श्री०॥४॥

ज्ञान सहित जो किरिया साथै, आत्म बोध लखाय रे ।

ज्ञान बिना संयम आचरसा,

चौपति समरा उपाय रे ॥श्री०॥५॥

तूं जो तेरे गुण को सोचै, तो मैं कहू न समाय रे ।

ज्ञानसार तुम्ह रूपे अविचल<sup>१</sup>,

अजर अमर पद राय रे ॥श्री०॥६॥

( ४ ) राग—भैरव ।

पर<sup>२</sup> परब्रह्मन विचारै, आत्म अजा कृपासी न्यायै ॥५०॥७॥

विधवात्वादि हेतुमय आत्म, आपही बंध उदीरै ।

आप ही उदरै सुख दुख बेद, सत्प्राप्ति धित भीरै ॥५०॥८॥

औसो मूढ़ न अजर अमूर्तन, आत्म धरम न छुके ।

सिद्ध सनातन तूं सबकालै, फिर कर्ं करम अरुमै ॥५०॥९॥

सचा इन्द्रिय सुभाव लखन तें, सम अनादि सिद्ध तूं ही ।

निज सुभावमय ज्ञानसार पद, काल लम्बि सिद्ध तूं ही ॥५०॥१०॥

( ५ ) राग—मोक्ष ।

भय<sup>१</sup> अहं धर्म विचार, अवधू तब हम तें अहं न्यारा ।  
 छेदन भेदन भय भय कृषी, अहं कै नास्त विकारा ।  
 शुब्द रंग रस बाँध करसमय, उपर सटित आकारा<sup>२</sup> ॥अ०॥१॥  
 अन्य सयोगी औ लौ आत्म, लौ लौ हम सविकारा<sup>३</sup> ।  
 पर परहित से भिन्न भय अहं, तब विमुक्त निरधारा<sup>४</sup> ॥अ०॥२॥  
 बाँध मोक्ष नहीं तीनूँ कासै, नहीं हम अहं संबन्धी ।  
 ज्ञानसार अहं रूप निहार्यौ, तब निहचै निरबन्धी<sup>५</sup> ॥अ०॥३॥

टिप्पणी—

- १ अहं नाम=विचारै अहं रो धर्म सत्य पश्य विम्वरा हैं ते धर्म विचारकां ते म्हरो चेतनत्व धर्म हैं, तेको हम से अहं न्यारा ।
- २ अवलोक्यो, सटित=सङ्गो, आकार स्वरूप दे उपाय धर्म हैं
- ३ अन्य म्हांसुं जो अकारिक पद्य अहं हा म्हे संयोगी हुआ विचारै म्हरो आत्मा सविकारा—विचार सटित हुआ, शुब्द, रूप, रंग, स्पर्श रो बाँधिक हुआ ।
- ४ तिके हीन म्हे पर परहित से भिन्न भय, अहं नाम=विचारै तब नाम=विचारै, निरधार निरने संवाते विमुक्त कां, निर्मल कां ।
- ५ निर्मल स्वरूपवान हुआं कहां म्हे ज्ञान कीनो नाम= दुक्ति विः पर चित्त धननी<sup>५</sup> म्हारे अन्य मोक्ष तीनूँ कासै ही

(६) राम—मैरव

चेतन' धर्म विचारा, अबधू तब हम तैं बड़ न्यारा ॥

मिथ्यात्वादि चार नहीं कारख, बंधन हेतु हमारै ।

चेतनता परिचायी चेतन, ज्ञान सकृति विस्तारै<sup>१</sup> ॥वे०॥१॥

ज्ञान' सकृति निज चेतन सत्ता, बासी जिन दिनकारै ।

सत्ता अचल अनादि अबाधित, निश्चय नय अवधारै<sup>२</sup> ॥वे०॥२॥

नहीं म्हाँरै जब तू' किसी बंधनव इसो विचार न्हे म्हाँरो  
ज्ञानसार आत्मिक स्वरूप न्हे निहारयो देख्यो, तब नाम=  
मिथ विरिधों न्हे विचारयो म्हेवो कीन्' काले निरवन्धी  
छाँ । इति सटंक ।

१ आत्मस्व धर्म सम्बन्धी कथन आत्मा रो आत्मस्व धर्म कही  
अथवा चेतनस्व धर्म कही अबधू नाम=हे आत्मनाराम ! "तब हमतैं  
बड़ न्यारा" म्हाँरै जब तू' कीन्' हो काज में अवबन्ध है ।

२ मिथ्यात्वाविरत कथाय पोका: २ न्हे म्हाँरै हो बंधन रा कारख  
ज सो हमारै नाम=म्हाँरै नहीं । कारख नाम=कारख नहीं । क्यु'  
कारख नहीं ? न्हे तो चेतनता परिचायी छाँ । चेतना धर्मकल्प  
छाँ छाँ किछ तू' न्हे तो ज्ञान सकृति तै हीन विस्तारख करा  
इसा छाँ म्हाँरो तो यो हीन धर्म है ।

३ पूर्व कही जो ज्ञानसक्ति ते निज चेतन सत्ता निज नाम आत्मिक  
स्वरूपे सहित जे चेतन, तेनी सत्ता नाम—"सत्तेव वत्त" जिन  
दिनकारै नाम=जिन सुखें एवं बर लछें ते सत्ता केहूनी है ?  
अचल है सुख निगेदें किछ ते बली नहीं यथा "अनन्तरत्त  
अणुप्रमो आयो निरुक्तुमादियोचिद्वत्" इति सिद्धान्त बचन  
अमरपदात् अतएव अनादि अबाधित पोका रहित ।

४ निश्चय नय अवधारणा कीनी ।

अन्वय अरु व्यतिरेक हेतु भी, तुम्ह तुम्ह अंतर एतौ ।

तू परमात्म हूँ बहिरात्म तारे तम रवि अंतर तेतौ ॥ये०॥१॥

चातै दास भाव लखि अपनौ, कृपा कसर नहि कीजै ।

दीनबन्धु हे अन्तर्यामी ! ज्ञानसार पद दीजै ॥ये०॥४॥

(७) राग भैरव

जब हमे रूप प्रकाशा, अवधू जगत तमाशा भासा ॥ज०॥

टांगों बल न सिर पर भारी, तामें भूसा प्यासा ।

रोग जरजरी देखी जीरख, ऐतै पर फिर हासा ॥ज०॥१॥

रूप रंग नहीं अनुपलवस्था, निषासन नीरासा ।

सासुरूप बनित हूँ संगति, फिर हासै परिहासा ॥ज०॥२॥

चाहिये स्थान तहां कूँ हासा, मोह छक छकिवासा ।

ज्ञानसार कहि जगवासी की, बाहिर बुद्धि प्रकाशा ॥ज०॥३॥

(८) राग—भैरव

मनुआ बल नहीं आवै, अवधू कैसे रोग दिखावै ॥म०॥

ज्ञान जियो साधन तैं साध्यौ, सातर में न सुतावै ।

१ कसरवे वसरव सत्यवः कर्मावे कर्मावो व्यतिरेकः । तू परमात्म हूँ बहिरात्म तारे तम रवि अंतर तेतौ ।

२ “मोह छक छकि” नाम—ऊपर कर फिर गई । फिर आशा नाम—तृप्ति ।

पाठान्तर—१ जग २ फिर पते पर हासा ३ क्यूँ ।



सोवत जागव बैठव ऊठव, मन मानै जिह आवै ॥म०॥१॥  
 आश्रव करसी में आपेही, विष प्रेरयो उठ धावै ।  
 संजम करसी जो आरोग्य, तो अत ही अलमानै ॥म०॥२॥  
 नी इन्द्रिय संज्ञा है याकू, वै सबकुं पूजानै ।  
 इनहुं चिर कीना सो पुरषा, अन्य पुरषा न कहावै ॥म०॥३॥  
 सुर नर मुनिवर असुर पुरंदर, जो इनके वश आवै ।  
 वेद नपुंश इकेलो अमकल, सिद्ध में रोष इसावै ॥म०॥४॥  
 सिद्ध साधनै सब साधन हैं, एही अधिक कहावै ।  
 ज्ञानसार कहि मन वश याकै, सो निहचै शिव पावै ॥म०॥५॥

(६) राम—विमान

मोर भयो अब जाग बावरे ॥भो०॥  
 कौन पुण्य हैं नर भव पायो,  
 कपूँ सता अब पाय दाव रे ॥भो०॥१॥  
 बन बनित सुत आत तात को,  
 मोह मगन इह विकल भाव रे ।  
 कोय न तेरठ तू नहीं काकड,  
 इस संयोग अनादि सुभाव रे ॥भो०॥२॥  
 आज देश उत्तम गुरु संगत,  
 पाई पूरव पुण्य प्रभाव रे ।

ज्ञानसार जिन मारग लाचड,

क्यूं दूबै अब पाव नाव रे ॥भो०॥३॥

(१०) राग—बड

जाग रे सब रैन विदानी ।

उदयो उदयाचल रविमण्डल,

पुण्यकाल क्यूं सोवै प्राणी ॥१॥

कमल सुगड बन-वन विकसाने,

अबहुँ न तेरी दग उषरानी ।

पेवन धर्म अनादि तुमारी,

जद संगत तैं सुख बिसरानी ॥जा०॥२॥

तुम कुल दोय अवस्था पयै,

नीद सुपन ए जद निसानी ।

आत्मरूप संसार आवनी,

कब तुमरै घर कुमति घरानी ॥जा०॥३॥

सुधि शुधि भूतै निरुपम रूप की,

चलै घट बड़ होत कहानी ।

निरर्थ ज्ञानस्वरूप तुमारी,

ज्ञानसार पद निब राजावानी ॥जा०॥४॥

(१५) पाठ—वेलावल

मेरा कपट महल विच देरा ।

आत्मवदित चित नित प्रति चाहूँ, न तबुं सांभू सवेरा ॥मे०॥१॥

सोवत बैठत ऊठत आगत, बाको खरच पनेरा ।

मरणपकड़ै आय लम्बो हूँ, अब क्युं हिय अधिकेरा ॥मे०॥२॥

द्वार प्रवेश जिन मत संबंधी, किंग क्रिया अनुसेरा ।

दान शील तप भाव उपदेशन, च्यार साल बी फेरा ॥मे०॥३॥

प्रवृत्ति निवृत्ति बाह्याभ्यंतरै, आसीए सुविसेरा ।

प्रगट विरुद्ध जिन चरख प्रवर्तुं, एह मरोख झुकेरा ॥मे०॥४॥

टिप्पणी—१ 'किंग क्रिया अनुसेरा' नाम किंग रो ही ज अनुसरण  
है क्रिया रो ही अनुसरण है नाम=अवर्तन है  
किङ्किदिदि रोच ।

२ साधु धर्म सम्बन्धित प्रवृत्ति निवृत्ति इतरे साधु धर्म में  
प्रवर्तन न सहुं बाह्य सम्बन्धी हो म्हारै प्रवर्ती है, आध्य-  
त्म सम्बन्धी निवृत्ति है । इतरे साधुधर्मो म्हारै देख्यव-  
रूप हो है, पातक रूप नहीं ।

३ परमेश्वरे आत्मो जे आचारांगदि में साधुधर्मो रो प्रवर्तन  
ते प्रवर्तन बाकी प्रगटपणे विरुद्ध प्रवर्तुं हूँ । एह नाम-  
रूप "मरोख झुकेरा" नाम=मदिरा जो मरोखो झु-  
रखो है ।

मेरे पद लखि भरम धरै कोउ, आत्म तत्त्व उमेरा ।  
 निहचै घट तट प्रपट मया तब, ऐसा वचन उमेरा ॥मे०॥५॥  
 कपट कदाग्रह लखि गच्छवासै, तब गच्छ वास वसेरा ।  
 हिरदै नयण ओ नीका निरखुं, इह किंचित अशिकेरा ॥मे०॥६॥  
 आत्म तत्त्व लच्छन नवि दीसै, जिह बिह मयत घनेरा ।  
 ज्ञानसार निज रूप न निरख्यो, तेसैं सब ठरमेरा ॥मे०॥७॥

(१२) राम—बेसावज

जिन चरणन को बेरउ, हूँ तो जिन० ॥  
 आनै पीछै सुंदित्र तारिस, सो क्यूँ करै अवेरो ॥जि०॥१॥  
 चरमावर्त्तन चरम करख जिन, कैसे मिटे भव फेरो ।  
 तू स्थूँ तारिस तू तारक भयो, जो हूँ करिस निवेरो ॥जि०॥२॥

४ 'मेरा पद' श्रुति पद, लखि नाम=देकन कोई प्राची  
 भरम धरै इसा धरै मुख सुं निरासी वचन निरख्य  
 तो दीसै हैं इसने आत्मतत्त्व तो निरखैं लंघति एता घट  
 तट में काट भयो अग्रच्छे, पर प कवन मात्र है, स्वरूप  
 ज्ञानाभावात् ।

५ परमेश्वर स्थूँ परबुद्ध, "जो हूँ करिस निवेरो" नाम=हूँ  
 जिन चरमावर्त्तन करिस्तुं, हूँ हीन चरम करण करिस्तुं  
 तो है परमेश्वर तू तारक स्थानो ? नाम=केशी, तू स्थानो  
 तारक ? "दिशायां तारयाय" २ विश्व धारी स्थानो ?

निज स्वरूप निरूपय नय निरखूँ<sup>२</sup> छुट्ट परम पद मेरो ।

हैं ही अकल अनादि सिद्ध हैं,

अजर न अमर अनेरो ॥वि०॥१॥

अन्वय अह व्यतिरेक हेतु लखि<sup>३</sup> भेट रूप अंधेरो ।

परमात्म अंतर बहिरात्म, सादित हुओ सुरमेरो ॥वि०॥४॥

२ "निज स्वरूप निरूपय नय निरखूँ" नाम=महारो स्वरूप निरूपय नय निरखूँ को छुट्ट परम पद महारो हीन हैं अकल अनादि सिद्ध को सिद्ध हैं हीन । "अजर न अमर अनेरो," नाम=अजर अमर पद अनेरो । न. नाम=अन्वय नहीं ।

३ अहो परमेश्वर ! अन्वय हेतु दूओ व्यतिरेक हेतु द वे नो लक्षण लखि नै, भेट नाम=मिठाओ, वे रूप अकल अनादी अंधेरो अन्वय अकल अनादी—अस्तित्वे अस्तित्वअन्वयः स्वरूप सत्ये परमात्मता सत्य ! अथ व्यतिरेक लक्षणमाह—“छुट्टावे लक्षणो व्यतिरेकः स्वरूपमात्रे परमात्मता माय” बारे विचै स्वरूप नो अभावी बहो तेथी हैं बहिरात्मता तेथी तू परमात्मा हैं । हैं बहिरात्मता अू तेथी तू सादित, हैं वारी बेरो अू, पर दोनबन्धु वारी बिरुद हैं । तेथी तुमे पतित ऊपर सहिर निजर नो मरण कर, वदय को “ज्ञानसार पद मेरो” सिद्ध पद मेरो नाम=नैदो हीन हैं । इति सतंक ।

तू परमात्म हूँ बहिरात्म, तू साहिब हूँ मेरो ।

दीनबन्धु कर महिर निजर मर, ज्ञानसार पद मेरो ॥वि०॥५॥

(१३) राग—बेलावळ

कंठ कसो हु न मानै, भाई मेरो कंत० ।

किसी केर कहि कहि पचि हारी;

प्रमट कसो कहि जानै ॥मा०॥१॥

समझयेगी सो सिर सजनी, क्या कहियै मईया नै ।

दुरी बात अपने भरता की, कहियै कौन बहानै ॥मा०॥२॥

हारी बार बार कहि संजनी, तब प्रमटी कहिया नै ।

माया मन्ता कुमुदि कुबरी, उनके संग हरानै ॥मा०॥३॥

निज स्वरूप बासुक नहि जानै, पर संगति रवि मानै ।

अपै स्वरूप ज्ञान है मणिनी, अपने पर पहिचानै ॥मा०॥४॥

तब तेरे परसम परैयो, क्युं एसी दुख मानै ।

ज्ञानसार वै हिल मिलि खेखै, सिद्ध अनंत समानै ॥मा०॥५॥

(१४) राग—बेलावळ

अनुभव हम कब के संसारी ।

मर जनमे न अनादि काल में, शिवपुर वास हमारी ॥अ०॥१॥

राम दोष मिथ्या की परिचित, शुद्ध सुभाव न समानै ।  
 अनकल अचल अनादि अबाधित, अतम मान समानै ॥अ०॥२॥  
 बंध मोल नहीं तीनूँ कालैं, रूप न रंग न रेखा ।  
 निरचै नय विन आयम सेती, शुद्ध सुभाव परेखा ॥अ०॥३॥  
 काय न माय न जाय न आय न, माय न माय न आता ।  
 शुद्ध सुभावेँ ज्ञानसार पद, परे माये पर नाता ॥अ०॥४॥

( १२ ) राज—बेलावल

अनुभव हम तो राउ रैं खोरैं ।  
 फोशंगत के लुरके होकर, बारगिरी में दोरैं ॥अ०॥१॥  
 देशविरति जीवाई यामैं, क्या खायें क्या खोरैं ।  
 बाँट नरथ घर के सोद विन, कैसैं अरि दल खोरैं ॥अ०॥२॥  
 घर-बिकरी सब बेचै खाई, हाथ इलावत खोरैं ।  
 ज्ञानसार जागीरी लेकर, कैसे मूँछ मरोरैं ॥अ०॥३॥

( १६ ) राज—बेलावल

ज्ञान कला गति पेरी, पेरी, यानि मय्य अवेरी ॥मे०॥  
 मिथ्या तिमिर अमर पसरन तैं,  
 ब्रह्मत नहीं कर सेरी ॥मे०॥१॥

अम भूला इत उत दंडोकर, हे चेतनता नेरी ।  
 या विन खबर न अपनै पर की, परत सवेर आवेरी ॥मे०॥२॥  
 परमावर्चनादि कारख कर, पाकेगी मय केरी ।  
 ज्ञानसार उत दृष्टि सुलेगी, अखर अमर यद केरी ॥मे०॥३॥

( १० ) एत—वेत्तावत

ज्ञान कीदूष पिपासी, हय तो ज्ञान ॥०॥  
 अनंत काल मय प्रमद अनंतै, ए आशा नदि वासी ॥ह०॥१॥  
 मिथ्यात्वादि बंध कारख मिल, चेतनता अद मासी<sup>१</sup> ।  
 खीर नीर सप्रदेश अव्यापक, त्यों व्यापक अविभासी ॥ह०॥२॥  
 मय परिहित परिष्क काल मिल, चेतनता सुप्रकाशी<sup>२</sup> ।  
 ज्ञानसार आत्म असूत रत, दुषत<sup>३</sup> मय निरभासी ॥ह०॥३॥

टिप्पणी—

१—अद करने भासी, नाम—मिथित हुई, पर खीर नीर हैं, ते सप्रदेशो  
 अव्यापक हैं, २—देशो विम-मिम हैं । खीर तो प्रदेश मिम हैं, नीर  
 तो प्रदेश मिम हैं त्यों अविभासी हैं नाम—चेतनता अद करने  
 भासी हैं नाम—चेतनता में अद ना दृष्टिवा न संयोग संबंध है  
 निम समकाम संबंध नहीं ।

२—चेतन है बिपै चेतनता भर्मे तेदुनै बिपै रही चेतनता से सुप्रकाशी  
 अद करने विमन गई गई ककपचान गई ।

३—अनन्त ज्ञान दर्शनादि के कर नै दृष्ट गई मया संपूर्ण नामवा सी,  
 अवयव निरासी ।



(१५) राग—वैशाख

पर पर पर कर माच रखौ री ॥५०॥

किली केर गदि गदि करि छारयो,

कैसे अपनी याति कसो री ॥५०॥१॥

पर जनम्यौ विरच्यौ नहीं तुब ही,

कबही न परमव संग कसौ री ।

आपु माझी दीनो जेवें, तेवें तुम्ह' बसन द्यौ री ॥५०॥२॥

तू न सरीर सरीर न तेरो, सोपावें निज मान रखौ री ।

ज्ञानसार निज रूप निहारी,

अकल अमर पद अमर बसौ री ॥५०॥३॥

(१६) राग—वैशाख

साधो, कषा करिये अरदासा, वै जग पुरक आसा ॥सा०॥

मानव जनम देश कुल आरिज, जनम दिया जिन सासा ॥सा०॥१॥

वंश उकेश लिय जिन दरगश, रूप रंग बल आसा ।

प्रगट वंश इन्दी नर इन्दुर', पुरख आपु प्रवासा ॥सा०॥२॥

याकी महिर नाहिर सीरोदधि, रजधानी पीराता ।

शिवनगरी अभिध्याय लोक की, राज दियो रिहरासा ॥सा०॥३॥

याके अंग रंग की संगति, जग करता सुप्रकाश ।

ज्ञानसार निज गुण जग पीने, हम साहिव जड़ दासा ॥सा०॥४॥

(२०) राम—रामकली

अनुभव ज्ञान नयन अब सूँदी, सब तैं गई चकचूँदी ॥अ०॥

कराय क्माय अज्ञत जोगादिक, सरब विरत रति छूँदी ॥अ०॥१॥

सूत निधान आनादि काल की, मोहूँ शक्त नाहीं ।

अम भूखी इत उत टंटोरी, है इह ही की इहाँ ही ॥अ०॥२॥

सुगुल कृपा करि प्रवचन अजनि, वासि सिलाई आजै ।

हृदये भीतर ज्ञानसार गुण, समै सहिज समाजै ॥अ०॥३॥

(२१) राम—रामकली

अनर्प परखी निन पर कैसी ॥अ०॥

दीनक निन ज्युँ महिल न सोमै, कमल बिना जल जैसी ॥अ०॥१॥

मृदु फलज घरणी अधिकारी, प्राणिनीय पक्ष पावै ।  
 यामें झूठ भूल नाहिं कदिहूं, सौजन कैसे लावै ॥अ०॥२॥  
 सरस कदि कलियै समता घर सपरिवार हूँ भिलियै ।  
 चिरद दुसद झानसार ज्ञान तैं, अपने आत्म कलियै ॥अ०॥३॥

(१२) राग—रागकली

अबधु हम विन जग अंधियारा, है हम तैं उजियाग ॥अ०॥  
 चेतन ज्योत अखरिहत व्यापक, अप्रदेश अविशेष ।  
 प्रतिबिंबित घटादिक मखिमय, पुदगल चर्म विशेष ॥अ०॥१॥  
 अप्रदेश सप्रदेशी दृच्छा, हैं नाहि है देश ।  
 रूपारूपी की दृच्छायें, रूप अरूप प्रवेशा ॥अ०॥२॥  
 रूपो द्रव्य संजोगै रूपी, अवर अनदि अरूपी ।  
 रूपारूपी वस्तु अभायै, जंग संग न प्ररूपी ॥अ०॥३॥  
 सत्ता निम सुभायै जेनी, सरसि समभायै ।  
 ज्ञानसार त्रिन वचनामृत नी, परमारथ पक्ष पावै ॥अ०॥४॥

(१३) राग—रागकली

माई मेरो आत्म अति अमियानी ।  
 मैं तो मन वच कम रस राखी,  
 कीरवि' किमपि न आनी ॥मा०॥१॥

आभूषण तन सब रँग माँद्यूँ, प्रीतम मणि न पिछानी ।

ज्युं ज्युं हूँ दित नित प्रति चाहूँ, त्युं त्युं करत क्वानी ॥भा०॥२॥

कैसे काज निभेयी घर को, क्युं कर निसचलि ठानी ।

ज्ञानसार निगार निगम मति, पय पानी को पानी ॥भा०॥३॥

(१४) राम—रामकली

अनुभव आत्म राम आपने, सो तुम हैं नहि जानै<sup>१</sup> ॥अ०॥

गयै अनादि काल दर पुरती<sup>२</sup>, सोलै तीन सजाने<sup>३</sup> ॥अ०॥१॥

पर परिणिति के हाथ आपनी, पूंजी खपै जानै ।

बटवि रकम कवाय न पूछै, खाता मैल न आवै ॥अ०॥२॥

बाकी रकम और के खातै, कोई खूँ न सकुमै ।

देसावर आसामी काची, सो तो मूल न खनै ॥अ०॥३॥

कैसे काम रहेगो इनकी, रखे बको नहि खावै ।

ज्ञानसार जो पूंजी खपै, तो लज्जा रहि जावै ॥अ०॥४॥

टिप्पणी १ हे अनुभव नाम—आत्मिक स्वरूप चिन्तन कर-यां द्वारा अनुभवी भवै स्वरूप चिन्तन-रो वाक्य है । 'आत्माराम अजाने' नाम—द्वारो आत्मा अजान्य है सो तुममें नहीं जानै नाम—नामूँ जानो नहीं ।

२ दरपुरती नाम—साथ पीछी रा ।

३ सोलै तीन सजाने नाम—ज्ञान दर्शन चारित्र्य ना ।

(२४) खाली

आतम अनुभव खूब को, नपत्तो कोई सवाद ।  
चाखें रस नहीं संभवै, जानै गति निरबाध ॥१॥

राम—खरंग रामकली

अनुभव अपनी चाल चलीजै ।  
पर उपगारी निरुद तुमारो, बाहुं क्यूं बिसरीजै ॥अ०॥  
तुम आगम बिन हमकूँ कबदि न, प्रीतम मुख निरखीजै ।  
आज काल आवन नहि कीजै, कैसे कर जीबीजै ॥अ०॥२॥  
अब तो बेग मिलान्य पिपा कूँ, किंचित् डील न कीजै ।  
ज्ञानसार जो न बनै तुम तें, तो नौ उपर दो+ दीजै ॥अ०॥३॥

(२५) राम—खरंग

अनुभव डोलन कब पर आवै ॥अ०॥  
शशि हृष्य वचनामृत बिन कैसे, हृदय कमल बिकस्यै ॥अ०॥१॥  
मोहनीय के लरका लड़की, हँस हँस गोद छित्तावै ।  
चौमति मदित कुमति रति रस गति, रमते रैन बिहावै ॥अ०॥२॥

झूठी बात तुमारे आगे, कैसे कर बतलावै !

सुमता नाम सुनत ही अवनन, आत्म अति कटि जावै ॥अ०॥३॥

कहा कहै जो सुनै स्यानी, मोक्ष मन न मिलावै ।

ज्ञानसार आपा घर सोने, विन लेहै छठ आवै ॥अ०॥४॥

(२०) राग—सारंग

प्रीतम पतिषा क्यों न पढाई ॥प्री०॥

साडी संगत अति रति राते, पावै हम बिसराई ॥प्री०॥१॥

कुलटा कुटिल की मोहन संगति, इन सैं साम सुहाई ।

फल किपाक समो आसादन, परिणामे दुखदाई ॥प्री०॥२॥

अंत विरानी सैं घर न बसै, समझ सुचेतन राई ।

ज्ञानसार सुमता संजम घर, हिल मिलि प्रीति बढाई ॥प्री०॥३॥

(२१) राग—सारंग-वैष्णव

प्रीतम पतिषां कौन पढावै ।

बीर विवेक मीत अनुभौ घर, तुम विन कबहुँ न आवै ॥प्री०॥१॥

घर नो छहयो घरटी चार्टे, पेड़ा पाडोसण सारवै ।

कबहुँ न सुनरो घर घरखी नो, क घर रैन बिहावै ॥प्री०॥२॥

ए सब संदेसे लिख कागद, अनुभौ हाथ बनावै ।  
ज्ञानसार एते पर नावत, लौ कइय रोय बनावै ॥श्री०॥३॥

( २६ ) राग—सारंग

नाथ विचारौ आथ विचारौ ।  
दासी तैं दित निज रति खेलैं, पामैं सोय तुमारी ॥ना०॥१॥  
पर अपहर ली सुन्दर नारी, छोरी खेलत नारी ।  
अमल भसैं कूर बज सुकड, त्यों पावैं अख नारी ॥ना०॥२॥  
संयम रमखी राखी आलम, पर लगत अति रुवारी ।  
देख देख निज पर परखी सुं, प्यार करत अशपारी ॥ना०॥३॥  
सुमति पढ़ायौ अनुभौ आयौ, पर पर परठ निवारी ।  
सुमता पर में ज्ञानसार कुं, स्थायो ललिय न वारी ॥ना०॥४॥

( २७ ) राग—सारंग

नाथ तुमारी तुमही आखौ ॥ना०॥  
पर अपहर ली परखी परहर, पर रमखी रति माखौ ॥ना०॥१॥  
कर पीढ़न कर पीहर पर पर, अजहूँ न कीनौ आखौ ।  
अति आग्रह परखी पर परखी, क्यूँ एरी अति लाखौ ॥ना०॥२॥

कंत अंत पर बिन नहीं सरसी, निहचै आप पिछायी ।

ज्ञानसार रही सुनि आन, बीरत दुख बिसरायी ॥ना०॥३॥

( ३१ ) राग—सारंग

माई मेरो कंत अल्पन्त कुवासी ॥मा०॥

पर परगिल से नादा जोरत, सोरत बिन हैं लासी ॥मा०॥१॥

सुमति बिरति अद्वा गुन परमम, बोलत अकसी बासी ।

माया ममता अविरति कबने, करिय कुमति पटरासी ॥मा०॥२॥

यादू मेरे बैरी ज्यादू, मिलत आपसी बासी ।

प्राणै प्रीति बसाई कैसैं, ज्ञानसार रह दासी ॥दा०॥३॥

( ३२ ) राग—सारंग

अनुभव पयै तुमरी दासी ॥अ०॥

मीत अनीत रीति नहीं इटकी, पावै कहा स्याबासी ॥अ०॥१॥

पर पर पर पर मटेकत जोरत, कैसी पदवी पासी ।

कौन पिता कुल किनको बीटा, संग रवै सो दासी ॥अ०॥२॥



कर उपाय मिथ्या संग टारी, नदी बब बब मटकाती ।

“ज्ञानसार” मिल मिल समझानै,

सदियै समझै जाती ॥अ०॥३॥

(१६) राम—सारंग

कहा कहियै हो आप सपान तैं ॥क०॥

अंत दुखाय क्यो नही जायै, प्यारी अपनी यांन तैं ॥क०॥१॥

अन्योक्ति दृष्टान्त सुनानै, कोई पाट बयान तैं ।

एते पर भी सूर न चूमै, प्रगट देख अस्थियान तैं ॥क०॥२॥

उद्यम सिद्ध निदान सरमवर, सुमति कई सस्थियान तैं ।

जाय मिलै अब ज्ञानसार तैं, कौन गरज सस्थियान तैं ॥क०॥३॥

(१४) राम—सारंग

प्रहृ दीनदयाल दया करिये ।

मैं हूं अधम तुम अधम उधारण,

अपनै विरुद कूं निरबहियै ॥प्र०॥१॥

अधम उधार अधमउधारण, विरुद भझो चित चितइयै ।

मोहि उधार प्रतच्छ्र प्रमासो, विरुद मनुज लोभे लइयै ॥प्र०॥२॥

तो सौ तारक अवध न मोली, उभरन कस क्यूना करिये ।

ज्ञानसार पद राज विगावै, सहिजै मनमामर तरिये ॥अ०॥३॥

(३२) राज—आज्ञा राजगिरि)

अधपू ए अगका आकारा, कोई करण न करसोइराग ॥अ०॥

पृथिवी पाखी पवन अकाशा, देखत होत अर्चमा ।

इत्यादिक आधेय परगट, दीसत कोय न थमा ॥अ०॥१॥

या मरमैं भूतै जगवासी, कता कारण गावै ।

करम रहित जग कता कारक, कैसे कर संबावै ॥अ०॥२॥

करतु अकरतु अन्यथा करसै, समरथ साहिब माया ।

षट पट षटनार्यै पुन पटबी, या रच जग निरमाया ॥अ०॥३॥

करयौ न कोई करैय न करसी, यह अनादि सुभावै ।

बिनभ्यौ कदे ही न बिनसे ए जग,बिन आगम बिन गावै ॥अ०॥४॥

अगन शिला पंकज नदीं प्रगटै, शक्तिक ऊंट नही सीगा ।

आकासे न हुवै फुलवाही, कौसौ माया अ'या ॥अ०॥५॥

कृत विनाश अकृत अविनासी, शब्द प्रमाण प्रमाणै ।

ए लवण तुमरी लखखायै, शंकर दूषण आयै ॥अ०॥६॥

अन्त आद बिन लोक न कहिस्सौ, पथ अद्विरख संडासी ।

प्रथम पदैं षटना नहि संभव, समकालै ही बड़ासी ॥अ०॥७॥

प्रथम पक्ष पुस्ता नहीं जारी, सैंसे इण्डा पंखी ।  
 बीज बिंख नहीं पाछें पहिला, है समकाल अपेसी ॥अ०॥८॥  
 लोक अनादि अनंत भंग थी, है पट द्रव्य वसेरा ।  
 पाछें अंते हानसार पद, सब सिद्ध का डेरा ॥अ०॥९॥

(२६) राग—आसावरी

अवधो हम बिन जग बहुत भारी,  
 अ० जगत् हमारे माहीं ॥अ०॥  
 हम ही नै कीया संसारा, हम संसार की पूंजी ।  
 पांच द्रव्य हमरो परिवारा, हम बिन वस्तु न दूजी ॥अ०॥१॥  
 उपति नाव धिति मय संसारा, सो हमरो व्यवहारा ।  
 उपति खपत धिति करता हम हो, यार्तें हम संतारा ॥अ०॥२॥  
 एक कला हमरी हम छोड़ै, सब जग हूँ निरमायै ।  
 बाही कला हम मांदि मिलानै, हम में जगत समावै ॥अ०॥३॥  
 एक कला व्यापी जो हम घर, यार्तें असंख निमायै ।  
 हमरो सरब कला व्यापी घर, ज्योति अमंडित जगै ॥अ०॥४॥  
 हानसार पद अकल अमंडित, अचल अरुण अविनासी ।  
 चिदानंद चिद् व परमपद, चिदवन घन अविध्यासी ॥अ०॥५॥

३० राम—आत्मा

अवधू आत्म तत् वनि बूझै, आपही आप सुरूझै ॥ अ० ॥  
 आत्म देव धम्म गुरु आत्म, आत्म सिध सिध शिखा ।  
 आत्म शिष्यपद करता करखी, आत्म तत्त्व परीखा ॥ अ० ॥ १ ॥  
 आत्म गुण धानक आरोहण, बाधिक चरख वितरखी ।  
 आत्म केवल ईश्वर नाखी, अचल अमर पद धरखी ॥ अ० ॥ २ ॥  
 अग्निहंत सिद्ध आचार्य पाठक, साधू संयमवंता ।  
 आत्म मेरी ज्ञानसार पद, अव्यावाय अर्नका ॥ अ० ॥ ३ ॥

(३५) राम—आत्मा

अवधू या जय के अववासी, आस्था पार उदासी ॥ अ० ॥  
 जलधि उल्लंघै तिथेय न अंगै, विष ओखम में वैसे ।  
 जो निरआसी सुरा न उदासी, दिल चाहै उठ वैसे ॥ अ० ॥ १ ॥  
 बँदेहक विन जो निरआसी, सोई विहँवन नासी ।  
 बाकी आस्था विन आस्था नो, बीज बीन ऊगासी ॥ अ० ॥ २ ॥  
 कामादिक सब बाकी संतति, पर करिछत की मासी ।  
 पातैं योगी सोय सरोमी, जो आस्था नहीं बासी ॥ अ० ॥ ३ ॥  
 नखरंघ मधि अनहद पुनि कूँ, सहिजै आप पुरासी ।  
 आत्म परमात्मा अनुसर, ज्ञानसार पद बासी ॥ अ० ॥ ४ ॥

( ३६ ) राग—आसानी

अबधू आतम मरम झुलाना, यानै आतम तत न पिछाना ॥अ०॥  
 आतम तत में भ्रम तम नाही, निज सरूप उजियाग।  
 जनम मरम यति आयति नाही, शिवपद विष बखियारा ॥अ०॥१॥  
 जिह नहि रोग सोय नहि मोया, अचल अनादि अयाया।  
 याको अविधा ज्ञानसार पद, अबधू अव्यापध ॥अ०॥२॥

( ४० ) राग—आसा

अबधू सुमति सुहागिनी आमी, कुमति दुहागिन यापी।  
 अवित्तवाद पच फल अन्वित, जिन आगम अनुपाई।  
 ऐसे शब्द अरथ को प्रापति, याको संवति पाई ॥१॥  
 विष प्रतिषेध करी आतम यो, रूप द्रव्य अविरोधी।  
 ऐसी आतम धरम महस विष, ग्रहीयो गहस विषोधी ॥२॥  
 न रह्या धरम मया उजियारा, सदगंत धरम पिचारा।  
 ज्ञानसार पद निहचै चीना, जलमय जल व्यापारा ॥३॥

( ४१ ) राग—आसा

अबधू आतम रूप अकासा, धरम रक्षा नहीं वासा ॥अ०॥  
 नहीं हम इन्ही मन बच तन बल, नहि हम सास उकासा ॥अ०॥१॥

क्रोध मान माया नहीं लोभा, नहीं हम जग की आत्मा ।  
 नहीं हम रूपी नहीं मय कृषी, नहीं हम हरल उदासा ॥अ०॥२॥  
 बंध मोह नहि हमरे कबही, नहीं उत्पत्त बिनासा ।  
 हृद सरूपी हम सब कालै, ज्ञानसार पद वासा ॥अ०॥३॥

( ४२ ) राग—भासा

अवधू आत्म धरम सुभावेँ, हम संसार न आवै ॥अ०॥  
 बही भरम हम मय ससार, हम संसार समाये ।  
 उदित सुभाष बालु आत्म पट, अम तप ते भरमाये ॥अ०॥१॥  
 पट पट पटना पट पट न पटै, तीनूँ कल प्रमाये ।  
 जलारधारस थी सीतातप, पट में कब न पटावै ॥अ०॥२॥  
 तेहे आप धरम थी आत्म, कोई कल न आवै ।  
 निमरम सदा कल तुम्ह बाहि, चेतन धरम स्मावै ॥अ०॥३॥  
 जल तरंग थी अनपल चंचल, छाया वृष ललनवै ।  
 ज्ञानसार पद मय निरचै नय, सिद्ध अनादि सुभावे ॥अ०॥४॥

( ४३ ) राग—भासा

अवधू जिन मत जग उपकारी, या हम निदवै धारी ॥अ०॥  
 सरब मई सरबगि मानै, सचा मित्र सुभावे ।  
 मित्र मित्र पट मत मय बालै, मत मयच हठ नावै ॥अ०॥१॥

नयवादी अपनी मत धारै, और सह ऊपारै ।  
 पहनै बाण उत्पापक बुद्धि, एक एक देखै व्यापै ॥अ०॥२॥  
 जे जे सिद्धान्तों में आस्था, वट मत अंग सुधारै ।  
 जिन मत नै सरपंगी दाखै, किन्तु विरोध न करतावै ॥अ०॥३॥  
 मत ममत बातों न उदीरै, तदगत अशुद्ध सुधारै ।  
 घेदै नहीं नंदै नहीं सबकुं, यथायोग्य बरचावै ॥अ०॥४॥  
 एहो निकोषी निरमानी, अममार्ह अममती ।  
 तेथे जिन मत रहिस विद्वानयो, अन्य ते मत ममती ॥अ०॥५॥  
 ऐसैं शुद्ध जिनागम वेदी, ते निज आत्म वेदै ।  
 ज्ञानसार भी शुद्ध सुपरशित, पावै सिद्ध असेदै ॥अ०॥६॥

(४४) राम—आज्ञा

अवधू कैसी कुटुम्ब सगारै, बाल्यै नहि संकल्प सदावै ॥अ०॥१॥  
 मात पिता दयिता बेटे ही, सबजौ सुत मरजावै ।  
 उन बेटे ही मात पिता सुत, आधी बें उठ आवै ॥अ०॥२॥

जननी जाया जया जननी, मर पिय धरै मारै ।  
 माता बनिता बनिता माता, पित् माता पुन नारै ॥अ०॥२॥  
 दुख दोहय दुरगनें इकेलौ, जनमें फिर मर जाई ।  
 बंध भोग में जाय इकेलौ, क्यूँ समझै नहिं भाई ॥अ०॥३॥  
 शुद्ध जनादि रूप हूँ सोचे, जड़ में तूँ न समझै ।  
 समझाई गुन जो तुझ सुझै, ज्ञानसार कह जाई ॥अ०॥४॥

(४४) एग—मासावरी

मेरा आत्म अतिही जयाना, यानै आत्म हित नहिं जाना ॥  
 मेरा आत्म अतिहि जयाना, यानै आत्म हित नहिं जाना ।  
 काम राग अहित अति दारा, नेहादिक लघु दारा ।  
 मन बच काय करम विन रोचे, आश्रय द्वार उपारा ॥मे०॥१॥  
 उन आश्रय सैं करम रूप जल, सरवर जीव भराया ।  
 याति भीमति मांदि भयाया, अजहुँ अंत न आया ॥मे०॥२॥  
 अब जिन धरम के शरखे आया, आत्म रूप न पाया ।  
 ज्ञानसार गुन तेरो पीने ली, याति आगति नहीं काया ॥मे०॥३॥



(४६) राग—आशा

साधो भाई ऐसा योग कमाया, पार्ते सुगन्ध लोक भरमाया ॥सा०॥  
 बाह्य किया दरसाई साची, अम्पंतर तैं कोरा ।  
 मासाइस परिकर फिर लोचिस, रे रे आत्म चोरा ॥सा०॥१॥  
 संभम पायो पुन संयोगी, पान्यौ नहीं तैं पापी ।  
 फिर ऐसो नहिं दाव बसौंगो, चितवन चित अघ्याप ॥सा०॥२॥  
 क्या कहियै कहूँ कसो ह न मानै, रे रे आत्म अघा ।  
 ज्ञानसार विन क्य निहारै, निहचै हे निरबंधा ॥सा०॥३॥

(४७) राग—आशा

साधो भाई आत्म भाव परेखा, सो हम निहचै लेखा ॥सा०॥  
 नहीं व्यवहार संसार तैं कबही, नहीं हमरे क्य लेखा ।  
 नहीं इनसैं छावी नहिं बाकी, छाया सदाई देख्या ॥सा०॥१॥  
 समचारै आत्म समवाई, तीन् काल विशेषा ।  
 मिट गया भ्रम भवा ठजिपारा, ज्ञानसार कद पेखा ॥सा०॥२॥

(४८) राग—आशा

साधो भाई आत्म खेल अलेखा, सो हम खेल न लेखा ॥सा०॥  
 बंध मोख सुख दुख की पटना, आत्म खेल न पटना ।

सिद्ध सुनाउन है सब काही, उषत विनाश अघटना ॥सा०॥१॥

नाहीं पुरुष नरुंसक नारी, शुब्द रूप नहीं फासा ।

नहीं रत्न बंध नहीं बल आयु, नहीं कोऊ सास उसासा ॥सा०॥२॥

नहीं तन्त्रा दूतें नहीं आगें, नहिं ऊमैं नहीं बैठे ।

नाहीं जलैं जलन की भासा, नहीं समाधि में बैठे ॥सा०॥३॥

ए निर्चै आत्म को खेला, इनमें कबहु न आए ।

हम विषहारी आत्म हमरे, प्रम तम हैं मरमाए ॥सा०॥४॥

मया मरम मया उखियारा, लोकलोक प्रकाशा ।

ज्ञानसाग वद निरूपम चीना, उनका यही समाशा ॥सा०॥५॥

(३६) राग आशा

साधो माई जग करता कहि माया, सोई हम निरमाया ।

मिथ्या संग करो जब तब ही, माया पुत्री आया ।

जनमत घट पट पटना पटवी, यासुं जग उपजाया ॥सा०॥१॥

कोभादिक बाकी परिवारा, जग व्यापक अणुपारा ।

उपवि खपति धिति बाकी संवति, सोई जग व्योदारा ॥सा०॥२॥

यासुं मित्र कइ करता नै, माया जिन निषजाया ।

उवां माया सुं जगत उवाया, ए झूठी अपवाया ॥सा०॥३॥

करम रदित पुन माया कारक, एह अर्थाभव वाता ।

छाये बिना इकेली अवनो, नहीं पूर्वा उपकता ॥सा०॥४॥

कलु<sup>१</sup> अकलु<sup>२</sup> अन्वया करसै, हम हो हैं सामर्थी ।

पर परिचयि से बिन भए अब, किंचित कर असमर्थी ॥सा०॥५॥

अचल अमार्थ<sup>१</sup> असाधित अन्वय, अहज अनादि सुभावे ।

ऐसे ज्ञानसार पद में हम, जीत निमान घुरावे ॥सा०॥६॥

(३०) राम—माता

साधो भाई अब हम भए निरासी, सब तैं आसा दासी ॥सा०॥

राव रंक धन निरधन पुरा, सब ही हमरे सरिखा ।

निर आदर आदर गमनागम<sup>१</sup>, नहीं कोई हरख उदासा ॥सा०॥१॥

गजा कोऊ पांव जो फरसै, सोहु तनक न राखी ।

दुर्वचनै जो कोऊ तरजै, तो आत्म न बिगजी ॥सा०॥२॥

अरा जन्म मरख बस काया, पातैं नहीं बरोसा ।

बिन प्रतीत को आसा पारै, छोड़ दिया तिय सोसा ॥सा०॥३॥

अब बेकिहर सुखी दिल सब दिन, नेतमोह मनपस्ती ।

पातैं उदै अस्त नहीं क्यूँ, क्या सजा क्या बस्ती ॥सा०॥४॥

भूख पिपासा शीत उष्णता, सबै<sup>१</sup> तनु न सुभावे ।

वाक्यान्तर—१ अनादि २ यदि सबकी ३ क्यूँ ।

सरस निरस लायालाभै पुन<sup>१</sup>, हरस शोक मन नावै ॥सा०॥२॥

एते पर आत्म अनुभौ बलि, मन समाधि नहीं आवै ।

मन समाधि विनु ज्ञानसार पद, कैसे हू नहीं पावै ॥सा०॥६॥

(२१) राग—आशा

सुखी घर में होत लड़ाई, कौन लुड़ावै आई ॥सं०॥

घर को कहै मेरो घर नाही, परकीया कहै मेरो ।

मेरो मेरो कर कर बारणो, करचौ जगत की चेतो ॥सं०॥१॥

सुरनर परिहृत देखे सब ही, कौन लुड़ावै आई ।

कमल<sup>२</sup> वाला ज्ञाप ही समकै, बांध छोड़ उन माहि ॥सं०॥३॥

मिट गया जेरा हुआ सुरमेरा, आध्यात्म पद चोना ।

केवल कमला रन सब<sup>३</sup> संगे, ज्ञानसार पद सीना ॥सं०॥३॥

(२२) राग—आशा

ताधी भाई निहचै खेल अखेला, सो हम निहचै खेला ।

ना हमारे कुल जात न पाँसा, ए हमरा आचारा ।

मदिरा मांस विवर्जित जो कुल, उन घर में पैतरा ॥सा०॥१॥

वर्जित वस्तु बिना जो देवै, सो सब ही हम खावै ।

ऊनी ना फाड़ अकरापित, घोबल जल सब पीवै ॥सा०॥२॥

पाठान्तर—१ विषु २ वस ।

टिप्पणी—आत्मानि अपि इति अप्पत्ती ।

पदिकमशा पांशु नहीं लायक, सायायिक ले बैमें ।  
 साधु नहीं जैन के जिन्दे, जिन घर जिन नहीं पैमें ॥सा०॥३॥  
 आवक साधु नहीं को साधवी, नहीं हमरे आवकणी ।  
 क्षी अक्ष जिन सम्बन्धी, सो गुरु सोई गुरुणी ॥सा०॥४॥  
 नहीं हमरै कोई गच्छ विचारा, गच्छवासी नहीं निर्दे ।  
 गच्छवास रतनागर सागर, इनकु अहनिशि बंदे ॥सा०॥५॥  
 थापक उत्पापक जिनवादी, इनसे रीक न भीजें ।  
 न मिलणी न रिद्वन बंदन, न दिव अदिव न भीजें ॥सा०॥६॥  
 न हमरो इनसे वादस्थल, चरचा में नहि खीजें ।  
 किरिया क्वि क्रिया ना रागी, हम किरिया न पतीजें ॥सा०॥७॥  
 किरिया बकु के पान समाना, स्वतारक जिन वासी ।  
 मोई अर्धचक वचक सो तौ, चौपति कारख दासी ॥सा०॥८॥  
 वै किरिया कारक कुं देखें, आत्म अनिही हीसै ।  
 वचम काले जैन उदीपन, एह जंग भी दीसै ॥सा०॥९॥  
 सब गच्छनायक नायक मेरे, हम हैं सबके दासा ।  
 वै आलाप संलाप न कियसुं, न कोई हरस उदासा ॥सा०॥१०॥  
 पदिकमशा पोसा न करावै, करतां देख्यां राजी ।  
 पचसाखे व्याख्यान न आग्रह, आग्रह थी नवि राजी ॥सा०॥११॥

जो हमरी कोऊ करै निन्दा, किंचित् अपमरस आवै ।  
 फिर मन में जय नीति विचारै, तब अविधि पछित्त आवै ॥सा०॥१२॥  
 कोधी मानी मापी लोभी, रागी डोषी पोषी ।  
 साधुपणा मो देश न लेश न, अविचेकी अपबोधी ॥सा०॥१३॥  
 ए हमरी हमचर्चा माली, पै इनमें एक सारा ।  
 जो इन ज्ञानसार गुण जोनै, सो हूँ मरदावि पारा ॥सा०॥१४॥

( ४१ ) राग—शुद्ध वसन्त

क्युं जात अज्ञानक आए जोर,  
 कर महिर निजर ललनी की जोर ।  
 परमाय रूप अंधियार तोर, तुमुभाव उदै रावि के सजोर ॥१॥  
 अथ शुद्ध रूप गहिकै अनूप, बगियै केवल कमला स्वरूप ।  
 तब ज्ञानसार पद तुम्ह सकुप, पायो आत्म परमात्म रूप ॥२॥

( ४४ ) राग—शुद्ध वसन्त

क्युं जात चतुर पर पित बटोर, इन प्रीत पक्ष नहिं चलत जोर ।  
 किन कहै निहोरे हेत माहि, न चले हित प्रीतम आप जाहि ॥१॥  
 एक हाथै तारी नहिं बजंत, जानत क्युं लैचत अंत संत ।  
 परखी बिन पर कौ काज राज, को करिहै जिह एते समाज ॥२॥  
 पर पर में क्या काह्यै सवाद, बिनमें एतौ लोकाववाद ।  
 यार्तै अपने पर चाल कंत, जिहि ज्ञानसार सेजे बसंत ॥३॥

(२५) राग—शुद्ध वसन्त

कित<sup>१</sup> जहँ<sup>२</sup> कवा कहिये<sup>३</sup> बयान,

तुम जान सुजान<sup>४</sup> क्यूँ हो अवान ॥६॥

इह स्यादवाद कुल<sup>५</sup> की मजाद, पर पर पय पर नै क्या सवाद ॥७॥

अलबेली<sup>६</sup> अकेली हूँ उदास, वै सिखा इह खोरुं नहीं आवास

अपने तुल अपनी क्या प्रशंस, बरने अब शोभा जात बंस ॥८॥

१ सुनति बाक्य—'कित जहँ' नाम—म्हारे स्वरूप रूप पर निरु बिना रहे कहीं जहाँ, म्हारे जानखे कहीं होत नहीं । हे आत्मराम भर्तार ! धारो स्वरूप पर सो खोजने के पर पर मैं रम रहा हूँ। तेनो कमान कमान कवा कहिये, म्हारे मुखे क्या कहुँ साज आवै, रही जायबाव ।

२ पुनः ये आकाश हुआ छे हूँ क्यूँही कहूँ, भिन्न ये सुताय जायता बसत क्यूँ हो आकाश जम-बसुँ आकाश हुआ छे इतरे ये विरूप मैं कहुँ बनलै रहा छे, भिन्न न्यम-नवाकार गुंनवै ।

३ इह नाम=सा । ये प्रभूर्तो सिखा या स्यादवाद कुल की मरजाद है काई । ये पराने परे नाम=वक्तादिकरै परे मतक रहा छे इधमे 'कवा सवाद' नाम=भौह समाद कावौ छे । गतजन्ति कित रै विरै असहनीय दुख सह रहा छे ।

४ हे भर्तार ! हूँ अलबेली हूँ, काको कुदरीनी न हूँ भिन्न अकेली

घर परखी<sup>१</sup> को एडोषमान, जगवादी<sup>२</sup> कूं कर्णु देत मान ।

समझाय वीर घर आन कैंत, बिह ज्ञानसार खेलत बसंत ॥३॥

( १६ ) राग—बमल

मनमोहन मेरे क्या न आवे हो,

आली री वृद्धि<sup>३</sup> अनुभव मीठई<sup>४</sup> मीत ॥म०॥

आरै कौन कौन कूं न्याऊं, छोरै नहीं छिन साथ ।

ममता संग रैन रंग<sup>५</sup> राते, बदमाते साधीई<sup>६</sup> साथ ॥म०॥१॥

कबहु नेक निजर नहीं छोरे, बातन की कहा बात ।

गूँक बूँक सबही उनहीं तैं, उन बेच दिये बिकात ॥म०॥२॥

धरती हूँ उदास कूँ, निरुप न्हारो जो घर ब्याप्त्यदि छियमै हीन नही  
बोझ<sup>७</sup> कूँ । त्वमुसे स्वयंशक्ति काई कर्क<sup>८</sup> न्हारी प्रशस्त जाति हो  
गुरु आत्मीक रूप बंश सुनतिबन्त आत्मा व न्हारी शोभा करै  
पर्यंत करै ।

१ 'घर परखी' गुरु सुनति देखनी तो एतलो अपमान करी सुनयो  
है बतझायस निरुप नही ।

२ 'जगवादी' जे सुनति देखने पटखो मान किम कै ? हे वीर  
अनुमो ! तमे समझयो नैं स्वरूप घर में कां न जायो  
जिहो ज्ञानसार आत्मिक स्वरूप प्रसन्न किसी लोको बसन्त  
सेली रह्यो है ।

३ दिव



मेरो न तेरी मरख पिषा कै, राते चित चित रंग ।  
 अबनौ आप सरूप भूलकै, जोर रहे अढ़ संज ॥म०॥३॥  
 तेरो पिषा तेरे वश नाहीं, कोलों करें हम ओर ।  
 प्रथम करनलौं प्रीतम आये, अब जाय मिली करजोर ॥म०॥४॥  
 अनुमौ आय पिषा समझाये, घर न्याये वन रंग ।  
 हुनति मदित मिल ज्ञानसार सुं, लेलौं बमाल उमंग ॥म०॥५॥

( ४० ) राग—पूरबी

छकी छवि बदन निहार निहार ।  
 प्रेषित पति अगमागम कीनौ, बिसरी बिसत बिहार ॥छ०॥१॥  
 गये अनदि काल में ऐसी, दीठौ नहींच दीदार ।  
 निरुपम निजर निहार निहारत, रविष रूप रिझवार ॥छ०॥२॥  
 अंतर एक सुहृद अंतर, प्यार करी अरावार ।  
 लीनै ज्ञानसार पद भीतर, बैठनता भरतार ॥छ०॥३॥

( ४८ ) रागबी—बरख

सासरैरि आज रंग वषाई म्हारै० ॥  
 गांव गौरवै प्रीतम आये, अनि अवश ठसु पारैजी,† म्हारै ॥१॥  
 घसमस चलीय मिली संजम घर,  
 निरख इरख इरसाई जी, म्हारै० ॥

माया ममता कुबुद्धि क्वचरी, रही बदन बिलसाई जी, म्हारै० ॥२॥

चेतनता केवल शिव कमला, सुमति सुचेतन राई जी, म्हारै० ॥

ज्ञानसार धूँ रस बस हिलमिल, सोनै कंठ लगाई जी, म्हारै० ॥३॥

( ४३ ) राग—माह

पिया बिन खरी (य) दुहेली हो, बि० ॥

देर दिरानी सास मिटानी, सब दे राखी छली हो ॥बि० १॥

पिय संवति अति व्याप्यो ओ मुख, सो मुख इन दुख भूली हो ।

कलहुँ बिन पानी ज्यूँ मछली, बिरहै ग्रहण गहेली हो ॥बि० २॥

देर देर के बेर कहत हूँ, विसरन रहयो हकेली हो ।

न सासर न पीहर आदर, बिर आदर अलबेली हो ॥बि० ३॥

अलौ जमायौ बिरहण नारी, सरधा कहेय सहेली हो ।

ज्ञानसार धूँ मिलियै धूँ ज्यूँ, इल सुवास चबेली हो ॥बि० ४॥

( ५० ) रागणी—कमवासी

पिया मोझूँ काहे न कोलै, दे दे सोनै पीठ ॥बि० ॥

सौजन संग पिया बिरमाये, नेक न जोरै दीठ ॥बि० ॥१॥

को जानै गति अंतर गति की, वाचूं कहा बसीठ ।  
 कौलों कहिकहि पिय समझावूं, निठुर निलज है घीठ ॥पि०॥२॥  
 वीर विवेक पिया समझावे, ता पर अनुभौ ईठ ।  
 सरसा सुमता ज्ञानसार कूं, जाय बनावै नीठ ॥पि०॥३॥

( ६१ ) राम—धन्यासी मुकतामी

प्यारे नाह घर बिन, योही जीवन जाय ॥ प्यारे ०॥  
 पिय बिन या वय पीहर वासी, कहि सखि केम सुहाय ॥१॥  
 हा हा कर सखि पद्यां परत हूं, रुठवौ नाह मनाय ।  
 घर मन्दिर सुंदर तनु भूषन, मात पिता न सुहाय ॥२॥  
 इक एक पलक कल्प सौ बीतत, नीसासै खिय जाय ।  
 ज्ञानसार पिय आन मिलै घर, ती सब दुख मिट जाय ॥३॥

( ६२ ) राम—धन्यासी

घर के घर बिन मेरो कौसो घर घर माहि ॥घ०॥  
 मैं पीहर पीया परदेसी, सरका मेरे नाहि ॥घ०॥१॥  
 कुल कौहु नहिता नहि कबहु, आतन निहतन जाहि ।  
 ऐसै घर हूं पूंची लागी, जोगन हूं निकसाहि ॥घ०॥२॥  
 वीर विवेक कइ सुख मैली, एली दुख क्यूं कराहि ।  
 आगम आवन कीनो भरता नै, ज्ञानसार बल बाहि ॥घ०॥३॥

(६३) राग—सोरठ

रहै तुम आज कपुंजी बदन दुराय ॥१०॥

जिय जीवन सलियन में प्यारी, डारी हा हा साय ॥१०॥१॥

अविरति पूँवट पट ऊपारी, अनुभव मुख विरसाय ।

इते पर भी मान न मैने, मूर्खें व्याज बढ़ाय ॥१०॥२॥

मव परिचित परिपाक इते पर, आई धाई माय ।

अति आग्रह सब ज्ञानसार हूँ, लीने कंठ लगाय ॥१०॥३॥

(६४) राग—सोरठ

रैन बिहानी' रे रसिया, आग निखद स बीर कै रैन० ॥

मिछो बिभाव तिमिर अधियतो, खर सुभाव उगानी रे रसिया ॥१॥

तुम कुल एक ऊजामगवस्था, खार गहो है बिरानी ।

पार्तै हूँ धकपूख उठानूँ, कपुं सुभ सुभ बितरानी रे रसिया ॥२॥

मव अपने पर आप बघाती, अन्त बिरानी बिरानी ।

ज्ञानसार हूँ कुमति दुहागिन, माग मई विलखानी रे रसिया ॥३॥

हे आत्माराम ! पारै लड़ै गुणछाये ते ली अन्तर्मुहूर्त  
पूरी यही सो लो लूँ मनादी ली, साजमे गुणछाये ते  
आथा प्रवर्ती लक्ष्म आनखो कर्न अपमादीत्वात् हे निखद !  
शुद्ध चेतना तेहना मई, अतएव विभावहृय तिमिर अन्धकार  
मिछो, सूर्य रूप स्वभाव उदै यही ।

(६४) राग—सोरठ

बारो नखदल वीर, कई कौलू ॥ बारो० ॥

बिधवा गशिका पूंखी खाई, बसमे जनम फकीर ॥१॥

गई गई सो भलिय रही सो, पर पर मनको धीर ।

कौलू धीर धरु धीरध धर, विरहे जनम वहीर ॥२॥

माल लाल बिन्दी नहीं मानै, आभूषण नहीं चीर ।

ज्ञानसार बाली आन मिलै पर, लौन रहै कोई वीर ॥३॥

(६५) राग—सोरठ । आक, सांघरे रंग राखी

लालना ललचावै, बारी मौने ॥लालना०॥

शिख में रुसख तूसख शिख में, शिख में रोय हँसावै ॥बा०॥१॥

अन्तर वेदन कोय न बूझै, प्रगट कही ह न आवै ।

घोषै धूर उड़ाव इसै घर, जंगल जाय बसावै ॥बा०॥२॥

वीर विवेक संग ले जाय, सुमता कंठ लगावै ।

ज्ञानसार प्यारी सुदु सुसकत, परमारथ पर पावै ॥बा०॥३॥

(६६) राग—सोरठ

मेली हूँ इकेली हेली, लगौ ललावेली ।

जिय जीवन सौतन सग सेली, यातै सरिय दुहेनी ॥१॥

जक न परत खिन मोतर अंगन, ललहुँ अति अलवेली ।

शिख सोवूँ शिख बैहूँ उहूँ, जाये जनम गहँली ॥२॥

हैं अचानक शीतल आये, सेरी अनुभव सेली ।  
 ज्ञानसार हूँ हिलमिल सेली, सरसा सुमति सहेली ॥३॥

(६८) राग—सोरठ

बरसा ली आया माया अलुं न जुझाया ।  
 बाहिर अम्बरदर कम खग यूँ, मानू खोम कमाया ॥म०॥१॥  
 निपट निकामी निपट निरासी, निरमोही निरमाया ।  
 प्यानी आतमज्ञानी जानी, ऐसा रूप दिखाया ॥म०॥२॥  
 मान खोद मद छकता छोकी, छोको घर की माया ।  
 काया सतकृपा सब छोकी, तउम न लूटी माया ॥म०॥३॥  
 लगतैं इक रवेताम्बर अबकी, सरब शास्त्र में गाया ।  
 ज्ञानसार के सगलें बखती, माया पांती आया ॥म०॥४॥

(६९) राग—सोरठ होली

अरी मैं, कैसे मनावें री, मेरो पिपा घर संग रमत है ॥ कैसे०  
 सौतन संग रैन रंग रमतां, हृदि न जुलावै री ॥मे०॥१॥  
 हाहा कर सखि पदपां परत हूँ, पीष मितावैं री । एरी कोई०  
 विरहानल अति दुसह पिपा विन, कौन जुझावैं री ॥मे०॥२॥  
 सुमति संग से अनुशी आये, सब परठ सुनावैं री ॥ अरी सब०  
 ज्ञानसार प्यागी हो हिलमिल, सोरठ गावैं री ॥मे०॥३॥

(७०) राग—दोरी पूरिष, खोरठ भिन्नित

पर पर सेलत मेरो पिवा, कहु वरजो नदीं अपने मैया ॥प०॥  
 नकटोरिन के संग नचत है, तत तत तायेद तायेदया ।  
 चंग रजायै माली मारै, कौन बनाव बन्यौ दइया ॥प०॥१॥  
 खर असवारी चभर बुहारी, रयाम बदन सिर पर धरिया ।  
 बिष्टा रमरी जूनी बम रो, लाज मरत हूं मैं मैया ॥प०॥२॥  
 इइ सब पेष्टा पर परमिति की, निज पर मैं रमिहैं भविषा ।  
 जातम शीश पुक द्रव सेलै, ज्ञानसार जिन में मिलिया ॥प०॥३॥

(७१) राग—काकंगो

पूँ ही जनम ममायौ, जेप भर पूँदी जनम ममायौ ।  
 संभम करखी सुषन न करखी, साधु नाम धरायौ ॥मे०॥१॥  
 झुल झुनि करखी पेट कतरखी, ऐसो जोग कमायौ ।  
 देखो बूढ़ धर कमछी नी पर, इन्द्रीय जोष बतायौ ॥मे०॥२॥  
 झुंड झुंटाव मगदरी नी परि, जिन मति बयत लजयौ ।  
 जेप कमायो जेद न पायो, मन तुरम बस नयौ ॥मे०॥३॥  
 मन साध्यै बिन संपम करखी, मानूँ तुम फटकायौ ।  
 ज्ञानसार तैं नाम धरायौ, ज्ञान कै मरम न पायौ ॥मे०॥४॥

(७२) राग—लोकी

जब हम तुम एक ज्योति खुरे, तब न्यून ज्योति नहीं मेरी ॥  
 चरमावर्तन चरम करण मिल, कहेगी सब मेरी ॥प्र०॥१॥  
 मिथ्या दोष अनादि काल घट, मिट अम तम अंधेरी ॥प्र०॥१॥  
 सत्ता इष्य अनन्य सुभारै, चेतनता न अंधेरी ॥प्र०॥२॥  
 काल लम्बि नहीं लामे जीलों, लौखू बीच कनेरी ॥प्र०॥२॥  
 तब ही छुड़ सकन यदोंगे, शैली अनुभव सेरी । प्र० शैलीः  
 पर करिखित तब ज्ञानसार रा, मज भावम पद केरी ॥प्र०॥३॥

(७३) राग—कान्ही (राज—लोडीया बार कपाक)

(अथ) तेरी दाव बरखी है, नाफिल कपो मतिमान ।  
 आरिज देश उचम भ्रम संघति, पद पुण्य प्रमान ॥ते०॥१॥  
 क्रोध लोभ अह माया ममता, मिथ्या अह अभिमान ।  
 राव दिवस मन कच तन राती, चेतन चेत सवान ॥ते०॥२॥  
 मज मद लोभ छकपी ज्युं मैमल, फमल गति आस्तन ।  
 ऊपाक तेरे कहा कारण, जिन मत रदिस निछान ॥ते०॥३॥  
 सत्ता बरखु मिथ है सब बे, सरबंगे सम मान ।  
 एक एक देशी सब मत जायै, सब देशी जिन जान ॥ते०॥४॥  
 सरबंगे सम जिन मत सावै, बाधे आस्तम ज्ञान ।  
 ज्ञानसार जिन मत रति जायै, जायै पद निरवान ॥ते०॥५॥



विनमत धारक व्यवस्था नीति

(५४) राग—रंजय

आप मतिथे मला मृद मतिथे मला ॥८८॥

मंद मतिथे दुसम काल नै जैनिथे,

जैन मत वालुखी आप कीनी ।

परमव बीह ना बीह नै अवगिणी,

निरमवै ममत रस अमृत पीनी ॥आ०॥१॥

एक कहै थापना जिन मखी पूजतां,

कुल पूषादि आरम्भ जाखी ।

आशु परमाशु बल कल कुसुम आशिनी,

सुर रथे इष्टि ते खुं न जाखी ॥आ०॥२॥

तेह कहि विविध विध विंज जिन पूजतां,

जिन अनता न आरम्भ दाखी ।

नवा आराम निपजाय निज कर करि,

कुल भूंदे प्रगट पाठ माखी ॥आ०॥३॥

केह कहि धरम नूँ मरम दाखी दया,

तेह नूँ रत्न ते एम आखी ।

जीव हगतां बचायां न अपखा पली,

मर गयां लेश दिता न जाखी ॥आ०॥४॥

एक कहि जेस मनरात्र बीचां स्थियै,

तेम करिये न आरम्भ चिखियै ।

हेय गेयादि जे मन प्रवृत्ति बधै,

ते सुध्यै सिद्धता तेम मखियै ॥आ०॥१॥

केई कहि प्रथम नव कथन विवहार नूँ,

पारखामिक पखे केय माखै ।

केई कइ वचन नूँ अल गूँघ्यूँ सबै,

निश्चयै सिद्धता जैन दाखै ॥आ०॥२॥

विविध किरिया करी विविध संसार फल,

फल अनेकान्त कै गति समुद्धि ।

गति समुद्धिपखै भव भ्रमख नवि टलै,

तेह थी सी थई आत्म बुद्धि ॥आ०॥३॥

नहीं निश्चै नबै नहीं विवहार थी,

हे नहीं हे यथा वस्तु रूपै ।

अल मरथै हुम्म प्रतिविं सचा रही,

सूर सचा रही रति सरुवै ॥आ०॥४॥

जिम मरै ममल सचा न पामीजियै,

ममत सचा रही मत ममचै ।

द्रव्यता द्रव्य में धर्मता धर्म में,  
 धर्म धर्मी सदा एक तुल्य ॥आ०॥६॥  
 बाहिर आत्ममती परम जड़ संगती,  
 मत ममती महामोह मापी ।  
 प्रमत्त अप्रमत्त गुणाद्यान्ध वस्तु अने,  
 मूढ़ मति बकै अभिमत कयापी ॥आ०॥१०॥  
 आप नंदा करौ भव भयै बरहरी,  
 परहरी हूँ नया पराई ।  
 सम दम लम भवौ लखी मत ममत्त नै,  
 राग दोषादि पुन आस दाई ॥आ०॥११॥  
 अन्वये और व्यतिरेक हेतु करी,  
 समस्त निज रूप नै भ्रम लोभै ।  
 शुद्ध समवाय तैं आत्मता परिचयै,  
 ज्ञान नूँ सार पद सही होयै ॥आ०॥१२॥

इति पद ७४ पं० ३० श्री ज्ञानसारत्रिंशति  
 विविधिता द्वास्तुतिश्च सम्पूर्णा

# जिनमत धारक व्यवस्था गीत

[ बालाभनोष ]

राग—पंचम

भेदमतिर दूसम कल्ल नै जैनिए,

जैनमत चालुखी प्राय कोनो ।

परमव बीह ना बीह नै अवगिणी,

निरमये मयस रस असुते पीनो ॥मंद॥१॥

अर्थ:—अल्प बुद्धिवाले पंचम जात नै जैन दरसनिए जैनमत नाम=जैन दर्शन मत, चालुखी प्राय नाम जैन दर्शन सार नयाभि-माई नै अद्यभाइते छते जैन दर्शनिए भिन्न भिन्न एक नयाभित कयन रूप छेद करते छते, जैन दर्शन मतें चालुखी प्राय नाम=जिन चालुखी नै बहु खेव होय जिन जिनमत नै चालुखी प्राय कीनी । किहां कारण त्यौ ? 'परमव बीह ना' नाम=स्मरेश्वर भाषित सिद्धान्त नी एक अक्षर कमे वधापीवुं तो संसार कंसार कमने कमन्तो परिभमण करवुं पवसुनै, 'बीह नै' नाम=ते करनै, अवगिणी नाम=अवगड़ी छते, अवगिणना करीनै नाम=न विचारी नै, निरमये नाम=निरमय यव छते, कसमात् कारणात् कमइलात्, मयस रस नाम=ममत्व रूप जहर रस नै, असुत नाम असुत समान मानी नै पीनो नाम=पान कीयो छै, निसे कल्लै कंड सुधी ममत्व जहररूप रस भरचो छै त्रिपै पतलै ममत्व माई कई रखाछै ।

एक कहि थापना भिन जिन पूततां,

फुल धूपदि आरम्भ जाणौ ।

जानु परिमाण बल जल कुसुम भाँखनै,

सुर रचै वृष्टि ते स्युं न जाँखौ ॥मं०॥२॥

अर्थ—एक कहियं नाम=एके केचिन् एवं वर्द्धति, केईक दण्ड-बाही मतममन्त्री सिद्धान्त नूँ बह्यूँ वचन 'न रमियजा न पोह्यजा' प वचन कहैरी नै त्याम एक करय धारणा हो जिये ते कहै 'धारणा विव जिन' नाम=थापना निशेष थापन कर्षा ते 'जिन विव' नाम=जिन प्रतिमा प्रत्ये 'पूततां' नाम=पूजा करतं वक्तं 'फुल धूपदि' नाम=फुल जल धूप दीप नवेद्यादि 'आरम्भ जाँखौ' नाम=आरम्भहोत्र जाँखौ, पदपूर् वचन स्वयं वाच्यकारी कहै. अहो सम्मो भिना आरम्भ पूजा नै आचार्य नै जिहां आरम्भ जिहां धर्म नौ अभाव परमेश्वरे बखायौ हो 'आरम्भे नरिष दवा' 'दवा मूत्रे धम्मे पम्नते' तेषी पूजा न करबी पदपूर् सुवर्ष दण्ड पूजा वही आचार्यरी बाक् छटा-छोट करती बोल्यौ—'जानु' परिमाण बल जल कुसुम भाँखनै' नाम=परमेश्वरे विद्यमान छते मोक्ष आचार्य बल जल सम्बन्धो फुल रखावीनै 'सुर रचै वृष्टि' नाम=देवता वर्षा करै, 'ते स्युं न जाँखौ' नाम=नधी जाण्डास्युं ? जिहां नौ धूपदि पूजा में परमेश्वर दिख जाँखता ती ना न कहिय पर पूजा ज्ञानकारी जाँखौमै दवा ना सांड नाम तेषां पूजा दवा ना नाम में गिणी, चिरी वचमानै 'दियाप सुहाय निस्सेसाप आगुनामिताप मविस्सा' पदपूर् छठ बोलै न कहवा ।

तेह कहि विविध विष विष जिन पूजां,  
जिन अनंता न आरंभ दाखै ।

नवा आराम' निपजाय निज कर करी,  
फूल चूँटे प्रगट पाठ साखै ॥सं०॥ ३॥

अर्थ—‘तेह कहै’ नाम=तत्प्राप्त्यु पूर्व परामर्शक, ते काथावरी चिरी कासूत पद्यूं कहै ‘विविध विषि’ ज्ञान=ज्ञान प्रकारे विष पूजन पूजां जिन बातमा नो पूजा करतां ‘जिन अनंता न आरंभ दाखै’ अनंते काखै अनंती अन्वीषी ना अनंता तीर्यकर तेऊना एकेही परमेश्वरे पद्यूं न कहयुं (जे) अचारी पूजा में तुमने आरंभ दाख्ये नै अनंते ही परमेश्वरै पद्यूं कह्युं ‘न आरंभ दाखै’ ‘पूजा निरारंभिया’ चिरी ते कहै पद्यूं प्रगट पाठ है जिन पूजा नै फूल विमिश्रै आशक नवा आराम (निपजाय) करावै, पड़ी अवार आशक आरामै जई फूलो ना चुको ऊपर वरज ना अवार पड़ा पकड़ी नै ते वरज नै पांछी छांटवा थी पछी वार ना फूल फूलयोका छिरी-जाय पड़ी सोना ना नखला आंगुलियो में धारी ते फूलो नै चूँटे । टोकर करवा कारखै कजी चूँटी टोकर करी आरती थी प्रथम कंठे पहारवै । पमाते दरशन वेलां फूलवा फूल बीसै ते कारणै कजी कंठे-बीसै ते अठावीस २८ सेर एकेक देहरे कठरीजती बीबीजती में देखी नै तेऊनै छोड़ फुले पद्यूं जिहां कवम है उईयै तेनै कहै “प्रगट पाठ साखै” सिद्धान्त में प्रगट पाठ है ते पैतालीस में बीस-चूँ नथी । बीचूँ ९ पाठ है समोसरण में जगन् प्रमाखै विछीजता पाठान्तर—१ आरंभ

तेतला आंख नूँ चडाववा न भित्ते बीजूँ भित्ते जेतला चडाविये,  
परं नवा वाग नलाँ नूँ फुल वा कवी चूँटवो-कतदवी-बीबवी ते  
समस्त । अन्ध पूँई जठ बलाधो तिवारै तेऊ बी लकीं महुक्ति—

बो मर के समस्त के, कहे कलाई चोर ।

ते आनख नर में नहीं, कहे जितमल चोर ॥ १ ॥

—ॐ—

केह कहे धर्म नूँ धर्म भाखी दया,

तेहनूँ सत्य ते दण आंखी ।

जीव हखतां बचावो न जयराज पत्नी,

सर गवां खेत हिना न आंखी ॥४॥मै॥

अर्थ—केचित् एवं वदति—केईक पदयूँ कहे हैं 'धर्म नूँ धर्म'  
नाम=जैन धर्म नूँ धर्म । दइस्व नाम=छात्र आखी दया धर्म नूँ मुक्त  
दया भाखी । 'तेहनूँ सत्य ते' नाम=ते दया नूँ परमात्म 'दण आंखी'  
नाम=द हीन मन हैं दयाखी, 'जीव हखतां बचावो न जयराज पत्नी'  
नाम=जीव बहुरै प्रमुख नैं नव विहारी नूँ नैं प्रमुख हखतां नैं जे  
कोई मारत न दें जे दे बचावत काल आखी नैं दण पत्नी किछ  
नहीं । जिसरै स्वाम कटवारी में आनख सेदी मोलखपंधी  
इव कहे तेहनूँ दया न पत्नी, तइयै ते कोन्यै किम न पत्नी ? तिवारै  
तेऊ कहे ते बचावदयात्म भाखियै ने मरत प्राणी नैं बचावतई  
आसंख्यात जीवो नी दिख करी, किम ? जे कहे जे प्राणी नैं ज्यो  
बचावो ते प्राणी काल्यै पोर्यै वा मैमुन खेपस्यै ते सर्व-जीवो नी

हिंसा बचाववा वाला नै बनै, ए न बचाववा लो हिंसा ही स्मूँ करवा वालो नै बचाववा वाली हिंसा नो विभागी स्मूँ करवा वालो ? तईये ते कोल्हो, नै मरवां न बचाववो ते अमरदान बुद्धियै बचाववो । इहाँ सिद्धांत नूँ बचवाः—

अमरं वृषत दारं, अदुर्गता निव भित्तद्वन्द्व ।

दुम निदुखो नशिषो, तिषति मोक्षदा बुति ॥१॥

अमरय सुपावर्गन मोक्ष ना करवा कदा साटै बचाववो, नै लो ए बुद्धिये न बचाववो, ए ज्ञान जानादि मैत्रुन हिंसा करौ ए बुद्धि वाली न हुती । तईये ते कोल्हो, कोईक ना बचाववा न बनै, न मार्ग मरे, जीव मात्र आधु स्थिते जीवै, आधु स्थित परिपाकाभावे कोई 'मरतूँ' न बी । अत्र कः संदेहः तेभी आपखै हाथ मारतूँ बचावतूँ नही, ते कारखे 'मर गयां केस हिंसा न जायै' तेभी जीव इच्छीजखं न बचाववो ते परमेश्वर आशित वृषा नो छत्र नांम रहस्य नांम—सार ए बलाववो हँ ।

केव कहि जेस बनराज मोखां लिखै,

तेम करिखै न आर्द्रम मिश्रिखै ।

हेव मेवादि जे मन प्रवृत्ति बधै,

ते सबै सिद्धता तेख भविष्यै ॥२॥॥१॥

अर्थः—केचित्त दुःखः एव परति, कोईक इच्छी कहै किम जेहनी जेहनी प्रवृत्ति होय तेह नै कोई प्रसन्न करवा जाइ तिवारै



तेहनी प्रकृति प्रमांणी प्रवर्त्तते इतैं सरल प्रसन्न होय । ए सरल-  
प्रकृति वास्त नौ कवन हई परं ए मन नौ ओठ ही की बंचल,  
आनादि ही की बक हई तेनी एहनी इहामुनाई जे प्रकृतबौ  
तेज योग्य हई । कवैं “मन एव मनुष्याणां कारणं बंध मोक्षयोः”  
तेधीन आनंदधन आत्मार्थीयें पिय इमज कह्युं:—

आमम आत्मभर मैं हयै, नानै किम किम काहुं ।

किं किम की हउ श्री मैं हउहुं, ती व्यास उबी पर बाहुं हो ॥

ते कारखें ते कहै ‘जिय मन राज मीजां क्षियै’ नाम=  
जे जे टायैं ए मन राजा आजे कदबो बकी जे जे तरनै जे जे काका  
पुरनारै ते ते कार्य प्रवर्त्तबौ मोक्षार्थी नै ओम्ह हई । जिय राजा नै  
हुकम माफक प्रवर्त्तबौ राजा राजी बई मोटी जागीरी आपैं  
लिम ए पिय राजी बखो मोक्ष जागीरी आपैं । ‘जिय करियै न आरंभ  
विशियै’ नाम=मन आका आपैं तेम कर्युं, करतैं आरंभ न  
बानहुं । तियारैं यज्ञासीयै अवन कर्युं—हेचगेव कपादेव कदा ते  
हेचगेवादि एव ? तइयैते कहै ‘हिय गैरादि जे मन प्रकृतिबधि’ नाम=  
जे वस्तु मां मन नौ छोड़ना नी प्रकृति बधी ते हेच, नैं जे वस्तु मां  
जायबांनी मन प्रकृति बधी ते गेच, नैं जे वस्तुमां मननी आदरवानी  
प्रकृति बधी ते कपादेव ‘ते कबै सिद्धता तेरा मक्षियै’ नाम=  
तेहनी मननी प्रकृति सिद्ध यथां इजां सिद्धता नाम=मोक्षता धाय,  
तेरा मक्षियै नाम=ते मनोमली नाखणंधी पर्युं कहै हई सिद्धांत बकी  
ए वचन अत्यन्त बिरहू हई ।

एक कति प्रथम नय कथन विवहार नू,  
 पारलामिक पयै केव भासै ।  
 केव कति वचन नू बाल गुंभ्युं सबै,  
 निरचयै सिद्धता जैन दासै ॥६॥मं०॥

अर्थ:—एके केचित् एवं वर्तति, एक केई एहयूँ कहे 'प्रथम नय कथन विवहार नू' नाम-जाने ही धीरे-धीरे प्रथम कथन विवहार नू उपदिश्यो । क्या-विवहार नय ज्ञेय, तिरहु ज्ञेयो जयो भक्तिर्ल ।' तेथी जैन दर्शन नू मूल विवहार जायी केवली इन्द्रमय साधू नै बरे । बहुतभाष्यनिर्मुक्ती "कवहारो विदुषम्व, अं द्यम मत्तम वंद्य करिहा" ते कारखै जैन दर्शन मां आधिक्यता विवहार नी छै, तह्यै परछामवादी कोस्यो-रे विवहारवादी ! नू न्यू विवहार ९ प्रकारै छै, परमेस्वर छे 'किरिया बहपल समा' भासी छै, सिद्ध प्रापिका नही, नवमेवैयकांत बलाखी छै तेथी विवहार नी मात्रा नही । 'पारलामिकपयै केव भासै' नाम-जैन दर्शन नी रहस्य ही पारलामिकपयै भासै छै । परछामे न होय ती साठ हजार वर्ष महादुष्टकरखीसै छे जहँ साधुनै प्रचल्यै मरत सरीको महापापी धारै कथनै छे उद्भव मुक्ते न जे जेव वं करयी सिद्ध प्रापिका नही, सिद्धप्रापक भर्मीरहु परछामे नै रह्युं छै । तेथी परमेस्वर नू कर्म पारलामिक छै । 'केव कति वचन नू बाल गुंभ्युं सबै' नाम-केचित् एवं वर्तति ए सर्वमात्र वैवासीस ज्ञानमो मां बह-इन्द्रमयिक नू कथन ते सब प्राणीयो नी मुक्ति रहमभवकनै

पचन नूँ जाऊ नूँ ध्यूँ छै तेमां सर्व प्राणीयो नी बुद्धि उत्तम रही छै  
तेही आज कहूँ । बाजूँ ए सर्व कथन मात्र छै । 'निश्चयै सिद्धता  
जैन दाछै' नाम=जैनदर्शन नूँ वास्तव रहस्य ए छै-निश्चयै यकीन  
सिद्धता छै । निश्चयामयै सिद्धता नौं अभाव, कय महाकष्टै करी  
अनले भवे सेव्यो विषहार तेही नी सिद्धता कई ? तेही अनंत में  
मर्गति निश्चय आगसी, तइवैत सिद्धता यही तिमज कानंदपन  
कहे 'निश्चयै एक आनंदो' पुनः 'निश्चयै सरम अनंत' ॥

विविध किरिया करी विविध संसार फल,

फल अनेकान्ति कै गति समृद्धि ।

गति समृद्धी पखें भव प्रमथ नहि ठहै,

तेहूँ सी कई आत्म सिद्धि ॥७॥मं॥

अर्थ—'विविध किरिया करी' नांव=नाना प्रकारनी किरिया  
जिन दर्शन मां ठहरी । आजकाल ना जिन दर्शनी ले कहियै  
करिने जैन दर्शन कोइ साधक कहीछै छै । " करणं कियं " नाम=  
करनूँ ते किरिया कहीछै ते पंचम काल ना जैन दर्शनी कोई  
किम ही जैन दर्शन प्रवर्तना बतावै न कोई किमही बतावै । कतले  
भिन्न भिन्न कथनै भिन्न भिन्न किय 'विविध संसार फल'  
नांव=नाना प्रकार नै संसार फल नाना प्रकार नी किया यको वचूँ  
जिन जिन नै दीप पूजा करतां ज्योत बखोकी होय, नैवेद्य पूजा  
नी भोग फल बखारयौ । तेही नाना प्रकार नी किया नाना  
प्रकार संसार फल बया । कय भिन्न भिन्न कथनत्वात् नै अइये  
नाना फल बया तइयै 'फल अनेकान्ति कै गति समृद्धी' नांव=अनेक

फल है तद्वै अनेक फल भोगवत्ता ना स्वानक अनेक गति  
 उहरी ली जेहवा जेहवा फल संबंध भोगवत्ता नी जेहवी जेहवी  
 गति तेहवी तेहवी गति गयन थाव । 'यति समुद्रो यत्तं मयस्मय  
 नवि दलै' नाम=एक फल भोगवत्ता नी एक गति कई नै एक फल  
 भोगवत्तू । बीजा फल खर्वनि ना गति कई बीजी फल भोगवत्तू इम-  
 बीजूं चौजूं तइयै जैन दर्शन बकी गति समुद्रो गति नी  
 बबोकर ठहरी । जिहां गति नी वृद्धि तिहां भय भय  
 नवि दली नै जैन दर्शन बिना अन्य दर्शन मात्र भय भय  
 टाकवा नै करण नवी जइवत्तू नै आज ना जैन दर्शनीयो ना  
 कयन ओते छते मत ममत्वीपणा की हउमाहीपणा की क्षान  
 नयो की एक नय मदक वा होय पिछ नय मदक करीनै जेथी  
 पोता नी मत पुष्ट थाव तेहवू तेहवू कई तो 'तेहवी की कई आत्म-  
 सिद्धी' नाम=तेहवा जैन दर्शन बकी आत्मानवी की सिद्धता कई ?  
 एतजै जैन दर्शन प्रवर्तते आत्मार्थ मोक्षफल चामियै नै आज ना  
 जैन दर्शन सेवता बकी संसार नी वृद्धिता चामियै ते जैन ली  
 एहवू नवी परं मदुक्तिः—

आत्म बुद्ध सकल की, आत्म निरकल एक ।

इम ते जेहे मेव पर, नीव कीयो एकेक ॥१॥

एथी अम्है जैन नै लखायां छी—

नहीं निरवय नयै . नहीं विवहा नी,

हे नहीं हे यथा वस्तु रूपै ।

जल मर्यै कुंभ प्रतिबिम्ब सत्ता रही

सूर मत्ता रही रवि सूर्ये ॥मं० ॥८॥

अर्थः—तेथी ए सूर्य नूँ कथन जैनभाषी छै । उन जैनभाषा सचकामाहः—“जैन सचक्य रहित्वा जैनकत् जामासमाना जैनभाषाः” कथं एक कथानुजाई सूर्य कथनभावात् । दिवै, सूर्य नयानुजाई स्यात् पुरस्सर भावो ए सूर्य नै कहिनी हुयो । ‘अहो माईयो ! जैन दर्शन एम छै नही ।’ निरचय नयै नाम=रखै, निरचय नयापेक्षी जैन दर्शन नथी, कथं अनेकांतकथात् ‘नहीं विषह्कारयो’ नाम=विषय एकांत विषह्कार नयापेक्षी जैन दर्शन नथी, कथं आनेककथात् । है नाम=यथा कस्तुकरै किम अवशिष्ट नाम=रखै छै निरचय नय नूँ कथन, किम निरचयनयै जैन दर्शन छै वही किम रखै छै विषह्कार नय नूँ कथन किम विषह्कार नयापेक्षी विषय जैन छै नही । है नाम=जिन निरचय विषह्कार नय नी अपेक्षा न राखै किम जैन दर्शन मां कथन नथी वही विषह्कार नी अपेक्षा निरचय न राखै किम विषय जैन दर्शन मां कथन नथी, एतलै जैन में एकांत नयापेक्षिक कथन मात्र नथी । तिहां एकांत कहे ‘जल मर्यै कुंभ प्रतिबिम्ब सत्ता रही’ नाम=जिन पांग्ठी भी भर्या बट नै दिवै सदसचिद्वय सम्बिलत सूर्य नो प्रतिबिम्ब पही गछा छै ते जोइ नै कोई पद्वूँ कहे, ए सूर्य छै । सूर्यै बीजो कहे सूर्य नथी, सूर्य नो प्रतिबिम्ब छै, तेनूँ ज जलानरूँ छै किम मात्र जे प्रथम बट कछा ते जैन नथी, कथं एकांत माटै, तेच मां जैन नी प्रतिबिम्ब नी सत्ता छै, जैनी बीसता ब्रह्मा जैनी नथी

कर्म एक नयापेड़कत्वात् । 'धुर सत्ता रही रनि कहुँ' नाम=सूर्य  
 नी सत्ता जिस सूर्य ना सकल में रही जिस जैन दर्शन की सत्ता जैन  
 दर्शन में रही है अतः नयापेड़कत्वात् ।

जिनमें सत्ता न कभीजिबै,

समस्त सत्ता रही मत समर्थ ।

द्रव्यता द्रव्य में धर्मता धर्म में,

धर्म धर्मो सदा एक हूँ ॥मद०॥६॥

अर्थ—'जिनमें सत्ता न कभीजिबै' नाम=जिनमें सत्ता न  
 बिबै मत समस्त की सत्ता अन्तर्गत न कभीजिबै कहुँ कहुँ कहुँ  
 एकांतवादी बोल्थे—कर्म किन न कभीजिबै ? कहुँ जैन दर्शन की तेमें  
 सत्ता कहुँ अनेकांतकत्वात्—अनेकांतकत्वात् धाटे, यथा—नाम  
 दर्शयति 'यत्र यत्र अनेकांतकत्वं तत्र तत्र निर्ममत्वं' इति  
 सिद्धांतः । 'समस्त सत्ता रही मत समर्थ' नाम=समस्तकी सत्ता सिद्धांत  
 रही है सिद्धांत मत भी समस्त है, सिद्धांत कहे इस कालिबै बिबै ना  
 कल्प 'इन न मांजिबै, ते मत समस्त नै बिबै समस्त सत्ता रही है ।  
 कर्म एकांतकत्वात्—एकांतकत्वात् माटे यथा 'यत्र यत्र एकांतकत्वं तत्र  
 तत्र मत समर्थ' तेभी सिद्धांत एकांतो पणु' है सिद्धांत मत समस्त  
 भी सत्ता है । अतः द्वांत 'द्रव्यता द्रव्य में धर्मता धर्म में, नाम=  
 द्रव्यता द्रव्यत्व धर्मता' द्रव्य में रहूँ है धर्मता द्रव्यत्व धर्मपणु'  
 तेहने बिबै रही है । द्रव्यता, धर्मता रह्यो ती बेई द्रव्य नै  
 बिबै परं भिन्नविदर्शन करयां कतां द्रव्य नूँ धर्म द्रव्यत्व, तेहने  
 बिबै रही द्रव्यता, जिस जैन नै बिबै जैनत्व धर्म, तेहने बिबै रही

जैनता जंगलदि सात पत्ते सम्मिलित कथन तेज जैन धर्मता  
जैनत्व, जैन धर्मता रक्षां जै सिद्ध जैन मां जै परं मिल निवर्तन  
करतां ज्ञान जैनता जैनत्व धर्म मां रक्षो जै, सिद्धां समस्त मात्र  
नभी । कर्तव्य जनेकात्मकतात् । नै अन्य पूर्ण माधवा जैनी एकेक  
माधवेही, अतएव अत समस्तौ तेज न विधै जैन धर्मता नभी ते  
जै एक नयै कथन वाली रक्षा जै ते सर्व नय जैन मां दीज जै  
तेही जैनी जगत् जै, परं तेज मां जैनता नभी, सर्वोप कथन न  
माधवा भी 'धर्म धर्म सदा एक हुतै', जैन-जैन मां रक्षा जैनत्व  
धर्म, तेमां रक्षो जैन धर्मता, तेहनी अत एक हुतै जै । अत नय  
सर्वही वृत्ति जैन-जातीयता जै मात्र कथन सत्ता नय विना  
न जै, तेहना जैनियों नी बलिहारी, परं अति विरता ।

बहिर आत्म मत्ति परम अह संगती,

अत समस्ती महा मोह मापी ।

अमर अग्रमर गुण्डात्त वरतु अमे,

सूद वति वरै अविरत कथापी ॥१०॥१०॥

धर्म—'बहिर आत्म' नाम-य हयै कथन ते बहिरात्मा जै ।  
कथै जिन वचन विराचकतात् । 'मत्ति' जैन-बहिरात्मा जणां नी  
हुति जै । जेऊ मां पुनः 'परम अह संगती' जैन-अहम् अह ना  
संती लेखन करवा वाता, अतएव अत संतमदि ना असेवी जै ।  
पुनः 'मत्त समस्ती' जैन-अत मा समस्तौ अत नय माटी अहार्द  
करता फिरै, इस न विचारै साक्षात् अमे विरह कथन कहाँ था  
ते छिरी तेहनी पक्षमात कभी ? तेई नहीं पुनः ते कहवाएक जै

'महा मोह' नाम-महामोही जहां सारंगीया, कपरिमोहीया है । पुनः वेदवा है 'मायी' नाम-महामायी है, ते कपटवृत्ति की सरागी भया आवको की पदवुं कहे 'अमय, अमयत गुणद्वय वरतुं अमे' नाम-प्रमादी कहै, अममादी कालमें, गुणद्वयों अंतर मधुरी २ गुणस्थानें वरतां छां, पदवुं 'मूढमती बकै' नाम-मूर्ख बुझी बका पदवुं बकै-प्रलयन करै । रहस्कारें कल जल आनल पदवुं कहे, रहस्य बकवात करै, पूर्ण हो बका होज है फिरि द्रव या गुण कहे 'अविरति' नाम-न विरति, अविरति विरत माय नवी कवं मडा मूढत्वान् । नी कहे नवकारकी नी ही विरत है तिहां तिलै अम पकी सूयं ऊंची कायां सिद्धाचलकी सरीसैः सिद्धचेतनी तलहटियें नवकारकी पादत में देकवा पुनः कही वेदवा 'कयायी' नाम-कोपी मानी सोपी जता ।

आप नंदा करी भव भयै परदरो,

परदरी हुनै नंदा पराई ।

सम दय सम मनौ तमौ मत मयत नै,

राम दोषादि पुन आस दाई ॥मं०॥११॥

कार्य—२ पूर्वोक्त ने मत मयती बका लदयें मयत जीव कहे—  
हिंदै अमे सो मायें अवचित्यै ? स्थान वस्त्रधारी ली देहरा में बडावसी ही न वेसे, तेहने सम्बन्धकी कतानै, कायावरी स्थानवस्त्रधारी नै हुंदिवा मुलै कहे तेहने सम्बन्धको कहे, बीजाही एक एक नै परस्पर निदैं, तिनारै अमारै मनमें २ विचार आवै—दरु कहे ते सानूँवा दरु कहे ते साचूँ । अमे स्वी अवचित्यै, अमारी सी गति,



साधू जैनधर्म अमारै हावै किन कहै ? तेसूँ लखर—ए सबै मतधारी  
 दुकानदार छै, किन दुकानदार नै पाले साथ मही तिम एक निछ ।  
 तबसै मज्ज बिरी पूरै अममै करछीय कार्य बाईक बटाय । तबसै  
 बजारै 'आप नंदा करौ' नाम=आपका आत्मानो आप निदा करौ ।  
 'भर भरै परहरौ' नाम=भरगतकर्तातत्त्व भर भी परहरौ पूजा, रे  
 आत्मा तू किन महीत आगम भी एक अकर हीन वा अधिक करीत  
 ली अमली भवभ्रमख, रे आत्मा तुममै करबो पढ़बसै, तेनी भवराखी ।  
 'परहरौ मुखे निदा पराह' नाम=मुख हूँकी छटा वा अछटा, पर ना  
 अस्तुत्य कहिना परहरौ-छोकी ए त्याग्य छै सम दम लम  
 मही' नाम='सम'=राखु मित्र मुख्य मही-आदरौ, 'दम'=वैभक्ति  
 दमन आदरौ, 'लम'=कुमा आदरौ ए आदरकीय, 'तही मत ममत  
 न' नाम=मत रौ ममत इठमाही मही छोकी, पतली किनकिछांत  
 तू पीतानो प्रवर्तन बिरुद्ध दीखे मोही न छोकी, आत्माभी तेह न  
 छोकी । 'राग दोसादि' नाम=राग नै द्वेष नै आदि रागद्वे कजह  
 आभ्याक्यानादि नै छोकी । पुनः=बही 'आस दाई' नाम आस्था  
 दाई बांधी नै छोकी, ए नै छोकरा किना सरय अर्थ छै ।

“अन्वय और व्यतिरेक हेतु करी,

समस्त निरूप नैं भरम सोवै ।

शुद्ध समवाय तैं आत्मता परिचार्तै,

ज्ञान नूँ सार पद सही होवै ॥१२॥म०॥

अर्थः—झिन्ह आत्मा जेही आत्मीक स्वरूप चाहे तेहवा जैन  
 दर्शन नूँ जे रीतै कवन छै ते रीत कही बतावै । 'अन्वय और

व्यतिरेक हेतु' नाम=एक आन्वय हेतु बोधो व्यतिरेक हेतु ए वे हेतु  
 ओहूँ परमात्मे परमते होय ते कवन सिद्धांत नी अकारण करी  
 मैं सोने निरमाई निरमल इडा खली ए वे कारखी पोशाना  
 अतमा मां पोनें खली रीते अरम' नाम=समर्थ— तत्रान्वय लक्ष्य-  
 माह्वन् सत्त्वे यत् सत्यमन्वयः' नाम=सत्त्वं सत्त्वं आत्मता सत्त्वं  
 नाम शुद्ध में ज्ञान दर्शनादि नी अकारण' होय नी एक मलयारी  
 शुद्ध शुद्ध में बोधो पांचमी शुद्धताओ उदिराभ्यो तेई करी  
 बीजा आगता भिन्न होय । परं हूँ बाह्य आत्मा नी आत्मा  
 में निष्कार' नी काम वसवर्त्ती वही, मोक्ष वसवर्त्ती वही नी  
 नी कुचेष्टा, कही कही अकारणीय कार्य ते मां प्रवर्त्ते, ती ए शुद्ध में  
 पांचमी शुद्धताओ वगैरे ते शुद्धमें पोता ना करागी करवा मातै  
 वगैरे हैं । परं ए बाह्य नी शुद्ध प्राणी उगाई जाय 'मित्र हृदये धरम  
 खोपे' नाम=व्यतिरेक हेतुवै करीने 'निजहृदये नी धरम खोपे' नाम=  
 पोशाना सत्त्वं नी धरम खोपे-गवाही । तत्र व्यतिरेक लक्ष्यमाहः—  
 'तद्भावे तद्भाषो व्यतिरेकः' नाम=काम, क्रोध, मोह, भोहादि  
 सद्भावे काम, क्रोध, क्लम, ज्ञान, दर्शनादि में अभावे तद्भाषः नाम  
 पांचमादि शुद्धस्थानक नी अभावः मैं जे सभी वनी कपसमी  
 होय ते पोशाना सत्त्वंमें समर्थमें निजहृदये नी धरम गवाही में  
 'शुद्ध समवाय ते' नाम=शुद्ध समवाई कारखी करीने, तत्र समवाय  
 लक्ष्यमाहः—'यत्समवेत कार्यमुत्पद्यते तत्समवाय कारणं' नाम=  
 आत्मा रे ज्ञानदर्शन आदिप्रवर्ग हटैय ज्ञानदर्शन आदिप्रादि  
 समवेत मित्रो कही आत्मता परिकल्पे' नाम=आत्मता नूँ परममन  
 होय ते आत्माने 'ज्ञान' सार पद' नाम=मुक्तिपद  
 'सही होय' नाम=निश्चै संकटे होय इति अर्थः ।

इति दूसमध्याय संबंधी विवक्षितधारको नी विवक्षा

वर्णन कवनय संपूर्णम् ॥ सं० १५५० अ० । पं० । अक्षु ॥

# आध्यात्मिक पद संग्रह

(१) राग—मैरु

भोर भयो भोर भयो, भोर भयो प्रांखी ।  
चेतन तू अचेत चेत, चिरिया चचहानी ॥भो०॥॥॥॥॥॥  
कवल खंड खंड विकसाने, कौलनी मुदानी ।  
कंज उपम खंजन सी, नैना न चुरानी ॥भो०॥॥१॥  
है विभाव विच नीद, सुपन की निसानी ।  
तेरे सुसुभाव माहिं, दोनू न समानी ॥भो०॥॥२॥  
आरोपित धर्म ते, सुरूप की दुरानी ।  
रूप के सुज्योत, ज्ञानसार ज्योत ठानी ॥भो०॥॥३॥

(२) राग—बट

भोर भयो अथ जाम प्राखी,  
क्युं अजहुं अस्थियांन चुरानी ॥भो०॥  
मनुज बनम तू क्युं नहि चेत्यो,  
पसुआनी चिरिया चचहानी ॥भो०॥॥१॥  
चेतनधर्म अचेत भयो क्युं,  
चेत चेत चेतन सुझानी ।

बीती यात आयु बल जोवन यूँ,  
 टप टपकत दुसली पानी ॥भो०॥२॥  
 पर परसित परशमन प्रयोगी,  
 नींद तुषन तुम्ह माहि समानी ।  
 ज्ञानसार निज रूप निरूपम,  
 रामे जागरता नीसानी ॥भो०॥३॥

(३) राग—चाटौ

उठ रे जातमवा सोरा, मयो घट में मोर ॥उ०॥  
 अज्ञान नींद अनादि, न रहि तिस कोर ॥उ०॥१॥  
 निज भाव संपद तेरी, पकनौ बल कोर ॥उ०॥२॥  
 नहीं रोग सोम वियोगा, नहीं भोग को सोर ॥उ०॥३॥  
 नहीं बंध उदयादिक नौ, कोई काहे और ॥उ०॥३॥  
 गही भाव निज निरचै नौ, बिबहारे सोर ॥उ०॥५॥  
 ज्ञानसार पदवी तुम्ह में, कहूँ और न और ॥उ०॥६॥  
 सिद्ध रूप सिद्ध संपद नौ, मोनी नहीं और ॥उ०॥७॥

(४) राग—धारंग, रुन्दावनी

हो रही तावै दूष निछाई ॥हो०॥  
 लाक झाक करती दीसै, जूँ बच्छ निछुरि भाई होर ॥

एते दिनों विषा झूँ रमते, अजब उदगार न आई ।  
 नींद विषा कहूँ निजर निहारे, क्यूँ बैरन उठ घाई ॥ हो ॥२॥  
 फुहड़ लंबोदर सग रदनी, बसन देख न सुहाई ।  
 सुमति विवारी प्राण विष मिल, ज्ञानसार पद फाई ॥ हो ॥३॥

( ५ ) राज—कन्याजी । राज—नालीनेह की

सास गवां पछी क्यूँ ही आय, न चाली साथ ॥सा०॥  
 निहचै बाही जान हैत सो, क्यूँ संचै सर बाध ॥सा०॥१॥  
 सब में सब कदापलै, रीतै बलिहै हाथ ।  
 दै सो तेरी सूँआ पीछै, और हुबेबो नाथ ॥सा०॥२॥  
 कृपा रागै परबम्पो तूँ, यारै असह्य अन्याय ।  
 ज्ञानसार सुख संपदा, निरकृप सनाथ ॥सा०॥३॥

( ६ ) राज—कन्याजी

विषम अति प्रीत निभाना हो ॥वि०॥  
 जिय बलिं ही प्रीत निमै जी, तौ हूँ सुख सधाना ॥१॥  
 सौतन संभ दुसह प्रान तैं, यारैं विषम बचाना हो ।  
 प्राणदान अवदान बाँन सुग, माय माय कहूँ गानाहो ॥२॥  
 अंग आलिंगन सौत विष पेखो, कैसैं और बचाना हो ।  
 गूदी ऊड़ी बस दोगी के, तेसे विष बस जाना हो ॥३॥

❀ “बाण विवारी सुमति विषा कुँ, ज्ञानसार पद फाई ।”

मैं मन वच तेन विष संग चहुँ, विष पर रंग सुमाना हो ।  
 बड़वानल तें विरहानल की, ताप अनल दुख दाना हो ॥४॥  
 काल भुवंगम की मनु चाकै, प्रलय बिलय अदाना हो ।  
 ज्ञानसार एही सुन आए, जिन सब दुख बिसराना हो ॥५॥

( ७ ) राम—काशे

छोट सयाने कहा कदि सनमावै ॥खो०॥  
 सतै कूँ धकधूस उठायै, जागत नर कैसें के जगावै ॥खो॥१॥  
 जागरता एक उजागरता, इन कुल दोष अवस्था गावै ।  
 क्षोर दई गही नींद सुपनता, नीची अपने हाथ दीछायै ॥२॥  
 नींद न कर ज्युं सुपन न आवै, नींदि गया जागरता पावै ।  
 जागत जागत उजागरता होवै, ए जग न्याय कहावै ॥३॥  
 सतै छुट भूल गये पर की, पर पर में सब रैन गमावै ।  
 जानत होय अज्ञान सयानी, तासैं के कैसे बरि आवै ॥४॥  
 कौन सुनै कासू कहुँ सजनी, घट में हो घट मांदि बिलावै ।  
 सापर छोळ उठै सापर तें, पै उनकी उन मांदि समावै ॥५॥  
 एक एक दुख सब जग में सजनी, पै छुदि दुख का अंत न आवै ।  
 बेग पछाय सयानो दूती, बिन दूती नागर नस नावै ॥६॥  
 तुम हो आतुर वे आवि चातुर, दोहूँ कर कैसें के जीमावै ।  
 पै हम दूती बिरुद परावै, अबकै ज्युं खुं आन मिलावै ॥७॥

एकद्वय हाथ न कावै तारी, जग जन दोनूँ हाथ बजावै ।  
 रैन दिनां रटना मुहि उनकी, पै पिय एक बसी नहीं चावै ॥८॥  
 बिन पीतम बिम्बा तन तावै, सीत समीर इतै संतावै ।  
 तो प्रथ दुख मिट जाय सपादी, ज्ञानसार बिन तेहिहि आवै ॥९॥

(८) राम चन्द्रचिरी

कौन किसी को मँत, जगत में । कौन किसी को मीत ।  
 मात तात करु जात सजन सुँ, काहे रहत निजैत ॥अ०॥१॥  
 सबही अपने स्वारथ के हैं, परमारथ नहीं प्रीत ।  
 स्वारथ बिबाध्यै समो न होमो, मीठा मन में नीत ॥अ०॥२॥  
 छठ चलेषी आप दकेलौ, तूँ ही तूँ सुविदीत ।  
 को न किसी को तूँ नहीं काको, रह अनादि रीत ॥अ०॥३॥  
 सारै एक भगवंत भजन की, राखो मन में नीत ।  
 ज्ञानसार कहै ए बन्पासी, गणो आतम भीत ॥अ०॥४॥

(९) राम सोरठ

भांव नाम न लुपौ, सां सार्य मन सूँ ॥सां०॥  
 कलै करम करम कल कांपी, नांपी नाथ अपो ॥सां०॥१॥  
 सम परखामी सामा देखी, उललित चित न भयो ॥सां०॥२॥  
 धन मन गाढ रूपो कूपक में, काहूँ कहु न दयो ॥सां०॥३॥  
 ज्यूँ ज्यूँ हैं सुलभन तूँ पायो, तूँ तूँ उलभ करयो ॥सां०॥४॥

एक बगद' जब बाजी आई, तब हूँ डार गयो ॥सां०॥५॥  
 आता मारी गई नहीं मोक्ष', आसन मार लयो ॥सां०॥६॥  
 आप को भापो पाप उपायो, नहिं कहूँ धरम कियो ॥सां०॥७॥  
 मनसा रोधन सोधन कट कौ, एक धरी न कियो ॥सां०॥८॥  
 जैसे सुनी ज्ञानसार कुं, साहिव निरबहियो ॥सां०॥९॥

(१०) राग—सोरठ

चेतन मैं हूँ रावरी रानी ।

बीर विवेक जई समझायो; अंत विरानी विरानी रे ॥चे०॥१॥

और सखी उपहास क'त है, बखो नी सेज सुदानी ।

मेरो पिपा पर संभ रमत है, तातैं बंदुर बानी रे ॥चे०॥२॥

बीर विवेक हितु तुमही से, मगनी होत है रानी ।

मेरे पति कुं वाप सुझायो, कही मैं सोई कहानी रे ॥चे०॥३॥

बीर विवेक कहे मगनी से, उद्यम सिद्ध निदानी ।

सरधा सखि समता मिल जगई, ज्ञानसार कुं बानी रे ॥चे०॥४॥

(११) राग—कंक

आन जगई हो विवेक, सुदामनि । आन जगई हो ।

उठ सुदामनि प्रीतम आप, कहूँ बगई बगई हो ॥वि०॥१॥

उठी सुदामनि भरिय आबरमो, हित कर बंट समई हो ।

खबर परी अब तबही सरधा, धसमसि मंदिर आई हो ॥वि०॥२॥



कर जोड़ी कहि सरधा सामी, महरि निजर कुरमाई हो ।  
 नौगति महिल छोर छोटी कुं, बड़ी याद क्यूं आई हो ॥वि०॥३॥  
 सुमति पढायो अनुभौ आपी, उन सब सुद्ध सुनई हो ।  
 छोर दई उन कुटिल कुमति कुं, आयो संग से माई हो ॥वि०॥४॥  
 हसै रमै अब कोका मंदिर, सुमति सुचेतन राई हो ।  
 मेम पीयूष प्यासे भर पीवत, ज्ञानसार पद पाई हो ॥वि०॥५॥

(१२) राम—तोही

हुसल सुमति अति बैरनि नावै ॥कु०॥  
 संग कर दूर रखो अति रमयो,  
 रंग भर छिन इक विष न कुलावै ॥कु०॥१॥  
 कोह विकल करयो मान केरै परधो,  
 झुरि झुरि पिय आस समावै ।  
 मेरी मेरी मेरी न कबहूँ,  
 तेरी बैरन सुदि पास बैठावै ॥कु०॥२॥  
 विकल बंध मिट कटैय वरम तम,  
 आप आय भर जान पसावै ।  
 केवल कमला निज घर आवै,  
 ज्ञानसार पद चेतन पावै ॥कु०॥३॥

(१२) राम—सारंग

पिया विन एक निमेष रहूँ नी ॥पि०॥

नखद निर्गोनीं सास दिशैनी साके वचन सहौ नी ॥पि०॥१॥

जेठ जिठौनी कौन सधौनी, पिय पद कमल गढ़ौनी ॥पि०॥२॥

माय दगौनी मैन ठनौनी, गिरिवर आय बड़ौनी ॥पि०॥३॥

मोह तजौनी पेश बरौनी, ज्ञान पीयूष पियौनी ॥पि०॥४॥

पीयतीष दोनूँ मुक्ति सिधौगी, सुख अनंत बरौनी ॥पि०॥५॥

(१४) राम—सारंग

अनुमौ नाथ कुँ आय जगारै ॥अनु०॥

विरका बुद्ध करण हूँ मालो, वरना पानी पावै ॥अ०॥१॥

हृन् नति संग रंग तैं कुसटा, कुमती दूर जावै ।

केवल कमला अफसर सुन्दर, मिंदर आय ही आवै ॥अ०॥२॥

कवल नयन आनन तैं मुललित, ललित बचन सुचारै ।

चतुरा बच कटाव पात तैं, ज्ञानसार पद पावै ॥अ०॥३॥

(१५) राम—बेलावज

अलदियो कैसी बात कहै, करम की कैसी •

मैं हूँ चेतन चेतनवंता, एते दुख क्यों सहै ॥कै०॥१॥

कबहूँ नाटक कबहूँ चेटक, साटक कबहूँ रहै ।

कबहूँ फाटक कबहूँ हाटक, काटक कबहूँ कहै ॥कै०॥२॥

उदय उपाय करम बित्त बंधे, आत्म दुख सहै ।

पर गुण कहै निजगुण सुखे, संखे सुख गई ॥कै०॥३॥

जीवर पाय प्रगट परमात्म, आत्म जोष दई ।

ज्ञानसार शुष चेतन मूल, नाथ अनाथ लई ॥कै०॥४॥

( १६ ) राग—कल्ही

चेतन बिन दरिबाव ही मछरी रे ॥बै०॥

कोइ लतारखे माने मारखे बे, संग अनम रंग बिहारी रे ॥१॥

आप पतारी मेरी आहूँ बे, कंठ पकर कर पछरी रे ॥२॥

आप ही धारो आप पधारो बे, ज्ञान अनंत मुख सुंछरी रे ॥३॥

( १७ ) राग—कल्ही

कौह भरहता स्यानें हीही लौ, जोबी नै आप बिचारी रे ॥कै०॥

काल आइहो केहूँ पज्योही, मारस्यै बाप नो मागे रे ॥कै०॥१॥

जे तुम नै लै प्यारी नागे, न्यारी आस्यै नागी रे ॥कै०॥२॥

ज नो रमखी हवखा सारी, परमव लाभस्यै सारी रे ॥कै०॥३॥

चेत चेत तूँ चित में चेतन, नहिं तो धानी तुनी रे ॥कै०॥४॥

ज्ञानसार कहै ब्रह्म सेवा, लै सहु नै सुखकारी रे ॥कै०॥५॥

( १८ ) राग - सामेरी

औगुन किनके न कहिये रे गई ॥बी०॥

आप भरे सब औगुन ही से, और न हूँ कवा चहियै रे गई ॥१॥

हँगा बलही देखे सबही, पगलल कौन बतहये ।

सामी पगलल लाय बुझावो, ओ कछु तन सुख चाहिये रे भाई ॥२॥

आप बुरे तो है क्या सबही, आप भले तो भलेहि है ।

ज्ञानसार जिन गुन कब भाला, निसदिन रटते रहिये रे भाई ॥३॥

( १६ ) राम—विद्वान् ( पचीहा बोलता रे )

दरबाजा छोटा रे, निकला सारा जगत उनीसैं ॥६०॥१॥

क्या बधू क्या भाई बाबू, क्या बेटी क्या भोटा रे ॥६०॥२॥

गय हव करखी दो हक चरखी, क्या कोई छोटा मोटा रे ॥६०॥३॥

क्या पूरब क्या ठहरपंथी, दक्खिण पच्छिम मोटा रे ॥६०॥४॥

ज्ञानसार दरबाजै जाए, चाहैं सिद्ध सनोटा रे ॥६०॥५॥

( २० ) राम—सोरठ

आलीजा ने चारी चाह बखी छै, महिला बेग पधानो ॥आ०॥

आपु करम विन साहू की चिति,

कोदि सागर इक कोदि मुखी छै ॥आ०॥१॥

केतै दिन चितवता अवकै, ज्यूं त्यूं प्रीत बखी छै ।

निरवाहन नहीं प्रीतम हाथे,

निरवाहन भवपाक बखी छै ॥आ०॥२॥

भलो बुरो सोही बल भाषी, अंत तो पर केरो धर्मी छै ।  
ज्ञानसार ओ टोल न कीजै, प्रीते अंतर कौन भरी छै ॥३॥

(२१) राम—सोरठ

है सुनो संसार, प्रभु हूँ जन भूल बावरे ॥३॥  
आ जग कहूँ विष समान है, सकल बहुरंग को प्यार ॥१॥  
हुनिया रंग बहिरवाजी ज्यूँ, क्यों सोचै न विचार ।  
ज्ञानसार बट भीतर साहिब, खोजै ज्यूँ परपार ॥२॥

(२२) राम—सोरठ

पूँवरी हुनिया ओ पूँवरी हुनिया ।  
आशा धार फिरै ज्यूँ घर घर, सिटन करन सुनिया ॥१॥  
बारिदातम मूछा जगवासी, ज्यूँ जंगल हुनिया ।  
ज्ञानसार कहै सब प्राणी की, बहिर बुद्धि बानिया ॥२॥

(२३) राम—बापी

मनका नी जमे केनै कहिये बातो ।  
खिख भोगी खिखखिख मन भोगी, खिख सीरो खिख तातो ॥१॥  
गुप्त चितवन ठारुँ परगट, लावै नथी रे कहिवातो ॥म०॥  
चैत्य बंदने तूँ न प्रवर्त्ते, ते मुक्त नथी रे सुहातो ॥२॥  
बोरापर धी बोरा न चालै, तेहथी सहै बारी लातो ॥म०॥  
रुसख तूतख ठारुँ खिखखिख, गिखती नथीय गिखातो ॥३॥

इक सामाइक ज्यूं एकान्ते, ज्यूं ही दिन ज्यूं रातो ॥४०॥  
 तिय बेला उपराटी तूं तिख, संयम नी करै घातो ॥४१॥  
 सुर पुरंदर नर तिर पूजावै, वेद नपुंश कहातो ॥४२॥  
 ज्ञानसार को निज घर दोतो, ओतो जे स्यास सिखातो ॥४३॥

(२४) राग—वसन्त

घर आबो दोस्तन घर संग निवार,  
 तुमरो परसो कहा प्यार यार ॥४०॥१॥  
 नहीं घाति पाति कुल को स्वभाव,  
 एतो उनसो क्या राग भाव ॥४०॥२॥  
 छांदी क्यों न उनकी संग सीत,  
 कम में मय नव करिहै कसीत ॥४०॥३॥  
 बलिये अपने कुल की मरवाद,  
 कुल छोड कहा काटी सवाद ॥४०॥४॥  
 भादै पर अतै निज न होय,  
 निज पर सो पर करहु न समझ जोय ॥४०॥५॥  
 मन्ते घर बिन सरहै न कन्त,  
 जिहि ज्ञानसार खेलै कन्त ॥४०॥६॥

(१३) राग खेरछ—खानेनी

आम थपूँ लैं काम रे भाई ॥आ०॥

बचन रु काया इफ़टीक नाहीं, चित चंचल नहिं ठाम रे भाई ।

कई हूँ मेप मेपवर हूँ ही, कइँ हूँ अनेरा काम रे ॥२॥

आत्म विषये अवम ममान हूँ, कइँ हूँ निरमल काम रे ॥३॥

चित अंतर पर छलबल चितपूँ, गुप्त छेड़' मगपंत नाम रे ॥४॥

ऐसे खूनी ज्ञानसार की, सरब राखियो साँम रे भाई ॥५॥

(१६) रागिनी—गुरभी

भये क्यों, आप सवान अवान ॥आ०॥म०॥

पर संवति पर परखित परखिम, रूप रहे विसरान ॥म०॥१॥

मेढ विभाव सुभाव संभरिके, लछा बल पहिचान ।

मोह जंगल जाल के मारन, पाथो रद निरबाध ॥म०॥२॥

(२०) राग—खेरछ

झूठी या जगल की माया, क्यों भरमाया ।

कबहुँ मृमहृष्टा तैं मृम की, बानी प्यास बुझाया ॥झू०॥१॥

जैसे रांक स्वप्न मयो रात्रा, हाल हुकुम करमाया ।

जाने तैं कलु नजर न देखे, हाल ठीकरा आया ॥झू०॥२॥

झूठा तन धन झूठा जीवन, झूठी माया काया ।

गत पिता सुत बनिया झूठे, झूठे क्यूँ विरमाया ॥झू०॥३॥

निज स्वरूप निरचै नय निरखे, तो में कुछ न समाया ।

तुं तो तेरे गुण को भोगी, ज्ञानसार पद गया ॥श्ल०॥४॥

(२८) रागिणी—मैरवी

आये हो मये मोर, भले ही ॥आ०॥

सौजन्य संग रंग रंग सोखे, आते आरस मोर ॥म०॥१॥

भोगति महल खाट ममता में, क्यों छोटी कर जोर ॥२॥

रात दिमाक बिद्वानों उदयो, घर सुनाव सखीर ॥३॥

तब पीतम तुम सुमति संभारी, अब कहा करुं अ निहोर ॥४॥

वै कुल कन्या की मरजादा, अपने रस की ओर ॥५॥

चाते ज्ञानसार के आगे, ठकी बेकर मोर ॥६॥

(२९) रागिणी—बेलावली

सोई डंग सीख लौं सोई डंग सीखलौं गी, जो पिया गहे पर मांहि ॥

भीम सयानी हूँ समझाऊं, तुम कहा समझो नांहि ॥सो०॥१॥

पर आये तें आदर पढ़ये, सो चहिये तुम मांहि ॥सो०॥

में कहा जानूँ शनखियारे, कैसे राखी नांहि ॥सो०॥२॥

में तो मन तन वचन तें तेरी, चोरी बिन दामां ही ॥सो०॥

मान अपमान समान मान कै, आई वीर पटाई ॥सो०॥३॥



अंग सुरंग सवार साथ ले, सरधा सुबुधि सहाई ॥सो०॥  
 प्राणविहारी सुमति तिया की, ज्ञानसार बलवाहि ॥सो०॥४॥

(२०) राग—पेशावरा

चेतन खेले नौ ककरी री, नौ ककरी री, नौ० ॥ने०॥  
 चरसो चय भर सो सब पावन, याति आवति ज्युं कर' चकरी री ॥१॥  
 अंगुरी घेरन' कर्म की घेरयो, याति आवति इक मय पकरी री ।  
 भर सें' चर अरु चर तें पुनि भर, दोरी पकरन कम चकरी री ॥२॥  
 चर भर अब चर भर को कबो, खेलयो नाही इव ककरी री ।  
 पात प्रहू अब चर भर वारो,' ज्ञान नयें दो वद पकरी री ॥३॥

११ राग—धमाक

आये मोहन मेरे, आन रंग रही ॥आन०॥आये०॥  
 सिद्ध सुहागन प्रीत बनाई, समता सरधा की कौन चली ॥१॥  
 लरका तें जहू पाय वरी अब, देर दिरानी खिली ।  
 सात सभी समासरस' दीनी, बैठ बिठानी दौर मिली ॥२॥  
 खंती मदव अजबब सुधी, लरकी चार चली ।  
 सम दम विनय निरीह पियाले, धाई माई बल साथ खिली ॥३॥  
 सब परिवार संभार साथ ले, चेतनवा सु चली ।  
 ज्ञानसार हु' सुगत महिला में, खेलें धमाल की आस फली ॥४॥

१ कर वें । २ घेरन । ३ भर तें । ४ वारो । ५ गुमाश्ति ।

(१२) रागणी—छोटा

रसियो मारु सौतन रै बाय हेली, रसियो०॥

मेरो कसो मानस नहीं सजनी, बहुत रही हमकाय ॥हे०॥

चौगति महिल साठ ममता रे, रमतें रैन बिदाय ॥हे०॥१॥

सौतन संग घूमतो होरे, कांसित मृदु सुसकाय ॥हे०॥२॥

सखा समता ज्ञानसार हूँ, न्याई बाय मनाय ॥हे०॥३॥

(१३) रागणी—छोटा

को करा मैं रैन बिहानी, नीद न आवै ।

नीद न आवै नीद न आवै, नीद न आवै ॥की०॥हे०॥

उदयें आत्म ज्ञान अरक कै, रात दिभाव बिहारै ॥की०॥१॥

हचि हृद भारैं सहज पसरतें, भ्रम तब कम न रहारै ।

बहुवा बफवी मोर भये तें, हिलमिल प्रीत बढ़ारै ॥की०॥२॥

सोम लूक जब अंध मयो तब बिसई बंद दिखावै ।

ज्ञानसार पद पैवन पायो, पातें अलख बहारै ॥की०॥३॥

(१४)

अपरित होरी आई रे लोको, अपरित होरी आई रे लाला ।

लाल गुलाल उदय आई की, एहि' मिथ्याता उदाई रे ॥१॥

पिचकाग्नि की मझसी लगी है, बासी रस<sup>१</sup> बरसाई रे ।  
 चंग सृदंग वाजत स्वासन की, अन्नहृद नाद घुराई रे ॥२॥  
 बह<sup>२</sup> मिथ्यामति होरी गावत, हृद मति जिन गुण भाई रे ।  
 काठखंड की होरी बगाई, हनु कछु करम बलाई रे ॥३॥  
 मद पानी जन मदिरा पीवत, केह<sup>३</sup> हृद फेरे न भाई रे<sup>४</sup> ।  
 ज्ञानसार के ज्ञान मयन में, अनुभव सुरखी छाई रे ॥४॥

(१५) राग—होरी

आम रंग बीनी होरी भाई ।

अनिदृत करण प्रीतम आगम की, सरधा न्याई बधाई ॥१॥  
 पिय प्यारी की सुधि रुचि चितवन, ददीय गुलाल चलाई ।  
 बासी पप पिचकारी हस्त की, दंपति अरिय मचाई ॥आ०॥२॥  
 चंग सृदंग अनादि धुनि की, धुनि मिलमिल धुनि नाई ।  
 आप सरूप आनंद रस बीने, सोई होरी भाई ॥आ०॥३॥  
 शुक्ल ध्यान की शुक्ल तरंगे, सद् शुभकान शुभकाई ।  
 ज्ञानसार मिल कर्म काठ की, सहजै होरी बगाई ॥आ०॥४॥

१ जिनबासी । २ जोड़ी । ३ केहें मुखरित भाई रे ।

(३६)

होरी रे आज रंग मरी रे, रंग मरी रस से मरी रे ।  
 आज अगम आवन पिय कोनौ, आगम बदरी हरख मरी रे ॥१॥  
 विरह मिथ्यौ तनु ताप बख्यौ सब, शीतलता व्यापी सबरी रे ।  
 पुत्र मयै बिन पिता मात कै, बीदी लागत घर बिछरी रे ॥२॥  
 पुत्रै प्रीतम आंख्यां आगै, देखत प्यारी नयन ठगी रे ।  
 नीच जीवन इन ज्ञानसार तें, पिय प्यारी की सब सुधरी रे ॥३॥

(३७) राग—होरी-काफी

माई मति खेले तूं माया रंग गुलाल खूं ॥मा०॥  
 माया गुलाल गिरन तें मूंदी, आंख अनंते काल खूं ॥१॥  
 बल विवेक भररुचि पिचकारी, छिरके सुमति सुचाल खूं ।  
 उधरति ज्ञान नयन तें खेलै, ज्ञानसार निज ख्याल खूं ॥२॥

# स्तवनादि भक्ति-पद संग्रह



( १ ) श्री शत्रुघ्न तीर्थ स्तवनम्

दास—आज्यो आज्यो रे, ए देशी

गायज्यो गायज्यो रे हो, विमलाचल मुखमान । भविकजन ।

इय गिरि आदि जिनेसरु रे, पूर्व निवाणु वार ।

समवसरया रायण तलै रे हो, जगगुरु जगदाधार ॥म०॥१॥

नेमि बिना तीर्थंकरा रे, समवसरया तेवीस ।

तिग बलि चौमासो रखारे हो, अजित शांति जगदीश ॥म०॥२॥

वाचे पांडव इय गिरे रे, पाम्प्या पद निरबांख ।

झुगति बहु बरबा भखी रे हो, ए गिरि चौरी आस ॥म०॥३॥

समस्त मुनि दस कोदि सुं रे, नमि विनमि बलि तेह ।

दोय दोय कोद झुगते गया रे हो, प्रखमीजे धरि नेह ॥म०॥४॥

के सीधा इय गिरवरै रे, तीरुस्यै केई जीव ।

सिद्धक्षेत्र ए सासवी रे हो, नमिये सुखनी नीव ॥म०॥५॥

एहयो नहीं इय कलियुगे रे, तीरथ पृथ्वी मांदि ।

पाप ताप समबा भखी रे हो, ए गिरि सुरतरु छांदि ॥म०॥६॥

एक जीव इस गिरि तन्हा रे, गुप्त केता कदिवाय ।

अधामगति भगतें करी रे हो, ज्ञानसार गुप्त माय ॥भ०॥७॥

( २ ) श्री गुरुदेव पादाब्जम्

आन्यो आपनो रे हो प्रीतम परम पवित्र सुगुप्त नर आपनो रे  
मैं चाल्पा सेतुंवाँ बसी रे, पितु पित्त पालै साथ ।

आदनाथ दरसना करी रे हो, करिवै शिवपद हाथ ॥सु०॥१॥

फूल चिल्ली चमेरियां रे, मर मर नाना बाँध ।

गुप्त नादलि पूजा करा रे हो, बादल<sup>१</sup>नव बसी जात ॥सु०॥२॥

सुगता सुगताफल मरी रे, सुन्दर सोवन पाल ।

बधावी कपटे ठवा रे हो, अनुपम फूल नी मात ॥सु०॥३॥

तीन प्रदक्ष्या छिम करा रे, छिम बलि तीन प्रणाम ।

भाव पूजा करना बसी रे हो, बैसु बैसख डाम ॥सु०॥४॥

शुक्रस्तव शक<sup>२</sup> करयो रे, छिम कर करिय प्रणाम ।

ऊना कई धूई<sup>३</sup> कही रे हो, औसरिये छिम धाम ॥सु०॥५॥

इम जात्रा सेतुंख तनी रे, करिये कंत कृपाल ।

ज्ञानसार पदवी बरी हो, बरिये सुगत जो फल ॥सु०॥६॥

( ३ ) श्री कवम छिम साधनम्

राज—कहिरवो

नामिजी के नंद से लाग्य मेरा नेहरा ॥ना०॥

बदन सदन सुख, मदन कदन सुख,  
 प्रभु की मदन किरण, समरस मेहरा<sup>१</sup>, ॥ना०॥१॥  
 अमल कमल दल, नयन उज्जल जल,  
 मीन युगल मानुं, उल्लसत सेहरा ॥ना०॥२॥  
 माला विशाल रसाल अकल वृत्ति<sup>२</sup> ।  
 सरद शशि मालु आठमी की जेहरा ॥ना०॥३॥  
 नासा अम्प दीप कली, सरली सीमी कली ।  
 दन्त पति कान्ति मालु<sup>३</sup>, चंद का ता उजेरा ॥ना०॥४॥  
 केतलो बर्खान करूं, उपमा कहाँ वे बहूं ।  
 ज्ञानसार नाम पायो, ज्ञान नहीं मेहरा<sup>४</sup> ॥ना०॥५॥

( ४ ) श्री श्रीकृष्ण मय्य नमः श्रुत्वा तत्र लज्जतः

राज—काफ़ी

सूरति माधुरी, श्रुतम जिहंद की ॥सू०॥  
 विक्रम मय पुर सुकट मनोहर,  
 ता बिच कौस्तुभमणि प्रतिभा जरी ॥सू०॥१॥  
 माय विभाय शास्त्र परमम कर,  
 सुखर क्यारीयर सुन्दर या बरी ।

अंगी विष विष रंग सुरंगी,

देखत छवि अति नयन कमल ठरी ॥मृ०॥२॥

शान्त सुधारत मूल पर वरसत,

हरषत मुदि मन मोर नवल करी ।

ज्ञानसार जिन निजरे निरख्यो,

निरखत सिद्ध यानक स्थिति सामरी ॥मृ०॥३॥

( ५ ) श्री नेमिचन्द्र होरी गीत

नेमिचन्द्रमार खेलें होरी बे, लाल गुलाल मरी भोरी ॥ने०॥

इत बे आप नेम नगीना, उत बे कुम्ह की सब गोरी ॥ने०॥१॥

अबीर गुलाल की मरि मरि मूँटे, डारे मुख बेंदोरी दोरी ।

भर पिचकारी नीर सुगंधे, झिरके मुख कर टकटोरी ॥ने०॥२॥

पेट भरष हर तिय नहिं पम्यों, सब सखि मिल करे टकटोरी ।

कारैं से न्याह सो कौन करेगी, समझैं नहिं सखि ते भोरी ॥ने०॥३॥

ऐसे सबन की बलियां सुनके, जोर रहे मुख खल जोरी ।

राखत नेम सगाईं भोरी, पिय मेरे मैं पिय तोरी ॥ने०॥४॥

तोरख आय चले रथ फेरी, जिन औगुन पिय क्यों छोरी ।

संयम यदि वो मुक्ति पधारे, ज्ञान नमें दो कर भोरी ॥ने०॥५॥



( ५ ) श्री मेदिनाथ राबिन्दाजी गीत

राग—छोटी

विष बिन में बेहाल खरी री ॥वि०॥

झिन मुरझानी सुष निसरानी, घरर पूज घरखीय परीगी ॥१॥

दोर सखि सब मिलिय सपानी, सीव समीर झञ्झोर करी री ।

पलनि उधार नजर भर पेन्ने, बिन पीय विषना काहि बरी री ॥२॥

रातें सीर झरयो आंखनि सें, मुख पै कज्जरा रेख परी री ।

सोल कला संपूर्ण सति को, राह गयो जूँ सिर्धान चिरी री ॥३॥

संयम बाहि गिरिनार गिरी पर, विष प्यारी दो मुक्ति बरी री ।

भव जल तारी पार उतारो, ज्ञान नमें दो पद पकरी री ॥४॥

( ५ ) श्री मेदिनाथ राबिन्दाजी गीत

राग—काफी कयाद

तोरख बांदी प्रहू रख्यो रे बान्हो, एकरस्युं परि न्याबोरे

में बागी सदियां प्रीतम ने समझावो रे ॥१॥

हेली कूठ्यो जादव न्यावो रे में बारी ।

पशुपन बरि प्रहू किरपा रे कीनी, मोपरि मदिर परावीरे ॥२॥

नव भव चो प्रहू मेद न छोडूँ, मेद नवल कर जोडूँ रे ।

मठ गिरिवर प्रहू सहसा रे बन में, संयम लावो शुभ दिन में ॥३॥

नेमि राजकुल प्रभु हुगति मझल में, खेल खेलत निसदिन में ।

ज्ञानसार प्रभु दास तुमारो, इह मन बार उतारो रे ॥मैं०॥४॥

( ८ ) श्री मेदिनीय सखिमती वीर

राग—काफी

बो दिल लम्बा नास विहारे ॥नास० (२) बो०॥

फिर पीछे रह जाले बादय, तब पीठ पीठ पुकारे ॥बो०॥१॥

मोह' छारि हुगली ह' जाहो, मैं क्या अवगुन प्यारे ॥२॥

अठमन प्यारी नारी तेरी, ठुक एक बार निहारे ॥बो०॥३॥

वीर तज हो वीर पिय नहि बजहुं, तिय पीरम की लारे ।

ज्ञानसार वीर तिय के नामै, बारीयां बार हजारै ॥बो०॥४॥

( ९ ) श्री मेदिनीय सखिमती वीर

राग—काफी

बालिम मोरा ने समझावो रे, साहेलकी पीरम मोरा०॥

राजकुल कहै सुन सखिय सखानी, दीर दीर तुम जावो रे ।

पासव भाली कहिज्यो पीरने, एक बेर बार आवो रे ॥२॥

बिन औसुन क्यों तजहो पियारे, औसुन इक बतलावो रे ।

सहिसावन अह संजम लीनो, केवल लखो मले भावो रे ॥३॥

नेम राजकुल भिन्धा हुगति मझारे, ज्ञानसार गुन गावो रे ॥४॥

( १० ) श्री वैष्णव लक्ष्मणी मंत्र

मैंदा नेम न आये, कीय दिन क्यों दिन आय ॥मैं०॥

क्यों दिन आये क्यों निशु आये,

हां प्यारे तरफ तरफ जिस आये ॥मैं०॥

दामनि चमके हीरा चमके,

हां प्यारे काली चटा बहिराय ॥मैं०॥१॥

पियु पियु पियु पक्ष्या बोले,

हां प्यारे मो जियरा अकुलाय ॥मैं०॥२॥

किन श्रीगुन क्यों तजहो विपारे,

हां प्यारे कहियो सब समझाय ॥मैं०॥३॥

पिय नाये लिय चहिय मिरी पर,

हां प्यारे ठम ठम ठमसी काय ॥मैं०॥४॥

पति बली दो मुक्ति प्यारे,

हां प्यारे ज्ञानहार गुण गाय ॥मैं०॥५॥

( ११ ) श्री वैष्णव लक्ष्मणी मंत्र

राम—काकी—पट विष्टि

आवंतरी पीयु वारी, मेरो पियु आवंतरी कोऊ वारी ॥मे०॥

तोरण से तुम फेर चले रथ, बोपे काँधे आचारौ ॥मे०॥१॥

पशुपन से तुम करुणा लाखी, हम अबला निरधारो ॥मे०॥१॥  
 रामरिद्ध सब छोड़ी राखि, जैसे काँचरी कारो ॥मे०॥२॥  
 सहिशासन जइ संयम लेके, नेम चढ़या गिरनारो ॥मे०॥३॥  
 ज्ञानसार मुनि की ए बीनति, मदिर करी अवधारो ॥मे०॥४॥

( १२ ) श्री लक्ष्मिनाथ लक्ष्मिनी गीतम्

राग—काशी

[ वाक—कोई चुरियां लपेटे चुरियां; गली गली मनिहार पुकारे  
 खिचे जो लंडरियां कोई० २० देखी ]

बोधि पीवू प्यारे प्यारा ॥मो०॥

भट भव प्यारी नारी थारी, नयमें क्यों मया न्यारा रे ॥१॥

लोरख भाप चले रच केरी, अब हम कौन आधारा रे ॥२॥

झोर दई रोटी राजकुल हूँ, आप मये अण्णमारा रे ॥मो०॥३॥

बोरी झड्डें बेरे नामै, बारियां बार हवारा रे ॥मो०॥४॥

ज्ञानसार निम गुण जो समरस, करहुँ बेर सवारा रे ॥५॥

( १३ ) श्री समेतशिखर लीलाया सारम्

[ वाक—निसरी री, से निझी न्हे आगरे थां न्हां चिखो सनेह  
 वे चमकाई० ]

समेतशिखर सोदामयो, जिहां पुंदरा खिन बीस ।

हृगति रमणी सुरा बालदा हो, प्रसूनी सिद्धे पहुंचा ईश ॥१॥

अजित आदि अंतिम प्रभु, पारस पारत सार ।  
 अरवसेन कुल दीपका हो प्रभु, माता नामा सुसुकार ॥२॥  
 प्रभु शरयो हूँ आविषी, मय मंजन मगवंत ।  
 लख चौरासी हूँ यम्पौ हो प्रभु, दरसल विन तुम कंत ॥३॥  
 आज भलो दिन ऊगीयो, मेला भी लगनान ।  
 कारज सीधा मांदरा हो प्रभु, मेळो मय दुख साथ ॥४॥  
 हुक आंगणि सुरतक कल्पों, सुगटि मिलियो आय ।  
 कामधेनु पर ऊपनी हो प्रभु, तुम चरखे सुवसाय ॥५॥  
 चितामणि हुक कर चखी, नवनिधि सिद्ध तरुण ।  
 अष्ट सिद्धि सुख सम्पदा, हो प्रभु चित्रावेलि अमृत ॥६॥  
 हुक नन हुक चरखे वस्पी, पंकज पटपद जाय ।  
 चंद चकोरा त्रिमिलम्बो हो प्रभु, चक्रवाक त्रिम जाय ॥७॥  
 पोषक कै मन में बसै, चंद सदा सुसुकार ।  
 मोरा मन त्रिभि फन पसै हो, प्रभु जलदायक जगसार ॥८॥  
 संवत अठारै हस्तावनै, माह सुदि पंचम सार ।  
 ज्ञानसार कर जोड़िने हो प्रभु, प्रथमै पारंवार ॥९॥

इति श्री समेतरिश्वर तीर्थ स्तवनम्

( १४ ) श्री समेतशिखर तीर्थवासा कृतम्

[ हास्य—मण्डिका सिद्धचक्र-पद-बंदो० ]

सेतुंज साथ अनंता सीधा, सीमरूपै बलिय अनंता ।

पूरव ओ आचारित दुष्मा, कहि गया र कईतारे ॥१॥

शायी, शिखर समो नहीं कोई ।

तिहां किछ पिछ एक अपम शिखेसर, समवसरचा नहीं सीधा ।

एहवै मोटे तीरथ एक जिन, बूधा नहींय प्रसिद्धा रे ॥प्रा०॥२॥

अष्टाक्षर एक आदि जिखंदा, निभय पदवी पाया ।

रेवयगिर नेमीसर सुखकर, सीधा श्रीविनराया रे ॥प्रा०॥३॥

आबूचिर पर एक न विनवर, सीधा नहीं जगचंदा ।

तिहां बलि कोई नहीं तीर्थकर, केवलज्ञान दिखंदा रे ॥प्रा०॥४॥

हम अनेक तीर्थे तीर्थकर, किहां सीधा केहां नाहीं ।

एहवो परगट ठामें ठामें, बाठलैं आगम साहि रे ॥प्रा०॥५॥

समेतशिखर पर बीसैं टूके, सिद्धा विनवर बीस ।

तिख नहीं एहवो तीरथ जगमे, नमोअ नमावी सीस रे ॥प्रा०॥६॥

संवत अठारैं ठगरपचासे, मदा सुद बारस दिवसे ।

संघ सद्धि मली यात्रा कीनी, ज्ञानसार सुजयीसे रे ॥प्रा०॥७॥

(१४) श्री गार्ग्यनाथ सुखना

[ दास-वन वन संवत्ति साचो राजा ]

पात प्रभु भरदास सुखीजे, दास श्री करुणा कीजे रे ।  
 वापी जीव ने शिखा दीजे, पटलुं करज कीजे रे ॥पा०॥१॥  
 कोष कहै जे बचन निगसी, तो लेदनी करे हामी रे ।  
 बिष्ट पोतानी मरिनी फासी, ते तो कां न निकासी रे ॥पा०॥२॥  
 भीटाईं मेले नहिं कीटो, ते मैं मित्ररे कीटो रे ।  
 सुगुरु कहै हित बचनै जे भीटो, गुरुनो बांध अपूटो रे ॥पा०॥३॥  
 पोतानी, भूँडाईं न जाये, परनो तुरत पिछायो रे ।  
 आपसपै हजि पहिलै ठासी, लखम मोखां माखो रे ॥पा०॥४॥  
 होय रघो ए करम नो वासी, ब्रह्मो ऊंचे पासी रे ।  
 कहो किम कर्म ने सामो वासी, अति अचानक आसी रे ॥पा०॥५॥  
 एहनी रीत अछै नित एही, एक दुख कहिने केही रे ।  
 श्रीमिनराज द्विष अस लेई, एहनें शिखसुख देई रे ॥पा०॥६॥  
 तूं सरये दुख दुख नो ज्ञाता, तूं विदुषन नो ताता रे ।  
 रत्नराज हुनि श्री साता, ज्ञानसार मुख गाता रे ॥पा०॥७॥

(१५) श्री गार्ग्यनाथ सुखना

[ दास—मेहुसीया मंवर जी रो करछलो ]

परब पुरुष छूं श्रीतड़ी, कीजे किम किम करतार जी ।  
 निवट निरामी साहिबो, हूं गमी निरधार जी ॥१॥

म्हारी अरज प्रभुकी मानल्यो, कछुआ कर करतार जी ।  
 हूँ सेवक प्रभु तू' पक्षी, दिव मगपार उतार जी ॥म्हा०॥१॥  
 कर लोही ऊनां पक्षां, कीजे सेव सदैव जी ।  
 पिण्ड प्रभु किमही न चालवै, एह मनोखी टेव जी ॥म्हा०॥२॥  
 चाकर पहुँचि चाकरी, साहिब समरै दान जी ।  
 तौ सेवक नो साहिबा, बाधै जग में वान जी ॥म्हा०॥३॥  
 साहिब पिण्ड सेवक ठखी, गलै नहिं जो माम जी ।  
 साहिब सेवक नो सदा, किम निरवहसी कायकी ॥म्हा०॥४॥  
 हम जाखी सेवक परै, करो महिर कृपाल जी ।  
 निरधारो आधार हूँ, तू'ही दीनदयाल जी ॥म्हा०॥५॥  
 पारब प्रभु खू' बीनति, करी पशु' करखेक जी ।  
 ज्ञानसार पद दीजिये, सुख अनन्ती जोक जी ॥म्हा०॥७॥

(१७) श्री गीता चरित्रनाम (सहाय-सहाय) लक्षण

राम—सोनठ

करी मोहि सहाय, मौहीराय करीय सहाय ।  
 सुखचंद की मंद विरिधां, सुखर लीनी आय ॥गी०॥१॥  
 अम प्रसाय अलाय मंदौ, तयौर नाही बस ठाय ।  
 आंस कीन्ही चढ़ी ऊंची, धूमरी बलि साय ॥गी०॥२॥



नींद भंग उमंग नाहीं, मन न अपने भाव ।  
 उलझन मित नवा दत्त दित, भ्रष्टा दे अमराय ॥गौ०॥३॥  
 एह मेरे नाहिं संगी, संगी पीव रहाय ।  
 साथ अमचो उमहि के संग, चलेंगे उठ भाव ॥गौ०॥४॥  
 ए विवन्धा देख मेरे, लगी ठर में लाव ।  
 जरथी पिजर ईस आखी, अस ह न रहाय ॥गौ०॥५॥  
 मुस पटा घर भाव जलधर, हौ बरवै भाव ।  
 ठरथी पिजर देख पंखा, रसो उठ न आव ॥गौ०॥६॥  
 अम प्रलाप न लाव ऊंचो, तपीर अपने ठाय ।  
 चढ़ी आख्यां उलरी तब, घूमरी नहि लाव ॥गौ०॥७॥  
 नींद रंग उमंग अंगे, मन ह ठहिराय ।  
 चित पीछे नसां ठहिरि, अम अपने आव ॥गौ०॥८॥  
 तुम हमारे नाहि संगी, पीठ ह न इराय ।  
 काल दित परिपाक आखी, आखी में उठ आव ॥गौ०॥९॥  
 सामि कारज करथी सांगी, लाज राखी लाव ।  
 मो पलित की फव्वल घंभि, निपद दीध बकाय ॥गौ०॥१०॥

(१०) श्री पार्ष्णनाथ सारंग

राग—सारंग

हमारी अलिपां अति उलसानी ।  
 दरसन देखत चिन्तामन को, रोम रोम विकसानी ॥द०॥१॥

हरलित नाचत नैननं पुतरी, पलन मूँद उपरानी ॥६०॥२॥

भूषरिनाद घूमन मन कूँदी, अनहद नाद पुरानी ॥६०॥३॥

मादल ताल पलनकी कउसन, रोम तार पुतरानी ॥६०॥४॥

तूँवे बीन सम्राज मिलत सब, ज्ञानमार रसदानी ॥६०॥५॥

(१५)

मेरी अरज है अरवसेन लाल छूँ ॥मे०॥

सेख्यो सदा बाल साहिब छूँ, मैं मेरी बच बाल छूँ ॥मे०॥१॥

बन नामी पारस जिन देरी, समन गौबड़ी कुमाल छूँ ।

ज्यूँ तूँ राखी बुझापन की, रङगी साज दयाल छूँ ॥मे०॥२॥

मैं सब देव रूप बन निर्धन, क्या मांगूँ कंगाल छूँ ।

ज्ञानसार छूँ संपत दीनै, ज्यूँ पय संता बाल छूँ ॥मे०॥३॥

(२०) श्री गुरुदेवका चारु सङ्ग

[ वाक्य—अन खोहना विनराया ]

अधिकारी बलि अविन्यासी, शिवपद सत्सुख सुविलासी रे ।

मगजीबना विनराया, तोरा सुरनर प्रथमै पाया रे ॥अ०॥१॥

उज्जल गुणगण ठनु मोहै, इस मटकै मनहुँ मोहै रे ॥अ०॥

पद्मपत्र बरयो प्रह दीपै, अगच्छ कोटधुति कीपै रे ॥आ०॥२॥

उपशम असि हस्ते धारी, अरि उद्धति कोष निवारी रे ॥अ०॥

नवि सदसकथा प्रह बंदो, दुष्कवि नो कंद निफंदो रे ॥अ०॥३॥

सुमनाचारी अमचारी, मन डारी अचकारी रे ॥अ०॥  
 अह कय चारी अमचारी, सुकृतिकारी दुष्टकारी रे ॥अ०॥४॥  
 अतीत अनागत ज्ञाता, वर्तमान स्वरूप विज्ञाता रे ॥अ०॥  
 शान्त दान्त मुद्राए ताई, प्रभु प्रणम्यां पाप विद्धोहै रे ॥अ०॥३॥  
 विजग प्राता अम भक्ता ज्ञानादिक गुण नो दाता रे ॥अ०॥  
 धन धारै निबहियै धनीश, शुद्ध गुणधारक सुजमीश रे ॥अ०॥६॥  
 वामानंदन परदाई, तुम सुनिअर सुख तदाई रे ॥अ०॥  
 ज्ञानसार कहै आस्थाई, जिन वंदे ते चिरनंदै रे ॥अ०॥१०॥

इति श्री चार्षेयिन सत्यनं विपिकृतं ज्ञानसारेण

सूरत बिंदर मध्ये ॥ बीरस्तु ॥ शुभंभवस्तु ॥

( २१ ) श्री चार्षेयि सत्यनं

एग—अष्टमी

दिल माया मैदे साई, पास प्रभु जिनमाया रे ॥दि०॥  
 मन मन मेरो तरहि उलझ्यो, जिय में आनंद पाया रे ॥दि०॥१॥  
 अंशियन मेरी प्रभु हूं निरस्त, तबवेई तान बचाया रे ॥दि०॥२॥  
 कर जोड़ी प्रभु बंदन करके, ज्ञानसार गुण गाया रे ॥दि०॥३॥

(२२) श्री गौड़ी चार्मनाथ (आत्मनिवेदन) सारम्भ

राम—सारंग

गौड़ीराय कही बड़ी बेर मई ॥गौ०॥

सास उसास याद नहिं आवै,

सो बड़ीम बड़ी मतिभूति सही ॥गौ०॥१॥

साटी बुध नाटी या सब कहि है, अस्मिय सति लोकोक्ति यही ।

हैं तो अटारणु में भूलूँ, मोघें स्मृति मति कैय रही ॥गौ०॥२॥

नाम तुमारो चादि न आवह, फल यदियन की बात किही ।

सूनी हूँ फल दास विहारी, ज्ञानसार सुख बोस कही ॥गौ०॥३॥

(२३) गौडीचार्मनाथ पुन बोह—शुति

गौड़ी गौड़ी जे करै, विह उमरै विहाय ।

स्वां घर लच्छी संपन्नै, निव श्रति होत कल्पाय ॥१॥

गौड़ी गौड़ी जे करै, अति विपनी बसियांद ।

स्वांरा संकट दूर हूँ, सुख दै तिस यदियांद ॥२॥

गौड़ी गौड़ी जे करै, अति ही चित उदास ।

विहां उदासी दूर कर, आपै सुख निवास ॥३॥

गौड़ी गौड़ी जे करै, अति संकट में जेह ।  
 त्पारा संकट दूर हूँ, नौ निष करसै मेह ॥५॥  
 गौड़ी गौड़ी जे करै, अति ही सुमन्ने मन्न ।  
 त्पां घर लच्छी संपजै, अन्न सुवन्न सुधन्न ॥६॥  
 तो विन मो से पतित को, लाज राखिहै कौन ।  
 प्रीध्न ताप को हरि सकै, विन मलपावल पौन ॥७॥  
 निर ऊपर घूम्यां फिरै, पदरथौ कूँशाय ।  
 गौड़ीराय सहाय ते, काट फाट सो जाय ॥८॥  
 नारणजी नित ही नमै, मुखनिधि गौड़ी सांभ ।  
 दुख दानिद्र दूरै दलख, कोइ सुधारण काम ॥९॥

( २४ ) श्री श्री विन सत्पन्न

राग — वैशाख

हे विनराय सहाय करौ यू ॥हे०॥  
 चंदनबाला बल्लल बहिगी, ज्यूँ उषरी त्यूँही उषरो यू ॥१॥  
 शूली ते प्रभु सेठ सुदरसन्न, सिंहासन बड़े बेग करयो यू ।  
 चरण दस्यौ चंडकीशिक सापे, करुणाकर प्रभु देव करयो यू ॥२॥  
 अयमचौ जल कीड़ा कम्तो, तारो पैले पार करयो यू ।  
 पतितउधारण निरुद तुमसो, नारण विरीयां क्यों बिसरौ यू ॥३॥

( २२ ) श्री सामान्य जिव सत्त्वम्

[ काव्य—ईश्वर आंवा आंबली ]

सम विसमी अख-आखतां रे, हित अहित अविचार ।  
 जे जे जिव भव में किया रे, तू जाये निरधार ॥१॥  
 जगतगुरु जय जय जय विष्णुदेव, तारी सुर नर सारै सेव ।  
 तारी जग जन तारण देव, सेधी तूंदी देवाधिदेव ॥अ०॥२॥  
 सम्पन मिथ्या दरसणी रे, सम विसमी ए पाट ।  
 आधर संवर निर्जरा रे, हित अहितहैं पाट ॥अ०॥३॥  
 नीद अज्ञान अनाद नी रे, कारख मिथ्या भाव ।  
 तुम्ह दरसण विष नहि मिन्पो रे, उद्गत शुद्ध सुभाव ॥अ०॥४॥  
 एहीअ आभन कारणी रे, भूत थकी भव भूर ।  
 संवर निर्जर नहि गये रे, दीसे शिव यति दूर ॥अ०॥५॥  
 भव परणित परिपाक थी रे, तुम्ह दरसण नो जोग ।  
 जह्ये संवर निर्जरा रे, वास्यै सुगुह संयोग ॥अ०॥६॥  
 शुद्ध सरूप सुभाव मां रे, स्वम्यै आत्मराम ।  
 ज्ञानसार गुणनशि भरी रे, लहिस्वै शिवसुख ठाम ॥अ०॥७॥

( २६ )

बो साह मो वीनति कैसे करूं ।

अल अनादि बखो बेरो तुम विन, भव वन मांहि फिरूं ।

अब तो विभुवन नाथक पेह्यो, हरसी पाप परं ॥१॥  
 क्युंकर नाचुं ते हेतु बताओ, तेरा अंचल ब्रह्मी हूँ भगवं ॥  
 दरसख सुद चरख अनुभव के, परचे ताप परं ॥२॥  
 तामें अनुभव करख वान से, करने ताप परं ॥  
 ज्ञानसार प्रभु मुख मोखिन के, कंठे हार परं ॥३॥

( २४ ) एग—केशरी

तुम हो दीनबन्धु दयाल ।  
 फरि कृपा हूँ तार तारक, स्वामि विरुद्ध संयाल ॥तु०॥१॥  
 अपम कैसे उदरे तुम, मेरी ओर निहाल ।  
 मैं अपम तुम अपम उधारख, करदो क्युं न निहाल ॥तु०॥२॥  
 छोड़ जग की देव सेवा, लम्बी तेरी बाल ।  
 ज्ञानसार गराव की तुम, करोगे प्रसियाल ॥तु०॥३॥

( २५ ) एग—कनड़ी

मुख निरुप्यो श्री जिन तेरो ॥तु०॥  
 ससिपूज्यौ' मिस चिन मुख देखत',  
 बुदप कमलनी केरो ॥तु०॥१॥  
 निस' पलैं मित' पुन्य उजरी, प्रभु मुख नितही उजेरो ।

पंकज अमल सब कमल होत है, पुण्डरीक प्रभु तेरो ॥सु०॥१॥  
 चन्द उदय<sup>५</sup> मुख सम्मुख निरखूँ, यावै बीच चलेरो ।  
 कुसुमित पुण्डर देख्या देख्यो, कमल कमलनी केरो । सु०॥२॥  
 धन्य धन्य शुभ नयना<sup>६</sup> निरूप्यो, इसत<sup>७</sup> बदन प्रभु तेरो ।  
 करघोरी मद छोरी कह है, ज्ञानसार<sup>८</sup> प्रभु तेरो ॥सु०॥४॥

( १६ ) श्री श्रीमंथर जिन सखन

राग—सारंग

श्रीमंथर की सरस सलूखी, मूरति अति मन भाई ॥भाई॥  
 लोचन अमिय बचन अमृत सम, नयन अमृत भर साई ॥भाई॥१॥  
 अंग पंग मग रंग पृति कलकत, अनंतज्ञान छवि साई ॥भाई॥२॥  
 ज्ञानसार भावि भावै परख्यौ, कौन सरूप न पाई ॥भाई॥३॥

( १७ ) श्री श्री जिन महती नीत्य

राजगृही उद्यान में सखि सखवसरस्य महावीर ।  
 चारि जाऊं चोरनी सखि ॥म०॥  
 गणधर गोपमादिक बला सखि, इग्यारै अतु पीर ॥वा०॥३॥



केवलनाथी दंसखी सखि, सात-सयां परिवार ॥वा०॥  
 तेरैसै मनपञ्जरी सखि, ऋतुमती विपुल प्रकर ॥वा०॥२॥  
 ओही नाथी मुनि छ विहा सखि, सात-सयां परिवार ॥वा०॥  
 पांचमयां भुतकेवली सखि, चवदे पूरवधार ॥वा०॥३॥  
 मुनिमंडल सँ परिवर्या सखि, चवद सहस अधिकार ॥वा०॥  
 अज्ञा सहस छर्चास सँ सखि, परिवरिया करिवार ॥वा०॥४॥  
 वनपाल जाय बभामखी सखि, अशिक रायने दीघ ॥वा०॥  
 अशिक नरपति बांदवा सखि, चालै अपनी रिद्ध ॥वा०॥५॥  
 पांचे अमिगम साचव्या सखि, तीन प्रदिचखा देय ॥वा०॥  
 पंचगि करै वंदना सखि, बीर चरण आदेय ॥वा०॥६॥  
 गखी बेलख करै छै गूइली सखि, राजा अशिक री घर नार ॥वा०॥  
 गूइली गावै गहगही सखि, सहव सुन्दर नार ॥वा०॥७॥  
 चिहूमति चूरण साधियो सखि, सरधा पीठ बसाय ॥वा०॥  
 वतरायै कूंकु वरयो सखि, श्रीफल शिवफल टाय ॥वा०॥८॥  
 ज्ञानसार गुण भक्ति श्री सखि, बघावै गुरुराय ॥वा०॥  
 प्रभु मुख थी मुनि देशना सखि, मखिजन मन हरषाय ॥वा०॥९॥

# श्री दादा गुरुदेव स्तवनम्

( १ ) राग—फग

सुखकारी, जिनदत्त गुरुगुरु बलिहारी ।

संघ सकल नो संकट बारी, पंचनदी जिण तारी ॥सु०॥१॥

विद्यापोषी परगट कारी, यांभी वज्र बिहारी ॥सु०॥२॥

सूतक गऊ जिन जिनमदिर ते, मंत्रत करीय उठारी ॥सु०॥३॥

ज्ञानसार गुरु चरनकमल की, बारी यां बार हजारी ॥सु०॥४॥

( २ ) राग—सोरठ

गुनहे माफ करो, गुरुगुरु मेरे गुनहे० ।

मैं तो खूनी खूनी खूनी, तो भी दस्त खरो ॥सु०॥१॥

नहिं हूं जीगी नहिं संसारी, ऐसे कूं उधरो ॥सु०॥२॥

नहिं हूं इतका नहिं हूं उतका, जैसे घोषी को कुकरो ॥सु०॥३॥

मैं हूं सदगुरु गुण का भूखा, मेरी भूख दरो ॥सु०॥४॥

ज्ञानसार कहै गुरुदेवा, मोसूं महारि धरो ॥सु०॥५॥

# श्री सिद्धाचल आदि जिन स्तवनम्

[अथगुण्य षोडश काव्य कर्तुं जिनमतं किय १, प. देरी]

आत्म रूप अज्ञात न ज्ञातुं निज पशुं ।  
तेह थो भव अग्रमास प्रमाणुं भव पशुं ॥  
भव भमणा नो अंत संत कदियै हुतौ ।  
तौ एहवौ अणसरथी हूं कदियै हुतौ ॥१॥  
जैन धरम विषु अन्य धरम सरथा नही ।  
साथी संका रहित जेह जिनवर कही ॥  
जिन-पदिमा जिन सरिखी निहचै सरदहूं ।  
तौ पिण भाव उल्लास न जिन दरसख सहूं ॥२॥  
तेह थो सुभ मन आन्ति अत्यन्त अभव्यनी ।  
सेखुंज करस्यै निहचै न थई भव्यनी ॥  
आधुनकी आचारिख तवना में कहे ।  
भव्य विना नही करस्यै विषु संका रहे ॥३॥  
सुहा पिवासा सीत उत्तनता में सही ।  
बुद्धवयै पग पंच खंचोखारख रही ॥

---

१ श्रीमद्भूषेणचन्द्रजी के बन्धुधर जिन विहरमान स्तवन की  
तीसरी गाथा में ।

कंटक पीड़ा पग तल पाखै दुस्सही ।  
 इत्यादिक बहु वेदन थी केली कही ॥४॥  
 जपशा पाली चरख दया नै कारखै ।  
 नवि पाली में जीवनी हिंसा कारखै ॥  
 बरज्या उन्नत निमत असख दुखख बली ।  
 आत्म अर्थ संयम जतना नवि पली ॥५॥  
 आलस थी बहिकमखादिक विष नाचरखू ।  
 दृष्ट्यां थी चतुराख्यै उचर ऊचरखू ॥  
 बरखी सर्व सचित्त सर्वथा चित्त थी ।  
 पिण दुख विह लागी मन बच वृत्ति थी ॥६॥  
 अमिश्रहीत फल करनी भिक्षा आदरी ।  
 चौ घर लावालाभै समता नादरी ॥  
 सरस निरस आहारै सम हुती फल ।  
 अति शीरस आहार कदेक निसमफल ॥७॥  
 देव द्रव्य खानानी मनसा नवि रही ।  
 अन्य अखाती देख हरष भायो नहीं ॥  
 सेवुंज गिरवासी आवक साधु बसा ।  
 कोई मन बल्लभ केता असुखमखा ॥८॥

धावक उधावक जिनवादी सम भिन्न ।  
 पूछ्यै प्रसन्नै ज्ञानावध वचन नरु ॥  
 कुल कली कतरस बीषस कइो किह कसो ।  
 जैसा नामै पूजापद जैसा प्रसो ॥६॥  
 धावक जिनवादी धावक जत ऊचै ।  
 सिंगी भापी संवत वंदन परिहरै ॥  
 सकरी ब्रह्मै साधु भेषक वंदन करू ।  
 तुम तेहनें सम्यक्वर्त नहिं आहूतू ॥१०॥  
 हम कहिसौ तौ जिन पदिमा पावाय नी ।  
 भाव सुदता बी ते जिन सम मानवी ॥  
 भेषक नू वंदन ए . पसै संभवै ।  
 ते जिन बीर छतै किम वंदन संभवै ॥  
 बास कष्ट देखाही सुखभू सरिखा यथा ।  
 वंचै सुगव नैं दै उपदेस सुदामना ॥  
 जिन वचनै अविरुद्ध सुद सह उपदिसै ।  
 जिह किण मत नू कवन सिहां समतै कसै ॥१२॥  
 मत समती धावक नैं सम्यक्जी कहै ।  
 अवमत्वी नैं मिथ्यात्वी कहि सरदहै ॥

मासूँ जिन मत जोर आपस मत में नहीं ।

तेहना कटक करण अवैसा नवि कही ॥१३॥

ठपावक जिनवादी प्रकट कहै इसी ।

अंतम आचारित्र कहै ते अममें हुसी ॥

उदर भरण कारण जिन दिखा संग्रही ।

पेट भर्यै कम नीत ठसक आवै लही ॥१४॥

मत अविरোধी देख आत्म अवि ऊतसै ।

बमती थी बतलाऊँ भिन्न मन नवि इसै ॥

जिनमत वचन बिरुद्ध मनसा मासूँ नहीं ।

इम कहितां दूधपायै मिश्रतनमन मई ॥१५॥

जिनरागी छूँ न राम, राम जिन वचन थी ।

जिन वच अविरोधक न विराधक जैन थी ॥

जिण जिन बेनै अविरोध विराध्यौ वचन नैं ।

तिण जिण अनंत विराध विराध्यौ जैन नैं ॥१६॥

आधव करखी इस सरिखी एके नहीं ।

आराधिक सम संवर करखी नवि कही ॥

ए जिन संवर करखी शुद्ध थी नवि सबै ।

तेरै शब्द प्रमाण प्रमाण ए सबै ॥१७॥

संग्रह नय श्री आत्म सत्ता अनुभवम् ।  
 तद्गत गुण पर्याय पश्ये मन परमम् ॥  
 गुण पर्याये धर्म सुखाय समाधि श्री ।  
 आत्म साक्षा वेदं अव्याप्ताय श्री ॥१८॥  
 कालादिक पञ्च कारण नी तद्भावता ।  
 भास्ये आत्म सूर्ये आत्म सुमानता ॥  
 तदयं वे मत आत्म उल्लास निरचै हुती ।  
 भव्य दुस्सुं तौ आभ्या माहरी सिद्ध वशी ॥१९॥  
 श्री पिण्ड अपराधि पर किरण रासुज्यौ ।  
 अपराधी आशी मति अंतर दासुज्यौ ॥  
 सम निवरे निनरात्र सेवक निश्चै सह ।  
 मन मन चरस साख देव्यौ एहं कहं ॥२०॥  
 विध रस बारस सति (१८६६) पञ्चगुण वद चरदत्तै ।  
 पिद्धमिरी करस्वी मन वच तन उल्लासै ॥  
 ग्यांनसार निजचर्चा आत्म हित मल्ली ।  
 न्ययम त्रिर्दद समोर्धे अति रति युष दुखी ॥२१॥

इति श्री सिद्धाचल जिनस्वरूप संपूर्वम् ।

॥ वं० १८०१ लि० पं० कृष्ण ॥

# ज्ञानसार ग्रन्थावली-खंड २

## भाव कटकिशिका

### छतीसी संग्रह

॥ दोहा ॥

क्रिया असुषता कह्यु नहीं, भाव असुद्ध अशेष ।  
 मरि सत्तम नरकें गयी, तंदुल-मच्छ विशेष ॥१॥  
 भाव शुद्धता को भई, कदा क्रिया को चार ।  
 ददपहार हुयतें गयी, इत्या कीनी च्यार ॥२॥  
 साधुक्रिया कह्यु न करी, अश्वमेध की भाव ।  
 भाव शुद्ध की सिद्ध तें, सिद्ध अनंत समाय ॥३॥

१ क्रिया की असुद्धताकी किनार भाव नहीं होती, समस्तपर्यं भाव की असुद्धता की 'मर' नाम-वही है ( मच्छ की जगति ) तंदुल मच्छ तलबी नरकें गयी ।

२ ऐसी क्रिया की खुं । भाव की असुद्धता की सिद्धता की ।  
 पहले भाव शुद्धता पर्यं क्रिया की अवर्तव खुं, एतरी क्रिया ही न  
 ही, किं ददपहारी ५ इत्या क्रिया की करक भाव शुद्धता की  
 हुयते पुहली, एतरी कयसी क्रिया की खुं । भाव शुद्धता मुख्य  
 कसपीनूत मुक्ति की जे, तेव जिसे । "

३ साधु की तप संन्यासि क्रिया 'अश्वमेध' नाम-व करती, मधदेवा  
 भाव शुद्धनी सिद्धता की अनंत सिद्धी में 'समाय' नाम-तदाकार भई ।



साठ सहित वरसें करी, किरिया अतिदि अशुद्ध ।  
 नरत अरीसा मौन में, भाव शुद्ध ते सिद्ध ॥४॥  
 ननुकारसी व्रत नहीं, करतौ कूर अहार ।  
 भाव शुद्ध ते सिद्ध है, कुरगद्ध अशुभाहार ॥५॥

४ में जो अशुद्ध बिना सिद्ध पवित्र है ही बात हमारे लक्ष्य  
 हाई सामर्थ्य आशीर्वाद सिद्ध आशीर्वाद बिना फलें पान नहीं  
 में भाव ही शुद्धता को प्राप्त पकवती सिद्ध नहीं । पुनर्गति ।

५ सिद्ध अशुद्धता तब, बिना, तैमा ही नरकाली बिना मत  
 करती नहीं ही अह-अशुद्धता ही बात ही ही ।

किरायि केदक दती कदसा काया तें पाठ में हसी दुम्भी  
 'ननुकारसी मत नहीं' पर साधु में नरकाली मात्र मत कदेई व है ।  
 जब मैं कभी नुहने ही बीच से निकल बै, हाँ ही 'ननुकार बिना मत नहीं,'  
 हसी पाठ पर देख, बिना सिद्ध कबल ही है । जब उन्ने कभी नरकाली  
 जो में पाठ है तब मैं कभी लक्षित । पर सिद्ध देखता हूँ ही भी  
 पाठ है—अम मित्रावर्धन-अम बिना गच्छति ग्यानी समति  
 अम आदकः अमम कुरादि निम्नति सान्त् अनुचतुर कदा पतीति  
 मगान्तुम् यः पशुत कुरादि अलोप तुल्ये कुरगद्धक भाव राचरी  
 नृनिर्गोप तु निरुद्धनाम् । जीव कूर तीव्र कुरादि कमान्त य पुन्यपात्र  
 मकरे दह ।

यथा—सज्येसुं नि ज्येसुं कसाय निगाहं समं तयो बलि  
 अं लेख नामादसौ सिद्धो ननुसोवि शुर्जतो ।  
 ॐ महामुनिराज

क्रिया भाव सुख असुख तें<sup>१</sup>, मेन्यो नरक समाज<sup>२</sup> ।  
 भाव सुद्ध तें सिध मयी<sup>३</sup>, प्रसनचंद नृविराज<sup>४</sup> ॥६॥  
 केवलि सी करली करै, अमव लिख संपन्न ।  
 पै गंठी मेदै नहीं, भाव सुद्ध तें शुद्ध ॥७॥  
 पूर्व कोइ देसोनता, क्रिया कठिन जिन कीन ।  
 कुरक बहुराह नरक गति, असुद्ध भाव तें लीन ॥८॥

१ १ सुद्ध तापु क्रिया असुद्ध भाव की ।

२ संसार नाम दुःख, कुरी कुरी बंधन-मय बांधी ।  
 तें संसारद यवै कर्मकर्मका की कलमति संबंधी, समाज नाम समझी की  
 ३ भावनी सुद्धता की प्राप्त पद पाव्यो ।

४ राजा, नृविराज ।

५ केवलचरित नाम-अर्थो करक । पुनः किरा अमव हिरेन  
 साधुसेन संक-मुक्त । वैराज उवाचि, विष्णुनाम मयी मेदै न,  
 मान्योति । कर्म नाम वसु न बांधै । तिरा लिखै—क्रिया तो निमित्त कारण है ।  
 असाधारण कारण भाव । हे सुद्ध भाव की, शुद्धता की गंठी मेदै न बाध ।

६ तिरा काला मोह, जन्म हजार कीन, यवै १ पूर्व, काला मोह पूर्व २  
 देहोन, अर्थात् असाधारण क्रिया कल्ले मोह ही नरक गया ।

यथा—वर्षेति मेघ कुम्भाभ्यां, 'दिवापि द्युय पक्ष च ।

मुसलधार मयन्योन, यथा राज्ञे कथा दिवा । १ ।

अतः—सुद्ध कालेन इतिभार्य न्यु कियेति ।

बंस खेल<sup>१</sup> किरिया करी, साधु किया नहीं लेह<sup>२</sup> ।  
 इलापुत्र केवल भरै, कारन भाव विशेष<sup>३</sup> ॥६॥  
 चरख क्रमण किरिया करी,<sup>४</sup> गुर हूँ संघ बढ़ाय ।  
 भाव शुद्ध केवल भवै,<sup>५</sup> नव दीक्षित मुनिगय<sup>६</sup> ॥१०॥  
 कपिल दुयक अति सोभवस, लालच क्रिय लयलीन ।  
 शुद्ध भाव उपही मज्जौ, आत्म पदवी लीन<sup>७</sup> ॥११॥  
 पनरैसै<sup>८</sup> तावस भवै, गौतम<sup>९</sup> दीक्षा दीक्ष ।  
 ते केवल कमला करै, कौन किया तिन कीष<sup>१०</sup> ॥१२॥

६ १ यह किरिया, २ साधु किया न करी किंचित्, ३ कथाविहीन विष भाव  
 की भाविवयता ।

१० ४ पाद की चलावणी तरुण किया पुरही साधु किया न करी  
 ५ इसी विष भाव की उज्ज्वलता की केवल पार्वी उज्ज्वल बोधार्थित मुनि राज ।

११ दुयक संक भाव बंवास, भाव मिष्टक दया—

“जहा लाहो तहा लोहो,, जहा लोहो पण्डुपण्ड ।

दोय मास कणाय कणाय कोदीचवि न बिहुरै ॥”

६ पाम्बोपुक्ति पदवी लीनी

१२ ७ पनरैसै तीन उमर, ८ गौतम गोपीन कणभू, ९ ते उज्ज्वल दीक्षित  
 केवल कमला-रूपी करै-पार्वी रेख १० कमलतरण में पौष्टता पूरी साधु किया की  
 कर लीनी, ती किया नी खुं ।

कृत अपराध समावर्ती, निज गुरुजी के साथ ।  
 समावर्ती शुद्ध भाव से, सिद्ध सुरुष बनाय ॥१३॥  
 साथ किया कैसें सबै, पायी मैं पीलत ।  
 शुद्ध भाव ते शिव सहै, संदक शिष्य महंत ॥१४॥  
 नाथ नचन किरिया करी, साथ किया नहीं कीध ।  
 आपाइभूते भाव सुख, सिद्ध सुधारस पीध ॥१५॥

१३ पीलना किया अपराध में पीलानी गुरुजी सबै अपराधोंमें  
 समाविष्ट जहाँ केवल लखी ते शिव साथी ही साथ किया कीनी । निज  
 शुद्धभावा से सिद्ध सकलै बनाय पवित्र थी । तथा नाम दर्शन—

अनृत<sup>१</sup> साहसं<sup>२</sup> नाथा<sup>३</sup> सूर्योत्थमदि<sup>४</sup>-लोभता<sup>५</sup> ।

असीध<sup>६</sup> निर्देय<sup>७</sup> च लीलां दोषा स्वभावजा ॥१॥

पायी लीलात भाव शुद्ध भी सिद्ध थी । ती पीध समर्थ भाव में  
 अविकल्पता थी ।

१४ समेष्टमें सबी कही—

“ विमह्म नमस्तेषु कित्त्वच्छेषो जम्भे अणिभ्यो । ”

ऐसी पापत किया मैं कही थी, निज पापी में पीलीलात प्रति  
 दृष्ट्य हृदि करी ते साथ ही सभी समर्थ निज अलाचार्य कथा-  
 (निर्मल सकल संकथों) भाव शुद्ध भी शिव बुद्धि बड़ी-बड़ी, संदक-  
 गुरुजी ना पीधमें भेदा महंत बढ़ला ।

१५ नाचनी नचन नाचनी ऐसी किया हाथों हाथों से किया  
 थी । तथा साथ भी किया सर्वथा प्रभो नहीं । तेन करें अपादभूत  
 सिद्धसकलै द्वारा अमृत सब पीन-पान कर्तुं, ती से सिद्धज्जु पायी ।

तेहिज दिन दीचा ग्रही, किया कौनसी होय ।

पैं गुह्य भावें सिद्धता, नञ्जसुकुमलें कोय ॥ १६ ॥

गुह्यसागर केवल लखौ, सांभल पृथ्वीचंद ।

पौतै केवल पद लई, गुह्य भाव शिव संघ ॥ १७ ॥

सिद्धता भवै करीर अब, सुनि करखी किम होय ।

साधु सुकोशल शिव लई, कारण अन्य न कोय ॥ १८ ॥

१६ तद्वै किया नो आधिक्यता किम जानी जाय फिर किया नो किंचत् आधिक्यता तद्वै को तेहिज दिन दीचा ने तेहिज दिन मुक्ति, तौ हहां जगत् गुप्त है । हूं तुमने पूछूं हूं कहोनी तेज दिन में साधु किया सी क्यों ? तेथी किया नो सु ?

१७ तौ ज्ञान करखीभूत है सिद्ध नौ, नैं को किया सिद्धकारका तद्वै तो पृथ्वीचंदै गुह्यसागर ने केवल उपज्यो सुगुनै पौतै केवल पाम्यो सिद्ध सांभलत रूप किया भई ते सांभलत रूप किया साधु किया में गुह्यी तौ भवै । नही तो साधु किया नौ तौ केरा हो नही ।

१८ फिर कहोनी सिद्ध शरीर ना मांस प्रमुख ना संघ करी करी नैं अक्षय करै तद्वै सुनि करखी सी भाव नैं ज रीते सुकोशल साधु शिव पामे तौ मुक्ति पामता नैं अन्य लखै भाव व्यभिचिक । कारण, न कोय नही कोई । एतलै-व्याख्य कलै अनुमूलनरुपाचार्ये विचारी नैं ज पद बचन कह्यो यथा-“छूते ज्ञानान्न मुक्ति” ज्ञानात् छूते नाम ज्ञानभावे मुक्ति न स्वादिसिवात्” एतलै किया न

संलग्न साक्ष उत्तरसा, साधु क्रिया सी कीध ।

मय निवास उक्त भाव सुख, सिद्ध शुद्ध पद सीध ॥१६॥

उपव्रतौ एक पदुर में, केवल ज्ञान अनंत ।

भाव अशुद्ध ते नहि लहै, श्री दमसार महंत ॥ २० ॥

असंख्यात दृष्टान्त हूँ, कौलुं बरखे जाय ।

पै जेते बुधि में बदे, ते ते दीध बताय ॥ २१ ॥

हुयें तो पिया मुक्ति, पिया ज्ञान ने अभावों तो मुक्ति नौ अभाव हीन हो  
पतली असाधारण कारण मुक्ति नौ ज्ञान हो ।

१६ ने जो ज्ञानभावे किया मुक्ति कारिका हुये तो संलग्न अधिनी  
साक्षकारी विचारों साधुकरणी सी कीधी । पिया भावशुद्धताची मय-  
संसार नौ निवास-पक्षों तेज मुँहने शुद्ध कलकीसिद्धपद सीध=साधौ

२० ने जो २ नही हुये ज्ञान=भाव शुद्धता मुक्तिकारणीमूल न  
हुयें तो एक पदुर उपरान्त केवल दमसार महंत महत्मा ने उपव्रतौ  
व्रतों मूल कर्तरीमूल जो-शुद्धभाव तेने अनुदये ने अशुद्ध भाव  
ने कदये निषेधक मिश्रकरणीय अनंत परार्थोक्तोकी केवलज्ञान सर्व  
ज्ञान का मुख्य उपजतो रही गयी, तेही भावपथ मुक्ति कारण ।

२१ न संख्या असंख्या-अंशक पदअसंख्यात, नही संख्या गिनती  
न भाव पतली गिनती ही न विद्याय तेवला दृष्टान्तों को वर्णन करता  
किम पार पामियै, न न पामियै । तेही मैं संशुद्धि नी मुद्धे पदया  
तेवला बतायी दीया ।

भाव शुद्धता सिद्ध की, कारण तीन का— ।

क्रिया सिद्ध कारण नहीं, निश्चय नय संभाव ॥ २२ ॥

२२ तैत्तिरी भाषा की शुद्धता तैत्तिरी सिद्ध नू परम कारणों मूल पदों होने ही कासे है नै क्रिया सिद्ध नो कारण नहीं । निश्चय नय नै स्मरण कर, चिन्तन कर निश्चय नय अपेक्षायै क्रिया सिद्धकारिका नहीं । × हमे भाषा कबु ते जगत जंतु नै अनेक भाषा की प्रवृत्ति प्रवृत्ति रही है कोईक लोअन नू कदाचरी पदों विषय भावै प्रवृत्ति रहा है तिमज हस्तिरागी जता कदाकार कदाकाल मही पदों प्रवृत्ति रहा है इत्यादि भाषा नू महय इहां मही । इहां मी जड़ मी विन्न पदों आत्मस्वरूप अज्ञेय, अज्ञेय अविना नाही जे शुद्ध आत्मस्वभाव नू भाषन चिन्तन ते भाषा नू इहां महय है ।

× इहां दोहै नै पदुं—‘भाव शुद्धता सिद्ध की, कारण तीन का’—ते जो विचारो नै जोइये तो अनादि काले कर्तव्य सिद्ध भया ते सब नै भाषा शुद्धता रूप, मुख्य असाधारण कारण भया, यान्यै ते पिय मूल कारणै सिद्ध वास्तवै नै वर्तमान काले पिय पत्र कारणै सिद्ध गई रहा है नै सिद्ध नै विनै पिय अनन्तज्ञान पदुं है, अनन्त क्रिया पदुं नहीं, कां नहीं ? मी आत्मा मी ज्ञान लक्षण है नै क्रिया जड़ मी लक्षण है । तैत्तिरी शुद्धता कतर दस में कबु— ‘क्रिया सिद्ध कारण नहीं’ तैत्तिरी निश्चय नयनो अपेक्षायै संभावनीने व जोइये तो । कदा सिद्ध नू कारण तीन कावै नहीं, तैत्तिरी सिद्ध नू मूलकारणों मूल ज्ञान है ।

ज्ञान सकल नय सावित्र, करसी दासी प्राय ।

सुख भावना सिद्ध की, कलन करन कहाय ॥ २३ ॥

ज्ञानात्म समवाय है, किरिया अद संबंध ।

पलै किरिया आत्मा, तीन काल असंबंध ॥ २४ ॥

२३ तिमत्र ज्ञान ने नैवमादि काठ नवै साधी जोइयै ती राता प्राय ग्यान, नै दासी नाम-बांही प्राय करसी नाम कथा, तेथी सुखभावन चितवन तै सिद्ध नौ रस करय है यथा-अद्यावारय करय करयं,

कीई इहां इस कहिसी सिद्धांत मां परबू कवन है यथा—  
ज्ञान क्रियाम्यां मोक्षः तथा “इयं भाषा क्रियाईम्यं, इया अन्वायो कथा,  
कासंतो पंगतो बहो, वायमासोव अंधतो १” परबू सिद्धांत मां कवन  
है । तइयै कीई इहां इस कहिसी, तूं सिद्धांत की किरिये भावय  
किम भायै है ? सिद्धां सिद्ध हूँ । सिद्धांतानुसार विद्य विवहार  
नय नी सुखतायै र गथा नू कवन है । तेज आगे दूहायो मां  
कवन मे विद्य कथनू है । इहां निदयै नयनी आविकथता है ।

२४ तेथी ज्ञान है तेरो आत्मा नै समवाय संबन्ध है यथा—  
कहू समवेत कथं सुखयते लल समवाय तेथी आत्मा मां मिलयो हनौ  
ज्ञान है क्रिया नी अद की संबन्ध है । आत्मा रे तीने काले क्रिया  
धी असंबन्ध है कल आत्मा जेउते ज्ञान गुण्य परगुण्यो नही  
तेउते क क्रियानी सुखता मानो रखे है, किरिये नै जोइयै तो  
इमज है ।



धर्मो अपने धर्म हूँ, न तबै लीनूँ काह ।

आत्मज्ञान गुण ना तबै, जड़ किरिया की चाह ॥२५॥

प्रकृति गुण की ओर है, सदा अनादि सुभाव ।

मग पित की परिपाक तें शुद्धात्म सदभाव ॥ २६ ॥

२४ धर्मो सौताभा धर्म नै न छोड़े, तैसी आत्मा ज्ञानधर्मो,  
जड़ किर्याधर्मो नी चाह-रीति न छोड़े । यथा नाम दर्शयति—  
जे दोहे में कहा धर्मो अपने धर्म हूँ, न तबै लीनूँ काह । ते  
लीलावत बारयारूप पद नूँ धर्म, तिम ज्ञानधारयारूप पद धर्म । प  
धर्म जेहूँ मां रखा है तेहूँ नै धर्मो कहियै, तेहूँही पदधर्मो सौतावत  
बारय धर्म । ज एवै नाम न मेले, नाम न छोड़े । तिमज पदधर्मो  
ज्ञानधारयारूप धर्म लीनूँ काह मां न छोड़े । पद पदो न भवति,  
पद पदो न वेति वा तिम, तिम आत्मज्ञान गुण ना तबै, जड़ किरिया  
की चाह तैसी आत्मा लीने ही कहैं धर्म नै न छोड़े “अनन्तरस  
अर्थात्तो भागे, निरुपुन्धादियो बिटई” इति जिनवचन आचार्यात्  
नै तिमज जड़ किर्या धर्म, न मेले ।

दियै शुद्ध आत्म सुभाषी पणुँ आत्मा पावै ते रीति तिसैं—  
कर्म प्रकृति नै जीव नी अभादि सुभाषैं जोड़ी है यथा—कनकोपलवत  
खोना नी पाषाण की स्थान मां जोड़ी, तिम जीव नै अर्कत नी जोड़ी ।  
पक्षी भव नी पित नी काह तेनी परिपाकवस्था धर्मो दोष टलैं, भल्ली  
टहरी ऊपरई पक्षी अनुक्रमें शुद्धात्मा नै कल्पमयो वाच, रहस्यार्थी—  
आत्मा, आत्मा स्वरूपमर्थ वाच ।

शुद्धात्म सद्-भावता, शुद्ध भाव संयोग ।

भाव शुद्ध की सिद्ध हुई, पाक काल परिशोध ॥ २७ ॥

काल पाक कारन मिलें, किरिया कष्ट न काम ।

पालन किरिया विन बड़ी, काल दसन अमिराम ॥ २८ ॥

२७ ते आत्मा शुद्ध स्वै की भाव । शुद्ध ते आत्मा स्वरूप की भाव तेना संयोग की भाव मित्राप की ते भाव की सिद्धता काल पाक बिना नहीं

२८ जिस कालपाक की सिद्धता यवै बिना पावय कियारै अमिराम-मनोहर कालक का दंत बड़ी जाव ।

कालो सहाय निबई पुन्य कर्म पुरसकारयो पंच । समवाय सम्मत परति होई मिच्छत १ २ गाथा सर्व नयनी अपेक्षारै जोइये तो ए पांचेई समबाई कारण मिश्रिया बिना कार्य की सिद्धता नहीं, निरु मिच्छा में जोइये तो ए पांचेई कारणो का मुख्यता काल कारण की है । तेही आनन्दचन सुखाखुषे यहू कहुँ :—कालकर्मणि कहि र्वं निहाकधुँ” तेही काल परिपाक मुख्य कारण मिहूँ जोइये क्या—सकदेवा, हठप्रहार, भ्रतादिक ने काल परिपाक कारण की सिद्धता की सिद्ध गई में बीजुँ साधु कियारि नूँ कारण ही कारणीभूत विशेषें न हुँतूँ काल पाक कारण मिलै लौ विशेषें किया कार्य कोई नहीं ।

जिम कर्म साधिया देव ने ही कालपाक कारण न मिल्यो, नहीं तो केवल पापी ने सिद्धे अ जाता । तेही अ मुख्य कारण काणी में अ गाथा में नयन ‘कालो सहाय निबई’ यहूँ गुंप्पु ।

काल पाक की सिद्ध ते, सहित सिद्ध हूँ जाय ।  
 विन वरणा कलौ कलौ, व्युं वसंत बनराय ॥ २६ ॥  
 भवपरिवृति परिपाक विन, मान शुद्ध नहि होय ।  
 हुनि करसी कर नरक गति, कुरह कुरह दोष ॥ २७ ॥  
 क्रिया उपायी सर्वथा, बंझक किरिया चार ।  
 नै बंझक लक्ष्य रहित, सो सब शुभ आचार ॥ २८ ॥

२६ तेही कालपाक की सिद्धता वही कह्यो निष्पन्नास सिद्ध नी सिद्धता हूँ जाय जा० हूँ ॥ वया विन वरणा -मेह वारन्धां विना फूल कलौ सहित एक वृक्ष ही नही सब वनराय हूँ ते वनराजी ने फूल फल पाषाण कारख वर्षों में जमाने का फूल कलौ निवृ कालपाक कारख मिल्यो तिमज कालपाक नी सिद्धता विना २७ दिवस ताई स्त्री ने पुरुष संयोगे पुत्रोत्पत्ति का न गई ने २३ वी १ दिवस तेनें बिने पुत्रोत्पत्ति का गई । पितृ पाक काल नी दिवस मिल्ये सिद्धता गई, इत्यादि केवला एक किलू, लघ्यान्त वया किल्लवाने जानी कोझो ।

२७, २८ तिमज भवपरिवृति नी परिपाक कारख मिल्यां विना अन्य कारख नी सिद्धता नही, शुद्ध मान कारणी नी सिद्धता किदाभी, तेदभीज हुनिकरणी अति दुस्तद प्रवर्तक वेई हुनि नरके का गया, पितृ काल पाक कारख व मिल्यो तेही मूल कारख ए छै । इहां कोई इस कहिस्यै 'रगते होई मिचकत' पितृ इहां से नै क्रिया कयाभी ते बांझ सहित क्रिया कयती छै । किम बांझ सहित क्रिया निष्पन्न छै ने बांझ रहित क्रिया शुद्ध आचरख छै

'लौखं' कारण सिद्ध नहीं, 'लौखं' उद्यम सेव ।  
 घट कारण की सिद्धि से, उद्यम सेव निषेध ॥३६॥  
 भाव हृत्तीसी सविक जन, भावे सज निज भाव ।  
 निमग्नभाव सबदधि तिन, नई मई सी\* नाव ॥३७॥  
 सर\* रस\* सज\* ससि\* संवर्ते, गौतम केवल लीन\* ।  
 किसनगई चौपास कर, संपूरन रस पीन\* ॥३८॥  
 अति रति आवक आपदे, विरची भाव संवन्ध\* ।  
 रत्नराज गणि सीस\* मुनि. ज्ञानसार मतिपंद\* ॥३९॥  
 ॥ इति भाव अतिशक्ति समाप्ताः ॥

प्रवर्तनी आर्त्त रौद्र भान म प्रवर्तनी तेरी ओ चलावे, समनरसामी  
 पक्षी १२ भावना रूप सर्वभान की मय दुई 'आत्म स्वभाव तेने  
 भावये, चिन्तवने । तो आत्मा की शुद्ध स्वभाव आत्मा मां सहितै  
 निःप्रधानै संप्रकषी, पावसी ।

३६ : घट कार्यरूप उद्यम सेव की निषेध, नाकारी ।

३७ \* गुरत से हुई ।

३८ + गौतम गोपी इन्द्रध्वजे केवल पान्थी\*दीपमात्रिका दिने ।

३९ \* अत्यन्त रति के आवक-ने आपद की विशेष गूँथी  
 भाव तो कवन : शिखर \*संदुद्धिने ।

+ जैनारं मोक्षदा गोत्रे सुखदाय भावके आत्मन्म चिन्तन  
 अरागिने शुद्ध वृत्ते किनदरीन आदर्थी । पक्षी हूँ किसनगद  
 आधी तियारै समससार चिन्तन निरुद्ध बांधी मुख प रची ने गूँ की  
 तेकर प बांधी ने बांधू मूँकी दीपू ॥

# जिनमताश्रित आत्मप्रबोध अतीसी

अथ संग्रह कथन रा दोहरा

श्री परमात्म परम पद, रहे अनंत समाय<sup>१</sup> ।  
ताको हूँ वंदन करूँ, हाथ जोर धिर नाय ॥१॥

अथ शुद्धात्मा वर्णनम् ॥ अथाः—

आत्म अनुभव अभूत को, जिन जिय कीनी पान ।  
ताको हूँ वरनन करूँ, अनुभव रस की खान ॥२॥

अथ शुद्ध स्वरूपी वर्णनम् । अथाः—

सर्वेषा इच्छीसा

आकै घट भीतर ज्ञान मान मोर भयो,  
भरम तम जोर गयो, जागी शुभ वासना<sup>२</sup> ।  
काम को निवारी, मान माया को उत्तार डानी,  
लोभ कोष को विदारी, अंदर प्रकाशना ॥  
आत्म सुविलासी,<sup>३</sup> शुद्ध अनुभू को अभ्यासी,  
शुभ रूप<sup>४</sup> को प्रकाशी, मासी ऐसी वासना ॥  
ज्ञान दशा जागी, पर परहित हूँ अशुद्ध त्यागी,  
ज्ञानसार भयो रागी करत उपासना<sup>५</sup> ॥३॥

पाठान्तर—<sup>१</sup>भावना

१ एकीभूत २ स्वरूपचितनी ३ उन्मूल ४ सेवा ।

## सर्वेषां भद्रादया

धर्म की विनासी अहं संग सों उदासी,  
 तजी आस दासी आराम अम्यासी है ।  
 अन्य आहारे हारीं नैनहु की नींद टारी,  
 कर्म कला जगी आषा प्रकाशी है ॥  
 ज्ञानायाम को प्रवासी<sup>१</sup> पचैन्द्री जय काशी<sup>२</sup>  
 'ध्यान को विवासी ऐसी दशा वासी' है ।  
 साधु मुद्रा धारी ध्रुव<sup>३</sup> धर्माधिकारी,  
 ज्ञानसार बलिहारी सुद्ध सुद्ध सासी<sup>४</sup> है ॥४॥

अथ अष्टाद<sup>५</sup> अष्टान्वा धर्मोत्तम<sup>६</sup> सभाः—

सर्वेषां तेतीसा<sup>७</sup>

मुंह के मुंहइया बनवास के बसइया,  
 धूपधान के करइया, अज्ञान विस्तारयो है ।

१ आदारी । २ ज्ञानायाम 'प्राक्पक्ष स्वाक्ष प्रत्यास रोचनं २ जीत्या द्वे  
 त्रिषु ३ जगती ४ त्वभावा सर्वनिष्ठता धर्मो न्या० अक्षय, आत्म तत्त्वज्ञान  
 अधिकारी, धारक ५ तत्त्वज्ञ साहसीक ६ प्राज्ञ धर्मोत्तम प्रथम अष्टाद  
 धर्म धारक परमात्मा सुद्ध धर्मोपाधि तत्त्व ७ कोई आचार्य इकतीसों सू  
 सर्वेषां नै कविच कहे नै कोई अप्यस तद् नै कविच संज्ञा कहे नै और

नाम के सहसा मम्म भूर<sup>१</sup> के चढ़या,  
 राम नाम के रटया अब पूर तैं भरयो है ।  
 राकी अब रूप तम भूर<sup>२</sup> दूर करिवैं कीं,  
 आपा शुद्ध ज्ञान भान निराबाध रस बरयो है ।  
 ज्ञान दशा जगती अब अशुद्ध परखित त्वागी,  
 ज्ञानसार मयी रागी समता रस भरयो है ॥४॥

अथ आभ्यास मन्त्र कथन

बोहरा—

जो त्रिय<sup>३</sup> ज्ञान रसै भरयो, राकी बंध नवीन<sup>४</sup> ।  
 होहि नहीं ऐसी कहै, सो दुषुद्धि मति छीन<sup>५</sup> ॥५॥  
 सोऊ<sup>६</sup> कहि निवहार में, लीन मयी ज्यों जीव ।  
 राकीं मुक्ति न होहिभी, सही दुषुद्धी जीव ॥७॥

अथ शुद्ध जिनमत कथन

बोहरा

निर्धै अरु व्यवहार डै, नव भाषी जिनराज ।  
 सापेचा एक<sup>७</sup> एकसीं, करै जिनामम माभ<sup>८</sup> ॥८॥

चौथीसैं बांछ सब नै सवैयो न कहै । १ प्रचुर २ समस्त ३ ज्ञानी  
 की भोग कर्म, निर्धरा की होत हैं पढ़यो कहै नै जग में मगन रहै, ते  
 ऊपर कथन ४ अवोगी अवन्धक ५ दुषुद्ध ६ अवैभार मयी कहै  
 ७ अपेचा बांछ ८ रहस्य ।

अथ निश्चय ज्ञानद्वार लघोपरि गृह्यन्त कथन समर्पिता इकतीकाः—

जैसे कोऊ मथानहु की दोऊ दौर अँच रहे,  
 मांसन कुं चढ़े पै कैसें हु न पह्यै ।  
 दोऊं दौर छोरे खाँदि तौहु दधि मये नाँदि,  
 एक अँच एक दीलैं मांसन कौ लहियै ॥  
 जैसे जैनी प्रश्न करें विषद्वारै कथन करै,  
 ता बेर निश्चै दोरी छोरी हु न चहियै ।  
 निश्चै नथ कथन बेर विषद्वारैं न देख बेर,  
 ऐसें शुद्ध कथन तैं आषा लखह्यै ॥६॥

अथ ज्ञान किया कथन चौपाईः—

जैसे अँच पांगुनी<sup>१</sup> कोऊ, आँस पाउतैं कर मए दोऊ ।  
 पंगु खँचपरि अँचक चान्थौ, आप निकरतैं पंगु निकान्थौ ॥१०॥  
 अँच किया अह पंगु ग्यान, इकतैं सिद्ध न होष निदान ।  
 ज्ञानबँत जो करनी करै, मोक्ष पदारथ निहचै वरै ॥११॥  
 शुद्ध सरूप करी तप करी, ज्ञान किया तैं शिवगति वरी ।  
 एक ज्ञानतैं मानै मोक्ष, सो अज्ञान बिध्यामति पोष ॥१२॥

पुनः उद्देय मत कथन चौपाईः—

अपनी<sup>२</sup> शुद्धात्म पद जोवै, किया<sup>३</sup> विभावै<sup>४</sup> ममान न होवै ।  
 मोक्ष पदारथ मानै जैसे, जिनमत तैं विपरीत विशेषै ॥१३॥

१ पांगुली २ आपणे ३ आत्मा ४ शुद्धपद सारी आत्मा अह सुं  
 गिला छै पतली मुखे कही पर मुखमें दुखमें सुखी पास दुखी पाय तइह  
 कहिपारुष ठहिरयो तेथी सी सिद्धता २ आत्म स्वभावमात्र ४ भेद



आत्म प्रत्युत्तर कथन चौदहाः—

स्याद्वाद<sup>१</sup> जिनमत कथन, अस्तिनास्तिता<sup>२</sup> रूप ।

ता विन को कैतें लखी, आत्म शुद्ध सरूप ॥१४॥

पुनरपि तदेव मत कथन चौधईः—

जो करता<sup>३</sup> भुगता नहीं बानीं, आत्मरूप अकरता ठानीं<sup>४</sup> ।

सुखदुखरूपक्रियाफल हो है, विन आत्मफल भुगता को है ॥१५॥

अस्तोवरि जिनमत प्रत्युत्तर कथन चौधईः—

करता करम करमफल काभी, मास्ती त्रिभुवन जनके सांभी ।

क्रिया करै अकरता मानै, सो जिनमत को मरम न जानै ॥१६॥

आय स्याद्वाद कथन सवईया इच्छीसः—

शुद्ध<sup>५</sup> साधु मेव धरै, अर्बचक क्रिया करै,

संत्यादिक दशौ विधि, यति धर्म धारी है ।

की की डुरी, मजुतेषी की छुरी । पड़ू समयसार बाजो कहे है क्रिया  
ने । १ स्याद्वादं स्याद्वाद २ स्यादस्ति नास्ति ।

३ ये जो आत्मा ने कर्ता भोक्तृ न मानौ सो शुभकर्म तुम्हें  
क्यूं पवर्तौ छी । एका शुभ फल नौ, आत्मा ने ती शुभ फल नौ मौग  
लैज नहीं ती शुभ करखी करख बड़ ताकत नौ परै निपटू उठरी ।  
अकारणत्वात् ४ स्वाभी, तेभी जैनी नू परन, ती क्रिया क्यूं करी ५  
शुद्ध शब्दैर्न-न रमिन्त्या न बोधन्त्या इत्याचार्योक्तं सत्यंवात् । एतस्याम कद

पांचूँ मदायत धरै, छहूँ काय रथा करै,

महा मैले बस्त्रधारी, ऐसे जो मिल्यारी है ।

बाच लों विहारी, परीसद सहै भारी,

जीवन की आशा टारी<sup>१</sup> मरख भय निवारी हैं ।

ज्ञानानल कर्म धारी, शुद्ध रूप के सुभारी<sup>२</sup>,

ऐसे ज्ञान क्रियाधारी, सिद्धि अविकारी हैं ॥१७॥

बोहरा

ज्ञान क्रिया है सिद्ध के, कारण कहे किर्नद ।

एक ज्ञान तैं सिद्ध है, भावै सो मतिर्नद ॥१८॥

ज्ञान क्रियेपरि दृष्टान्त कथन बोहरा:—

ज्ञान एकहु सिद्ध की, कारण कहे न होय ।

एक चक्र रथ ना चलै, चलै मिलै जब दोय ॥१९॥

पुनरपि उद्देश मत कथन बोहरा

सदा शुद्ध तिरुँ काल में, आत्म कय न अशुद्ध ।

हम तुम हैं संसार सो प्रत्यक्ष बिरुद्ध ॥२०॥

नी निराकरण करुं । १ जीवी आस मरख भय निष्पमुक्के  
२ प्रत्यक्षकारी ।

३ वे सदा आत्मा नै शुद्ध मानौ औ सो बाहरै म्हारे आत्मारै

नाम अध्यात्म थापना, द्रव्य अध्यात्म छोर ।  
भाव अध्यात्म जिन मर्ते, सार्वे नाता जोर ॥२१॥

( चौपाई )

आत्म बुद्धि गह्वी कायादिक, बहिरात्म जानौ अव रूपक ।  
काया साखी भँतर आत्म, शुद्ध स्वरूपमई परमात्म ॥२२॥  
सदा शुद्ध ओ आत्म होय, ती आत्म वय भेद न होय ।  
यार्ते सदाकाल नहीं शुद्ध, करम बाध तँ होय निशुद्ध ॥२३॥

पुनरपि तदैव यतोपरि जिनमद कथन दोहरा:—

पुद्गल संघी<sup>१</sup> आत्मा, अशुभ प्यान में लीन<sup>२</sup> ।  
तिथी केर सुख मानिखौ, सो मिथ्यात्म लीन ॥२४॥

पुनरपि तदैव नत कथन दोहरा सौरठा:—

कदे न<sup>३</sup> लामै कर्म, कदे आत्ममाराध लीं ।  
इह मिथ्यामति भर्म, वंश मोल है आत्मा ॥२५॥

कर्म व काय हुँत ही संसार में नवै कल्प भी जानता, की ए बात प्रत्यक्ष निरुद्ध कल्पने प्रत्यात्मामात् । तेनी छौं कीनी तथा शुद्ध आत्मार्कन निदान विष निरुद्ध ठहिरौ । कथा—आत्मतु पुष्कल रूप बनिधनमेव । कर्म ? प्रत्यक्ष निरुद्ध कात् ।

१ ओ आत्मा की एक लमाया भेद ही न हूती । २ धिन्धी लती ।  
३ विषय सेवन कलौ, दिवा प्रवर्जन कलौ ।

४ “निष्ठ कर्मात्मन ओ कहुँ तो ज्यमै निरुद्ध होव ।” पुनरपि—“शुद्ध स्वरूपी ओ कहुँ, बल्य बोध निवार । न कही संसारी दसा, पुरुष

जीव कर्म की ओढ़<sup>१</sup>, है अनादि सुभाव सौं ।  
इह मिथ्यामति छोड़, जीव अकर्ता कर्म कौं ॥२६॥

अथ अरुण पक्षोपरि त्रिजगत कथन दोहराः—

कर्म करै कल भोगवै, जीव इत्य कौ भाव<sup>२</sup> ।  
शुभ तैं शुभ अशुभैं अशुभ, कीने कर्म प्रभाव<sup>३</sup> ॥२७॥

अथ सर्वगत भिन्नित कथन दोहराः—

नित्यानित्य केई कहे, स्वर तैं केईक ।  
के<sup>४</sup> ईश्वर प्रेयो कहे, केई कहे अस्तीक<sup>५</sup> ॥२८॥  
वदन्त्या केई कहे<sup>६</sup>, भूत-मई कहे कोय<sup>७</sup> ।  
असहार्द भावम दरब<sup>८</sup>, नित्य अरुपी सोय ॥२९॥

अथ शुद्ध स्वाहाय्य अवर्तन कथन कुल्लक्षितः—

घर में या बन में रही, मेघ रूप विन मेघ ।  
तप संयम<sup>९</sup> करखी बिना, कीई न लखै अलोख<sup>१०</sup> ॥  
को न लखै अलोख, बिना तप संयम करखी ।  
ज्ञान किया ए दीय, उदधि संसार बितरखी<sup>११</sup> ॥

पाठ बीछार ११

१ “कर्मकौनकाल् पवन पुन्य टकी, जीवी अनादि सुभाव ।” २ लक्षण  
३ कर्तव्य । ४ ईश्वर केतो कथ्येत् सर्वथा स्वप्रदीपना ५ केई कहे ईश्वर प्रेयो कहे  
तो अस्ति ६ केई लखै अशुभ<sup>१</sup> भावकाली दन्त्या कर्तव्य निध ।

७ केई कहे आत्मा इती कर्तव्य से न नहीं, केतन कथा ती दनपूत मई छै ।  
८ कर्तव्य दू पवन, कदापि केई ती नहीं आत्मा इत्य है ९ ज्ञाने हृदिता ती दमन  
१० अलख ११ ज्ञान ।

एक ज्ञान हूँ मोक्ष, मान कारण क्यों बरमें ।  
तब संयम हूँ धर्म, लखी अनलस<sup>१</sup> घट घर में ॥३०॥

( दोहरा )

घट घर में अनलस लखी, स्याद्वाद<sup>२</sup> तैं शुद्ध ।  
स्याद् कथन विन अलस कौं, लखै कौन विष तूद्ध<sup>३</sup> ॥  
रूप लखै कहु बस्तु नहीं<sup>४</sup>, अलस लख्यो क्यों जाय ।  
स्याद्वाद कटमत मर्खो<sup>५</sup>, यातें प्रगट ललाय ॥३२॥

अथ जिनमत प्रहंसा कथन दोहरा—

जिन मत विन प्रयकाल<sup>६</sup> मैं, निगबाव<sup>७</sup> रस रूप ।  
लखै<sup>८</sup> कौन विष आत्मा, यातब शुद्ध सरूप ॥३३॥

अन्तर्मुखी —

पूरव पुण्य संयोगे जिन मत पाव्यो ।  
स्याद्वाद<sup>९</sup> परमाद, शुद्ध पद पाव्यो ॥

१ अलस अज्ञानसंज्ञक विषय, लखी न समझ २ द्वैतत्वज्ञान । कथं ।

३ “कनी भई हो कहु नहीं” ४ कथनवाचितरामन् — “घट दसकथ” तिन कहु नहीं” कानों पक्षी जैन नहीं, कहु कय ही मत ।

५ निगबाव अथ व्यापना — पीला रङ्गित पक्षी अती आलस-संज्ञक रूप से मन्तो । पाव्यो शुद्धत्वज्ञान धर्म लक्षण ई उपाय

६ यातें = जैसाहि त्यागुराजर्त कथित ।

स्वाद कथन विन<sup>१</sup> शुद्ध, रहित को जानिहैं ।  
परिहां या विन कहि हम जान्यौ, सो नहीं मानि हैं ॥३४॥

बोहरा—

कोय कहै सब आपनै, मत की करै प्रशंस ।  
निमता<sup>२</sup> विन शुद्ध बचन रस, पावै नहीं निरस<sup>३</sup> ॥३५॥  
भावक भावह सौं करै, बोहरादिक बढ़ीस ।  
ज्ञानभार दधि सार<sup>४</sup> लौं, द आत्म छूतीस ॥३६॥

॥ इति श्री आत्मसमबोध छूतीसीकवचम्पूर्णम् ॥

१ ठेन विना २ निर्मलत्व ३ निर्मलोद्योगी वस्त्राद् न निःश्रमलोचरीः ४ मास्य की की ।

• ई कहि कहीरी उपसय कोर नै पाव बैसो जद जगदी कही  
जहै चरनपाठो कनो कहुं ते सिखान्त कही ती दोष कही  
ई नी कहुं, जद से कही ई ती उपसयवन दूष बाधुं छुं जद तिये  
कहुं कनैसारी सिखान्त जानै । जद से कहुं कनैसार निमल नै  
नी से तिकरै कहुं—ई । उपसयव से कोरी जे ती कनै सिखानी  
तिकरै भावक कनै जहै “अनया ते कोरस कोरस ते आनया” ९  
सिखान्त नूँ एक पक मही ने जे कोरी हूरी ते जगदी ने कही ते सुखी  
मनस भद कही बलि ॥

# ॥ चारित्र्य द्वितीया ॥

( दोहा )

ज्ञान धरौ किरिया करौ\*, मन राखौ विश्राम\* ।  
वै चारित्र्य कै लेख कै, मत राखौ परिणाम ॥१॥  
जो लौ सो हम पूछ कै, लेख्यौ संयम भार ।  
संयम करणी नहिं सुगम, संयम सैंडा धार ॥२॥  
चारित बिन जो सिद्ध की, करणा पूछै कोय ।  
तौ बिन चारित सिद्ध की, कारण अन्य न होय ॥३॥  
यो चारित छै सिद्ध की, कारण सो कह्य और ।  
औ\* चारित तौ सिद्ध की, बाधक\* कारन ठोर ॥४॥  
तुलैं हम चाहित की, म धरो मन मैं प्रीत ।  
जिन चारित तै सिद्ध छै, मो नहीं हममें रीत ॥५॥

---

\* जिससे-से लिखी जायें मोक्षार्थी चारित्र्य सेवानो अत्यासद कृत्य,  
ए अर्थात् ली । पक्षी जेना बंधक जिया सो परिणाम करता बा,  
तेनो बंधक-सी आस्था देखी लीयो, तेनो चारित्र्य म लीयो ।

१ स्वरूप ज्ञान धरौ, अर्चन जिया करौ २ राम राखौ

३ आज्ञाकारी सम्बन्धी ४ सिद्ध जहाँ ने लोक ५ आज्ञाकारी में

औ चारित' सो भीर है, औ चारित ती भिन्न ।  
 दन्त दुरिद' देखन बुदे, खाने के सो अन्य ॥६॥  
 दीसैं कण्ठ आव ही, इन उन चारित बीच ।  
 अन्तर रैनी घौसको, उज्जल बल अरु कीच ॥७॥  
 नारन शुद्ध चारित्र की, कैसैं लहियैं शुद्ध ।  
 शुद्धात्म अनुबो सदा, अलम गुण अविरुद्ध' ॥८॥  
 शुद्धात्म अनुबो मई', ज्यो सद्भाव' विशुद्ध ।  
 सो चारित इन काल में, पावै नहीं प्रसिद्ध' ॥९॥  
 जो जिन' काली नीचजै, सो उन काली होय ।  
 विन वरपा वरपामई', पादप बुद्ध न होय' ॥१०॥  
 तातैं इन कलिकाल'' में, उन चारित की शुद्ध ।  
 करियैं वै कैसैं हूवैं, जो इन काल विरुद्ध'' ॥११॥

१ आत्म लक्षण प्रवचनानी, २ दुरिद=दुखी, ३ कामाक्ष्यादि  
 पाँचों आत्म इस प्रकार ४ शुद्धात्मा नी अनुबो बोल'ती यह वच  
 नमें इस विषे लु अवधिसे विवे, ५ न दोसै ६ सद्भाव ७  
 आधुनको चारित्रिक में अत्यन्त ही न दोसै । ८ अविरुद्ध नी अर्थन ही,  
 पर' शुद्धी ही अर्थन न ही । चारित्रिको अर्थन चारित्र भावों से ही न  
 अर्थन ऐसा शुद्धिपनो भा इत्ये । ९ नीचे भावें १० अर्थकल  
 सम्बन्धी ११ काल नी यही, अर्थ ही यही, इस काली नाम, यथादि  
 चारित्र और पावै ही यही पर' सद्भाव भिन्न आत्म इस बुद्धि मणी  
 न पाय । अति सरल ॥ १२ अर्थन काल में १३ अर्थ काली सामान्यक





चौथे आरे की क्रिया, हुँदै पंचम मांही ।  
 सो कहैं रावे नहिँ, जूँ स्वयं पद नम मांदि ॥१६॥  
 लफड़ी हुँदै आष में, मच्छी पद अल मादि ।  
 मकरी पद ज्यों जाल में, तीनु में एक नादि ॥१७॥  
 हुँदै चारविषा घरे, समय को सुर खोज ।  
 उषाँ ती दीवैं ही कोषाँ, अंधारै की मौज ॥१८॥  
 पंडित “नारक” सीस दी, आषाँ पर समझाय ।  
 सुगुणै सब ही जामघो, आठम बोध उपाय ॥१९॥

आठवा प्रवर्तन अष्टोत्तमि विभिन्नै देवी किया या अथवा आठवें बोधी  
 अथवा अष्टमो अष्टम बोधी है । अष्टमि में बोधा की बाँध देह  
 आठवा है पदवा बोधी है । इति अर्थ ॥

१ पंडी पन आठम, पुनरपि । २ मच्छी ३ ४ ५ ६ अष्टमो  
 की परै जैन चारिष नूँ ७ आठौ अष्टम । ४ सुर नाम चारिष किया  
 नूँ बोध प्रवर्तन पृष्ठतैं बोध बोधी इन विस्तरे । आठ पंचमअष्ट वा  
 चारिषिषो माँ है चारिषो माँ चारिष नूँ देहा ही है ही नहिँ ‘महा’  
 भिन्न ? हेतो “अष्टोत्तम विस्वासा” अथवि इधे उचित ।

१ ज्यों ही नाम अष्ट अष्टम चारिषि की चारिष प्रवर्तन में है  
 अष्टमी रूप बोधी किया ही अष्टोत्तम अष्टम आठवें की बीज है ।

आठवें आठवा है । ७ अष्टम को बोध नाम देहे ।

साधु धर्म की सीख दे, करें धर्म की पुष्ट ।  
 पाती सीख विचारियै (तौ) करें धर्म सौ सुष्ट<sup>१</sup> ॥२०॥  
 आत्म गुन समेट करन, ओ चरित आचार ।  
 आत्म शुद्ध विचारियै, ताहीं मित्राचार<sup>२</sup> ॥२१॥  
 आत्म गुन परमात्त हूँ, ओ चरित रवि रूप<sup>३</sup> ।  
 ओ सुदृढात्म अनुभवी,<sup>४</sup> आत्म शुद्ध स्वरूप<sup>५</sup> ॥२२॥  
 या चरित्र अनंत गुन, आत्म समति अखेद<sup>६</sup> ।  
 बरखीवै सिद्धान्त में, सत्तर भेद दश भेद ॥२३॥

१ साधु ही जग दुखिनी सीख दे, तीरें धर्म सम्ये चरित धर्म हूँ  
 यह हीच ही सीख हूँ दीनी । दिहा मित्रु में जग चरित ॥  
 चरित देखने सब मिली है । सब जगम धर्म समेष्टार व  
 मानवी ऐसी ।

२ स्वरूप जानक चरित हूँ मित्राचारी हूँ ।

३ ओ नाम नीचे चारि हो चरित बालकस्य अक्षरा में एहि रूप  
 सुख हीन हूँ ।

४ ओ नाम जो चरित शुद्ध अन्त आत्मा ही अनुभवी विनय  
 है—सूते निज नामचतुस्र ।

५ हो चरित नवी मानु । आत्म हूँ शुद्ध स्वरूप हीन हूँ ।

६ आत्मा हो चरित रूप शुच स्वरूप अक्षराही अखेद ।

ओ चारित्र जो पाईयै, सफल कलै तो सेद<sup>१</sup> ।  
 उन चारित्र की सेद सौं, आत्म करै असेद<sup>२</sup> ॥२४॥  
 उवा संयम विन भेस ज्यौ, बाह्य लिंग को पुष्ट ।  
 दायक भावे ज्यौ हुवै, अंतर आत्म दष्ट ॥२५॥  
 अन्तर आत्म दष्ट सौं, दायक भाव निरुद्ध ।  
 सो पंचम कालै नही, आत्म गुण अविरुद्ध<sup>३</sup> ॥२६॥  
 यथास्थान चारित्र की, कैसे वरनी जाय ।  
 अनंतकाल या जीव<sup>४</sup> हूँ, एक बैर ही बाय<sup>५</sup> ॥२७॥  
 सरचरित प्रसि रूप ज्यौ, देशचरित अनु रूप ।  
 मिथी जई<sup>६</sup> पै ज्यो हुवै, सो चारित्र अनूप ॥२८॥  
 नाथ दरस विन जीव की, पूरा फल की सिद्ध ।  
 या विन कसहुँ हूँ नही, सो सब शास्त्र पसिद्ध ॥२९॥  
 आयौ ताहि निभाइयै, नवै न करियै होस ।  
 इनमें कछु नही<sup>७</sup> नही, देव धरम की सीत ॥३०॥  
 हम हूँ तो अनजान में, सीनी संयम मार ।  
 संयम कछु कम्भी नही, आपा बायो<sup>८</sup> मार ॥३१॥

१ तो चारित्र सम्पन्नी के प्रकृत कीजै तो ।

२ कर्मफल सेद की ३ अविरुद्धी ४ जीव भाव में ५ परमात्मते  
 प्राप्त करण सब परिचरित ज्ञानकी पद ६ कलकामते ७ चारित्र का  
 भाव । ८ धरम जीव में अनंतकाली कीकी बात न मिलै ९ दुहर  
 की १० कसहुँ चरित में नही नही ११ पसिद्ध कलौ

तार्ते पंचमकाल में, म करौ चारित्र बात ।  
 घर बैठे संयम<sup>१</sup> धरौ, ज्यूं हो दिन ज्यों रात ॥३२॥  
 पंचेन्द्रिय को जीतवौ, मन राख्यौ विशुद्ध ।  
 सो भिनराजै उपदिश्यौ, संयम सदा सुशुद्ध<sup>२</sup> ॥३३॥  
 सो संयम कौलों नहीं, तौलों निष्कल खेद ।  
 बाह्य<sup>३</sup> क्रिया तौ कष्ट है, यह जस्यौ प्र वेद ॥३४॥  
 क्रोध मान माया तजै, लोभ मोह अरु मार<sup>४</sup> ।  
 सोई सुर सुख अनुमयी, 'नारन' उतरै पार ॥३५॥  
 दिन विषहरै निरबई, निष्कल कसौ जिनेश ।  
 सो तौ हन विषहार में,<sup>५</sup> बाकी<sup>६</sup> नहीं लपखेश ॥३६॥

॥ इति श्री चारित्र्य कृत्तीसीकी सम्पूर्णम् ॥

१ इन्द्रिय सम २ सुद्ध शीमता सुद्ध सुशुद्ध ३ बाह्य वह भी  
 क्यूं पड़्युं, तेही जस्यौ मान । संयम अर्थात् विचार पर पड़्युं, ते  
 निज अहम मान ४ दोन क्रिया बलि तेह पड़्यु ५ ज्यन्ता में पड़्युं  
 बौ तेही बाह्य इति श्री कस्यौ बाह्यन जस्यौ बौ तेही 'बाह्यना ते  
 कीलना, परीलना ते बाह्यना' सिद्धान्तोक्तम् ५ बाह्य ६ म्हाँ पारिष-  
 वरस कन ज्यवदात में ६ बाकी सुद्ध चारित्र्यौ ।

• जेसजमे वास्तव्य विषयी मोदू केना सम्पत्ताकसी ही संवेदन वाली  
 चारित्र्य सेतीने निकले ते भर्त्स्य की ।

( जेसजमे वास्तव्य विषयी सम्पत्ताकसी की की मोदू, केना संवेदन  
 वाली रिहा सेती कुं योग्य नहीं ज्यन्त के निवारण की, कसाह हू करये  
 कुं रिषकुं सम्पत्ताक में ६ चारित्र्य कृत्तीसी की । ) ( अथ० म० )

# मतिप्रबोध द्वितीया

( बोधा )

तप<sup>१</sup> तप तप (तप) क्यों करौ, एक तप आत्म तप ।  
बिन तप संजमता मजी, कूरमद्वयै आप ॥१॥  
एक तप तैं एक ज्ञान तैं, कारण सिद्ध<sup>२</sup> न होय ।  
ज्ञानयत्न करनी करै, तौ कारण सिद्ध होय ॥२॥  
यथा सकृति तप पढ़वजै<sup>३</sup>, संयम पालै शुद्ध ।  
क्यों इत<sup>४</sup> उत इंदुत फिरै, षट्में प्रगट प्रसिद्ध ॥३॥  
खंभ<sup>५</sup> चढ़ायै तनय कू<sup>६</sup>, हेरत फिरी विदेश ।  
सुरत मई तब संमर्षी, पूत खंभ परवेश<sup>७</sup> ॥४॥  
खंभ चढ़ायै फिरत हूँ, हेरत मत मत देश ।  
आत्म खोजै आप में, शुद्ध रूप परवेश ॥५॥

---

१ इंदुत सम्बन्धी कथन २ महा मुनिराज ३ आत्मा स्वकथ रूप  
४ अंगीकार करे ५ ज्येष्ठ राज पंडितो मयूख में ६ प्रवेश ।

• फलामरी—इंदुत हमी रे, मुनियत पाई गाल । इं०

जिन इंदुता जिन पालनी रे, गरिरे पानी बैठ ।

हैं पूंजी इत की, रहिय किनारे बैठ । इं० ॥

आत्म सोई पाइयै, शुद्धात्म को रूप ।  
 तप तीरथ नहीं योगमें, आत्म रूप अनूप ॥६॥  
 है तप तीरथ योग में, शुद्ध आत्म की रूप ।  
 वै अब है तप समस्त विन, मायै आत्म रूप ॥७॥  
 परम नहीं मत समस्तमें, समस्त मांदि तप नाहि ।  
 दया नहीं मत समस्त में, धर्म न पूजा मांदि ॥८॥  
 परम नहीं जिन पूजना, धर्म न दया समस्त ।  
 है दोनूँ में समस्त विन, जिन आत्म अस्तुहार ॥९॥  
 है तप पूजा पुनि दया, मांदि विनेरवर धर्म ।  
 निमता विन शुद्ध वचन रस, को पायै मत धर्म ॥१०॥  
 अपनी अपनी उक्ति की, मुक्ति करै सब कोष ।  
 मैं बलिहारी संत की, ओ शुद्ध मायक होय ॥११॥  
 विरला शुद्ध मायै वचन, विरला पातै शील ।  
 निहोमी विरला अगत, विरला संत सुशील ॥१२॥

( सोपडा )

निहोमी विरलाह, निर्दोषी विरला निपट ।  
 समान्त उच्छाह, करै सो विरला अगत ॥१३॥

क्या वंचन चौंके अरै, ए निराला ही जोष ।  
 शीतकाल में घन पटा, कोइक बरषै होष ॥१४॥  
 तैसे निरपेक्षक बचन, अपनी बति अनुसार ।  
 भावै जिनमत तै विरुद्ध, तनु बहुलौ संसार ॥१५॥  
 सुप्रऽनुसार कइ बचन, तापेक्षक निरधार ।  
 ते सुषवासी संत जन, ज्ञानसार बलिहार ॥१६॥  
 भावै उत्प्रेक्षक बचन, किया दिखावे कूर ।  
 बाकौ तब संयम सरब, कपौ करापौ धूर ॥१७॥  
 हम सरिले इह काल में, किया दिखानै सुदूष ।  
 वै वंचक करखी जितौ, तेही सरब असिदूष ॥१८॥  
 निरवंचक करखी करै, सो तौ संवर भाष ।  
 हम वंचक करखी करै, सो भाषव लक्ष्मण ॥१९॥  
 किरिया बरुके पान ज्या, भाखी विभूजन साध ।  
 स्वतारक वंचक बिना, वंचक' सो निकाम ॥२०॥  
 निरवंचक करनी करै, ज्ञान गुनै सम्मीर ।  
 बलिहारी उन संत की, सम दम सरल सपीर ॥२१॥



ज्ञान किया दो सिद्ध कै, काम्य कई विनंद ।  
 एक एक तै सिद्धता, मात्रै तो मतिर्मंद ॥२२॥  
 किया करै संयम परै, निरविकार निमग्न ।  
 मात्रै सत्यवचन, हूँ बलिहारी निज ॥२३॥  
 आत्म अलुप्त के रसिक, ताकी यह स्वरूप ।  
 ममत छोर निमग्न कई, विनम्र शुद्ध स्वरूप ॥२४॥  
 जे ममत फन्दे फँसै, ताकै बन्ध नहीं ।  
 होहि नहीं कैसे कई, जे मत ममत प्रवीन ॥२५॥  
 मारे मत के ममत के, करै तराई चोर ।  
 जे अपने मत में नहीं, कई विनाश चोर ॥२६॥  
 वै कठोरता की वचन, कासों कहिनी नहि ।  
 बिना ज्ञान शुद्ध अस्तु मति, कैसेह न कहाहि ॥२७॥  
 तूँ काहूँ सँ कठिन अति, वचन कहित क्यों वीर ।  
 बिना ज्ञान को जान है, कैसे विनम्र \* वीर ॥२८॥  
 केहूँ जीव दयामती, पूज्यमती केहूँ ।  
 निर ममता की वचन, कौन कई तद्वीर ॥२९॥  
 यातै कैसे पाइयै, विनम्र शुद्ध स्वरूप ।  
 विनम्र विन कैसे लखै, आत्म रूप अनूप ॥३०॥

आत्म शुद्ध सरूप की, कारण जिनमत्त एक ।  
 हम तैं जैसे मेघ घर, कीच कियो एक मेक ॥३१॥  
 परमव हर हूँ है निहृव, भव सब दिनौ हारि ।  
 स्वयँ सीस पट हार की, निरमय सोलैं नारि ॥३२॥  
 आत्म शुद्ध सरूप बिन, कैसे पारै सिद्ध ।  
 किन बिन कारण कार्य की, पाई माई सिद्ध ॥३३॥  
 पातैं मत घर संग तैं, परम रूप ज्यो रह्य ।  
 कैसे हूँ नहि पाद्यों, कोटि करी को यत्न ॥३४॥  
 पातैं घर बैठे कगो, आत्म निधा आप ।  
 सम दम लम की लप कगी, ज्यो पंच पद आप ॥३५॥  
 एहि जिनमत्त की रहिस, दया पूज निममल ।  
 ममत्त सहित निष्फल दऊ, यहै जिनामम लख ॥३६॥  
 मतप्रबोध षट्त्रिंशिका, जिन आगम अनुसार ।  
 “ज्ञानसार” नामा मई, रची शुद्ध आधार ॥३७॥

॥ इति मतप्रबोध द्वितीया समाप्ता ॥

# संबोध अष्टोत्तरी



अरिहंत सिद्ध अनंत, आचारिण उवम्भाय वलि ।  
साधु सकल समरंत, नित का मंगल नारया ॥१॥  
परमात्म सुं प्रीति, कही किसी पर कीजियै ।  
बीतराय भव बीत, निरै केह बिष नारया ॥२॥  
सुती कांप सचेत, मयो प्रात भगवंत भज ।  
बिहीया कीनो चेत, नहीं रैख भव नारया ॥३॥  
सुतां समर्यौ नाहि, आप्यां पंचे सुं ज्यौ ।  
मातो ममता माहि, निरंजन भज्यौ न नारया ॥४॥  
आरै कदे न याद, मरयो सगलां ज्युं मनै ।  
इल सुनौ आवाद, नहीं खबर तुम नारया ॥५॥  
छाया मिसै छलेद,, काल पुरष केहै पहचौ ।  
ज्वान बाल पृद्ध जेह, नितका निमलै नारया ॥६॥  
इल में कीन इलाज, नहीं कला ओषद नहीं ।  
अल्पे काल अहिराज, न बचै काया नारया ॥७॥  
छिन छिन छीजै आय, पांखी ज्युं पुसली तयो ।  
घड़ी घड़ी घट जाय नित की छीज्याः नारया ॥८॥

पुरस जिहँ परभाव, दीठा ते दीसँ नहीं ।  
 विषम कालरी बात, न कही जायै नारद्या ॥६॥  
 अश्लीला श्राप्य जाय, जाया फिर अश्लील हुनै ।  
 मर पिय जायै जाय, नातो अनियत नारद्या ॥७॥  
 नहि मोन नहि आत, नहीं ठाम फिर कुल नहीं ।  
 जीवन फरस्यौ जात, न मुँखा जाया नारद्या ॥८॥  
 जूँ दीसँ मोत, सब पर में सँप्या समै ।  
 उदयो भरफ उदोत, न रहै तुम जग नारद्या ॥९॥  
 सुकँ तबे मादाइ, खोरी अब जूँ कवल ।  
 पतटे दे पादाइ, न चलै एक पग नारद्या ॥१०॥  
 सुकँ न मोखी मूल, सुमपति नारन मालती ।  
 जजा रहे न अदल, नर धुपकायो नारद्या ॥११॥  
 हुगठा जुगै मराल, बंदहरा विष्टा मसै ।  
 लिहिया अंक लिलाइ, न मिटै मेढ्या नारद्या ॥१२॥  
 बहपख तजे बदाइ, जगमै नर क्यूँकर जीयै ।  
 उमलै उदधि अवाइ, नित परलौ हुँ नारद्या ॥१३॥

अगनी देत उलाव, पांथी एक पलक में ।  
 लाभी बहवा लाव, न चुम्के जल छ' नारखा ॥१७॥  
 बांनर तखो निनोद, कदे न कीथो काम रौ ।  
 प्रमदैं नहीं प्रमोद, नीच लखानस नारखा ॥१८॥  
 ठंडौ उदासि अथाह, धाम न पावै तेरुधा ।  
 राजविपा रौ राह, नर कुल जायैं नारखा ॥१९॥  
 धन पादैं पर' मांदि, सरचैं नहीं लावस निमय ।  
 ममत् लीयै नर जादि, न दिखे कोही नारखा ॥२०॥  
 दोष कला ह्वै दोष, बलि दिन दिन बषती बषै ।  
 सरवर हचैं सरोज, निमपति दोठैं नारखा ॥२१॥  
 पावक तवै न पांथ, सो कसा जल में सवै ।  
 सूरख तवै न मान, निव अघिको ह्वै नारखा ॥२२॥  
 बाझीनर बाजार, दुनियां समस्त देखता ।  
 नर छ' करदैं नार, निजर बंध कर नारखा ॥२३॥  
 सीपखो अति सीत, पखो बख ठंडर पद' ।  
 मांख' करै परि प्रीत, न परै दूसर नारखा ॥२४॥  
 जल बे बैठ जहाज, पर दीपै परै पवन ।  
 करै मसख रौ काक, न परै दूसर नारखा ॥२५॥

अति दुर्गन्ध आहार, भरतै वलि पैला वसन ।  
 मृत विर्य मन भार, न बरे दूसर नारणा ॥२६॥  
 विश खेवटिचें वाय, चान्ण्यां नाव न चालवें ।  
 कारण काज्ज बाध, नीत अमत में नारणा ॥२७॥  
 करिघर केरी कान, तरल दूख तुरियां लखी ।  
 पीपल केरी पान, विचण्या रहै न नारणा ॥२८॥  
 घरे न मेली मान, बाघदियो जलहर बिशां ।  
 पट्टी रही वा शीघ, न विर्य घर चल नारणा ॥२९॥  
 सब संसार असार, सार नहीं विश सोधतां ।  
 मरिये दुख नंदार, नहीं तुल विश नारणा ॥३०॥  
 कटारी रो काम, कद होवै किरपांश खं ।  
 नगपति हुंदी नाम, न रहै रोडा नारणा ॥३१॥  
 अण अण आर्नें जाय, रात दिना रीरी करै ।  
 कपडो मिलै न काम, निरमायी नै नारणा ॥३२॥  
 कीनी होय कुकाम, सो सोधवतां सोदिलौ ।  
 विश कीधे वदनांश, नित कर कामे नारणा ॥३३॥  
 हृद हृद विहां दसंत, पुरस त्रिपां बैठी प्रबल ।  
 नाचो होय निचंत, निरलज आखै नारणा ॥३४॥  
 मारम में मिलियांद, बनवा कल्लावै मति ।  
 गूचीली माछयांद, निमष न मेलै नारणा ॥३५॥

मोला बैस तयाह, मेदां हूँ भावै नहीं ।

पन विष अरु पयाह, न मरै सरबल नारखा ॥३६॥

उद्यम बिहूखी आय, आफे घर आवै नहीं ।

धोश कम्पां बिन पात, न गले कदे न नारखा ॥३७॥

कांखी निपट कुरूप, कलइय कूटल कुलहली ।

हस्थौ पुण्य अनुरूप, नहीं पाव बिन नारखा ॥३८॥

कीचा परै कपाल, माता ईलाह नीसरै ।

फटै फिर कंठमात, नहीं पाव बिन नारखा ॥३९॥

साता चइय सुरंग, भांत भांत मोजन मला ।

सुषरा बीर सुरंग, नहीं पुण्य बिन नारखा ॥४०॥

आदर करै अपार, जन सगला की जा करै ।

अति सुन्दर आकार, नहीं पुण्य बिन नारखा ॥४१॥

अति ऊँचा आवात, चतुर चितेरे बीतरथा ।

अबल उबल आतात, नहीं पुण्य बिन नारखा ॥४२॥

निपट निरोगी काम, ज्ञान खान सब ही पचै ।

अति सुम्बी हूँ आय, नहीं पुण्य बिन नारखा ॥४३॥

पूत पयो परिवार, सानुकूल सुन्दर सह ।

निपट कछाँ में नार, नहीं पुण्य बिन नारखा ॥४४॥

बोले ऊँचा बोले, नीची कद तकै नहीं ।

रत दिना रंगबोले, नहीं पुण्य विन नारदा ॥४५॥

थडिम तुलै थडियाँह, मिथिया जावै नहीं मिथिम ।

जविहर पर जडियाँह, नहीं पुण्य विन नारदा ॥४६॥

लाखै ग्याने लोक, कर जोड़े आस्था करै ।

सदा सुखी नहीं लोक, नहीं पुण्य विन नारदा ॥४७॥

आटो देवै अन्न, पूत मीठो देवै पचा ।

कैहक हता कुम्ह, नहिं दियै दाखी नारदा ॥४८॥

सुख सुखवै सुखावा, अति दुख हूँ अषाँख नै ।

पटिपौ क्युँक पुराँख, नर समझै नहीं नारदा ॥४९॥

सिंह सद्दा प्राय, बाधाँ पर भूझै बलि ।

बोग कसम नारदा, न हूँ किछ सुँ नारदा ॥५०॥

माया मिलै न दूख, काया सौ कसयै कस्यौ ।

अँक सिरिया अणदूख, निदवै जाखी नारदा ॥५१॥

ऊँचै सुरज एक, लाखै गानै लोचया ।

निरख्यो जाय निमेष, नहीं तेज सौ नारदा ॥५२॥

पहरीजै पर प्रीत, खादवै अपनी सुखी ।

राखीजै प्र रीत, नित का सुख नै नारदा ॥५३॥



करिबर कुंभ प्रहार, मीढ़ जग्या सिद्ध करै ।

नम जनम्यां सुर नार, न परे पर पम नारका ॥५४॥

आगत न करौ एक, रातै भूखी ना रहै ।

परभारै भर पेट, नहीं दुस्त अब नारका ॥५५॥

अब फाटी आकास, कहि कारी कैसी करा ।

प्रकट भिचारो पास, नरपति मानै नारका ॥५६॥

एक नरपति इक नार, स्वाम्य ॥ दीन सभा ।

विश्व स्वार्थे विचार, न करै संगति नारका ॥५७॥

नरपति हंसी नेह, स्वार्थ विश्व अवसै सुरयो ।

दीठौ क्रिया घर देह, नहीं अवत कहि नारका ॥५८॥

नरपति तखो निराठ, आसंगो आसी नहीं ।

विमयीवारी बाट, न्यारी पैसी नारका ॥५९॥

नीचां तखौ निमेष, संगत न करै साधु जन ।

दीठौ नहिं ली देखि, नाहर माहर नारका ॥६०॥

संपति विश्व संसार, मानै नहीं मकीस नै ।

परत न जामै प्यार, निरचन सेती नारका ॥६१॥

बमला ज्युं असबोल, बीनी हुष मांसस रहै ।

सन में दया न मूल, निकमौ समझी नारका ॥६२॥

निकसी पर घर नार, फिरत न लामै फूटरी ।  
 बिसनै लहै बिसार, नीच संग हूँ नारखा ॥६३॥  
 घर नहरी हूँ प्रीति, कीचो कदै न कामरी ।  
 और न इसी अनीति, नित डरती रहै नारखा ॥६४॥  
 मरियै पेट भंडार, सुनौ ही लामै सुवस ।  
 अन्न कीचे आहार, नहीं बसती जग नारखा ॥६५॥  
 मत्त बतलावे मूल, मूरख हूँ मत्तलव बिना ।  
 मरम न कहि माँ मूल, निकसी आखौ नारखा ॥६६॥  
 राजा रामा रंग, बादल हूँ बिगसी बरौ ।  
 समझी करवषी संभ, तनय मन सेती नारखा ॥६७॥  
 आरै आथ अखेद, सुकसी सकल मानस ।  
 निगुणा और नखेद, न मिलैं किम ही नारखा ॥६८॥  
 हुँकर तयौ कपाल, पक्ष मोला मोली बधा ।  
 हृगताफल गलमाल, न मिलैं पहिरन नारखा ॥६९॥  
 चितारी चित्रांग, कविपक्ष पक्ष कविता करै ।  
 ठीक नारकी ठांग, निहचै आसी नारखा ॥७०॥  
 दीधौ बाप न दांग, प्रम कारख जन मांगता ।  
 नांरखिवारै नांग, नहि नाझरी नारखा ॥७१॥

नीचा नेह निवार, नै न कीजै विविध विष ।  
 ऊनी दहै अंगार, नदी स्याम रंग नारखा ॥७२॥  
 आरतिवत असेह ॐ, गिन सँ दित नहि तोदियै ।  
 दीजै धीरज देह, नरपक्ष कहिठै नारखा ॥७३॥  
 सुगच्छां तयो सनेह, नित नित नवलौ नीपजै ।  
 निगुणः हँदौ नेह, निमै न कीनौ नारखा ॥७४॥  
 माय तयो अहंकार, कदै न कीनौ कांज रौ ।  
 रागस रौ परिहार, न राखी राख्यौ नारखा ॥७५॥  
 संपद तयो सनेह, कीजै छै पिछ कारमौ ।  
 छेदहै देसो छेद, न चलै साथै नारखा ॥७६॥  
 आवै आपणै मोह, देखतां दोषी मिलै ।  
 तत सगपख रौ तेह, निकषी दूजो नारखा ॥७७॥  
 सुन्दर रूप सुदाम, मन बेलौ मदिला मिलै ।  
 कुलटा कुलज कुपात, निबर न बेलै नारखा ॥७८॥  
 आरतिवत अर्थाक्ष, सरसा दोनू सपथियै ।  
 पर दुख रौ पहचान, निपट न होवै नारखा ॥७९॥  
 संपद तयो सनेह, विष संपद बें विषसियै ।  
 निरधन हँदौ नेह, न मिटै कदे न नारखा ॥८०॥

पंडित तु अशुप्यार, सुख हूँ मनिकरि मिलौ ।  
 ठहरी कस आचार, निमन न मिलौ नारखा ॥८१॥  
 प्यार करै अशुप्यार, कपटै मन बैलौ कितन ।  
 नित प्रति संग निवार, मोच जांश नै नारखा ॥८२॥  
 हाथी हुँत हवार, लाख पाव ररि लौठवै ।  
 लंबट और लवार, न करै संगति नारखा ॥८३॥  
 मरम न मालौ सुख, पहरि निचा पारकी ।  
 सोवै सागर बल, न हुवै दुख किम नारखा ॥८४॥  
 फटकै बोधो फुल, लकी जग आकास में ।  
 सांच कई करि सुंम, न मिलै कस एक नारखा ॥८५॥  
 मोटा पैटा मांदि, राखै जो सोई रहै ।  
 सरसी पैट समाध, नव मय नीरयो नारखा ॥८६॥  
 बैठे घर बे हाथ, ऊठतां आलस करै ।  
 मारै देख मराध, न रहै अवशिष नारखा ॥८७॥  
 बसियै किछ रे वास, तिन हूँ कदे न लोदियै ।  
 अशुबसियै आवास, ना रहि लकीवै नारखा ॥८८॥  
 हांसा मांदि हमार, कोइ क्युं कवचन कही ।  
 विरचै मन बिचवार, न सुखै एको नारखा ॥८९॥  
 हाथ्यां हाजर होच, नेक मय बांध्यौ नाव नित ।  
 लिखियौ फरै लोच, न घटै रती न नारखा ॥९०॥

अमल न कीजै एक, नखी मूल बिख में नहीं ।  
 स्त्रीजै काया छेक, निजरा दीसैं नारखा ॥६१॥  
 सुबरख तखों सुधेर, अलमौ कोषी ईसरै ।  
 इगता संपद हेर, न किसी नेहो नारखा ॥६२॥  
 काचौ काया कुंन, कोठ्यां बिख ही फूटसी ।  
 भाउ अ'बली अ'न, नित पूरी इवै नारखा ॥६३॥  
 काया कियारे काज, मृमां तू मांसल लखी ।  
 निस्सो निपट निफाज, नरखी काया नारखा ॥६४॥  
 हियकां मांदी देत, अलस्या बिन न पटै अलक ।  
 दिल दिसलाई देत, नयकां देख्यां नारखा ॥६५॥  
 कागां लखा कपाल, क्या मै ज्यांक ही फूटवै ।  
 बारख सिंहअलयाल, निरल्यां चिरके नारखा ॥६६॥  
 नैनां इरो नेह, कीजै नहीं कुमायसां ।  
 सपुगल लखी सनेह, नित को कीजै नारखा ॥६७॥  
 निसुखी अपखी नाह, सांवी दुख्य न सात ई ।  
 चाहे बिख री चाह, निकमां सोनु नारखा ॥६८॥  
 अवजस हूआं आय, होम्पां घर लीरख हुवै ।  
 सरग मृमां रे साथ, निहचै निकमा नारखा ॥६९॥  
 नीचां इरो नेह, सारतखी सेखी लखी ।  
 बिग रित बरखौ येह, निपट निर्यावा नारखा ॥१००॥

सबलां छ' संसार, दाख्यां विष आफे डरै ।  
 पुण्य तयो परकार, निमरय जांयौ नारया ॥१॥  
 सबला तयो सनेह, निबला छ' सोई नहीं ।  
 जरिहर सोह अवेह, निदै कुय नहीं नारया ॥२॥  
 सबट चीर लवार, कूट्यां ही कारख करै ।  
 गूजर दोल गंधार, नहि कूट्यां विन नारया ॥३॥  
 बडौ अरोपै बंस, चटकै सै नटनी चटै ।  
 इह कूषी मयईस, न भरै दूमर नारया ॥४॥  
 आयां आऊंकार, जान कहै पर जायया ।  
 निरु कौ संग निवार, निकमी जांयौ नारया ॥५॥  
 नीर न्याह इह रीति, मोई ज्युं ल्युं ही सुकै ।  
 न गियै नीति कनीति, नरपति सुटै नारया ॥६॥  
 स्वाग्ध तयो सनेह, विष स्मारय में विशसियै ।  
 नाचदिया री नैह, नांयौ बाधै नारया ॥७॥  
 हृदयै ऊपची रीक, अहारै अहावनै ।  
 जेठ सुकल विष वीज, निरमी खरखर नारया ॥८॥

की भी संकेत चलेगी कतिपय प्रमाणसे

संस्कृत १९७८ वर्ष निर्देश प्रकाशक द्वारा ७ तम

शुभ संस्कृत । निर्देश प्रकाशक द्वारा प्रकाशित

नैपथ्य । नारय प्रकाशक द्वारा

प्रकाशक द्वारा प्रकाशक ७-८

# प्रस्ताविक अष्टोत्तरी



आत्मता परमात्मता, लक्ष्यतार्ये एक ।  
या हैं शुद्धात्म नम्ये, सिद्ध नमन सुविवेक ॥१॥  
निष्पूर राजा रङ्ग सौं, बात करत न दबात ।  
नमन पुरस सौ पुरस सौं, लूट्यो कब न मुनात ॥२॥  
मन निसम्प आलोचना, सब अपराध समात ।  
ज्यों कटि की वेदना, निकसत दुःख न रहात ॥३॥  
जो निसदिन खाये पियै, बाकी बाकी चूप ।  
जैसे अपने देस की, लागत बाल अनूप ॥४॥  
परदा जल मरु देस सब, ऐंचत अपनी ओर ।  
जैसे दूटे पतंग की, लूटत सब बन ओर ॥५॥  
मोल लिपत दिखा दियत, संयम कहा पलात ।  
ज्यों संभवा के सूतक कौं, कोलौ रोचत रात ॥६॥  
त्रिकरण करत सुसिद्धता, कहा जंग अरु मंद ।  
बिना गुपम चाले नहीं, ज्यों माही की जंग ॥७॥  
प्रगट करत गुन गुनिन कौं, बसत दूर तर वास ।  
अंगुरी हैं निरखानही, ज्यों तारे आकास ॥८॥

साधु संग निन साधु जन, न करै दुष्ट प्रसंग ।  
 चीन सरल जल कुटल गति, उज्जलत वरल तरङ्ग ॥६॥  
 पिंगल को कवितान में, दिगल कोन अमेल ।  
 तारिन में कबहु न हुनै, चंद किरन सौ तेज ॥१०॥  
 पहिली सोच अपार कै, कीजै कारण भेद ।  
 पी पानी बुझै कदा, होत जात कै भेद ॥११॥  
 पक्षी पिछताप कियै, गरजन छरिहै कोय ।  
 मृग्य फिर नहीं आवही, क्या सोचै क्या रोय ॥१२॥  
 आधु होर निन तनु गुही, उडै न घर पर जाय ।  
 जैसे दूटी होर की, परंग हाथ न रहाय ॥१३॥  
 सला लिपत कलज करत, सो कबहु न ठगाय ।  
 सीता वनतल नीन की, कब प्रसाद दिगाय ॥१४॥  
 अनुकंपा दनिं दियत, कदा जाय परस्यत ।  
 सम विसमी निरखै नही, अलापर घर अरपत ॥१५॥  
 बिना चाहे सब ही मिलै, चाहे कहु न मिलैत ।  
 बालक दुष्ट जोरावरी, माता माता देख ॥१६॥  
 जोलीं हुरदा ना बलीं, तोलीं सुक विराम ।  
 ज्यों सुप्ने की वेदना, तो लीं न दुष्ट आग ॥१७॥



माता करै आधार की, बालक पोष लईत ।  
 ज्यों सिनदी में होकली, बाफ हुवै सीजंत ॥१८॥  
 अति सीतल मृदु वचन हैं, कोषानल पुष्प जाय ।  
 ज्यूं ऊफरावै एव कूं, पांजी देत समाय ॥१९॥  
 मत मन इत गति अति चपल, निष्पृह हैं ठढिगत ।  
 ज्यों सद कोषव कोम हैं, बचल हू जमजाव ॥२०॥  
 कोष वचन कोषी पुसै, सुनि सुनि सीतल होय ।  
 ज्यों मूँसे पुलमान के, जगनैं अरत न कोय ॥२१॥  
 रोचक बुद्धि सगल नर, एक सुनै गुर पैन ।  
 सीप फुटै मोती हुवै, स्वात बूढ़ तैं देंन ॥२२॥  
 मन पर निरघन होत ही, को आधार न दियंत ।  
 ज्यों सूकै सर की पथिक, पंखी सीर लजंत ॥२३॥  
 बधे करम जिन जीव नैं, उदर्यैं आवत ताहि ।  
 ज्यों लौ लौ में बछरिया, पूंचत अफनो माय ॥२४॥  
 पीछे प्रथम न प्रकृति जिय, है अनादि की मेल ।  
 सदा सजोगैं मिल गही, फूल सुवास चंपैल ॥२५॥  
 आत्म रूप उदोत हैं, मोह प्रकृति लय जात ।  
 ज्यों अधिधारी रैन की, दीपक विनन पटाव ॥२६॥

गुर कुल बासैं बसत बुनि, चकल ही ठहिरात ।  
 देत बधूनी पतंग कूँ, मोत खात रहिजात ॥२७॥  
 ज्ञान किया दो मिलत ही, सिध काख सिधु हुँत ।  
 ज्यों भरता संयोग हैं, सवि तब परब भरत ॥२८॥  
 अनुपूर्वी के योग विम, ऊंच नीच गति जात ।  
 जैसे पवन प्रयोग हैं, चिहुँ दित बज्र फिरात ॥२९॥  
 बरसत हूँ केदार हूँ, संग न कर परनार ।  
 तूँ राख्य दहात लखि, बूझत क्यों न भिचार ॥३०॥  
 चाहत सोई मिलत तब, या सम सुखी न और ।  
 मेहागम धुनि बरस सुनि, ज्यों चित हरत मोर ॥३१॥  
 राख रंक हूँ सम लखै, तिल न हरष मन हुँद ।  
 ज्यों चिकसे घट पर कछु, ठहिरत यदि जल बुंद ॥३२॥  
 जैसी देखत कुटल तक, तैसें जीव फिरात ।  
 दोर सदाई हाथ कै, ज्यों चकरी लुटजात ॥३३॥  
 अंगी जेते आस विन, सदै अंग की मार ।  
 विन काजल फीके लगे, सोरें विम सिंगार ॥३४॥  
 हूँ सुनिअर तब चौ निज, (तूँ) भूषी अरज कराहि ।  
 पतरी बदरी हैं अरक, सुख सनहुख निरलाहि ॥३५॥

पराधीन - जाकै ब्रह्म, झूठ कहै सो सांच ।  
 ज्यों वाहन की गति वज्रत, नचति ताल पर नाच ॥३६॥  
 तिसु जनमत माता मरत, फिर अप्पार न रहत ।  
 हीहा दूटै समयन तैं, नर कर पर पर जात ॥३७॥  
 राज सेव तैं राज की, सेवा गीत लजाय ।  
 शब्द साधना बिन सधै, सबद अरथ न कराय ॥३८॥  
 सीछी चितवन चितवनैं, राग बिरागी दीठ ।  
 तिय रागें माता लखै, राग निग्रह कर पीठ ॥३९॥  
 काज अकाल न सोच बस, गिनत न दुख संताप ।  
 ज्यों दिन पइसा दान तैं, मोल लिपत पर पाप ॥४०॥  
 नव पद्म कनराय सव, बिन ललचर हो नाहि ।  
 सबन सदल बादल करै, ज्यों समस्त की छादि ॥४१॥  
 गेस पोस नरपति बढति, अनुग्रह जाय न होय ।  
 सूर उदै अति मंद दूति, ज्यों ससिधर दम जोय ॥४२॥  
 खल ते सौ उपकार कर, मानत नहि इक सोय ।  
 बिसहर दूष बिलाइयै, सोइ विषमय होय ॥४३॥  
 मन फाटै कूँ सुदु वचन, कसौ करन उपकार ।  
 दूक दूक कर जुइन कूँ, हांका देव सुनार ॥४४॥

जठराग्नि दीपति हुबति, भूत समस्त विह्वार ।  
 करत हुदाई मां गहै, कैहां कियै करार ॥४५॥  
 रक्तम दूक कर लाम लसि, दुक दुक सौदा लेत ।  
 रिजमारी दरजी करत, ज्यों सीवन के बेंत ॥४६॥  
 कौन दीपत काहूँ कछु, करत पुरख की भेंट ।  
 सरिता ज्यों समुद्र की, इस तैं भरिहै पेट ॥४७॥  
 बी अचेत चेतन नहीं, छिन छिन छीजत आव ।  
 इक रंग फल ठहिरै नहीं, ज्यों लोहै का ताव ॥४८॥  
 वषट्कन चारित पटिबजै, आत्म निरमल दोष ।  
 ज्यों मैत्रे असनै करत, घोषी ऊबल घोष ॥४९॥  
 हाथी हाफला पुरस तिय, प्रगट निजर नहि दीठ ।  
 अति सुंदर सिमु बदन पर, दिखैं दिठौना दीठ ॥५०॥  
 कबै प्रथम सब बचन कहु, अति सुशानि कै हेत ।  
 ज्यों माली आवा दियै, तह निरोग संकेत ॥५१॥  
 उदर मरन कारन सकल, मिनत न काज अकाज ।  
 चेन्नै पर तूखत परत, ज्यों तीतर पर बाज ॥५२॥  
 लघु मुल मोटी बात तैं, नकी न देख्यो आस ।  
 मरमुपकटै आवडी, ज्यों चीटी कै पांस ॥५३॥

रंक पुरम रिझवार हैं, कहा कटै दुख फंद ।  
 ज्यों झकै सर पर बधिक, पावत नदि जल बुंद ॥५४॥  
 फटा चीर सिवाइयै, रुटा खेदु मनाय ।  
 मोलै खाले पतंग कौं, बिम्बकी दिरैं बचाय ॥५५॥  
 बात बात सब एक है, कल्लावख बें फेर ।  
 एक पवन बादल मिलै, दकै देत बिखेर ॥५६॥  
 चीटी चीटी सरत तउ, दीजै सुकर सुकाय ।  
 अमन कहीं की लघु कहा, सब बन देत जलाय ॥५७॥  
 मन अन्तर की पीत कौं, जैन दिनाई देत ।  
 धनमाला की माख कौं, बननाला ज्यों हेत ॥५८॥  
 बकै पुरत दुरवधन सुन, सुलट फलट दै भेट ।  
 भयौं दुःख झलकै नदी, आवा झलकै भेट ॥५९॥  
 दोही फेले तरक की, बात करत पर भांख ।  
 इत उत दोऊं दिस छुटत, ज्यों कउरै की भांख ॥६०॥  
 सुरलता मन धन मिटत, हूँ सदगुर संयोग ।  
 चंचल चंचलता कटै, ज्यों सद भीषण जोय ॥६१॥  
 सुगंध लोक हेरत फिरत, सोना रुपा सिद्ध ।  
 खोब दसा मनसा मिटत, नव निष अद्भि समृद्धि ॥६२॥

शब्द न्याय अलंकार कन, सबही कण्ठ अभ्यास ।  
 पै परमव की सिद्धता, न करत ताहि प्रयास ॥६३॥  
 झूठी माया जगत की, फकती; साच समाज ।  
 करहु न हुय फल-सिद्धता, ज्यों सुपने का राज ॥६४॥  
 तनु सुभाव करहु न लुवे, लीव विष हो जाहि ।  
 उल सुभावे मिष्टता, हूँ कदुरस कन नाहि ॥६५॥  
 तीखन लवि करतेय विन, मोह दुर्दहन होय ।  
 करिवर कुंभः महार की, काज हरि ते होय ॥६६॥  
 रागी के मन प्रांन है, रागी वस्तु अघाय ।  
 मृग मरत की बाण जु, माय माय कहु माय ॥६७॥  
 घर कबि कुतकविता बहुत, नई करन को हेत ।  
 मरन होहि ते जोचना, बुद्धि परोषा देत ॥६८॥  
 बड़े दुरस के उदर में, बड़ी बात रहियत ।  
 ज्यों करिवर के पेट में, नी-मास नाज कहात ॥६९॥  
 मन प्रदेश जासी मिलत, छूटे दिनक न छूटात ।  
 ज्यों कणकक-भारद करत, विफल विपत विपदात ॥७०॥  
 लज्जा जीवन मूल मय, लज्जा तनु मृगधर ।  
 लय सीस पट दार के, निरयै सेलत नम ॥७१॥

अनुमो अमृत पान ते, विध्या ताव मित्राण ।  
 यद सद ओषध ओम वस, तनु ते सुरत पटाय ॥७२॥  
 मोक्ष मिलत नहि मन चहत्त, अन्न कर दित दिनरात ।  
 पर नारी दम निरस्त्रित, कौन नका दुख आत ॥७३॥  
 पाल जवान पुन बृद्ध वय, मित्र अमित्र अभाव ।  
 नीलकण्ठ मे नील कौ, भूलत नाहि सुभाव ॥७४॥  
 हेतु सदस लाञ्छन रहित, हेत्वाभास कहाय ।  
 कर्म रहित करता कहे, अवा कृपांशी न्याय ॥७५॥  
 केई कष्ट केई कष्ट, कहे आत्मा राय ।  
 जिनमत विन सब मत कथन, अथ मर्यदे न्याय ॥७६॥  
 एक एक ह परस्पर, अपने मते अवाय ।  
 छेदत बल ह्य एक कौ, सुद पंसुदे न्याय ॥७७॥  
 एक कथन वामे कथन, इह लक्षण है न्याय ।  
 पुष्ट करत थापित थले, कर्ष मुक्तके न्याय ॥७८॥  
 सिद्ध संसारी साव दो, है अन्योन्य अभाव ।  
 देहल दीर्घे ज्ञान दम, बाले शुद्ध सुभाव ॥७९॥  
 भाली और कहाई की, तरकारी निसर्पति ।  
 संवस नमि संजती, इह निसर्पति विपत्ति ॥८०॥

मन चाहत तो मिलत नहीं, जिसना तउ न जुभाय ।  
 जो चाहत सोई मिलत, तब कब बटत बलाय ॥८१॥  
 आद मध्य अरु अंत नथ, निरुमन सम सब जात ।  
 खान पान निरोग तनु, पुण्य लखन कहिलात ॥८२॥  
 खात न करचत बिलासपत, दान दियन को बात ।  
 दुरजय लोभ अचित गाव, सचित धन मर जात ॥८३॥  
 दरिद्र बीज क भूमगति, सहिदै ऊंची हुँत ।  
 करम रहित तैं सिद्ध की, ऊरध गाव लोकांत ॥८४॥  
 नव अंग टीका अर्च क, चहियत तर्क प्रसंग ।  
 बिना छटाह ना चढै, ज्यों कसूम की रंग ॥८५॥  
 बिद्या सब के रहन की, पोषी पूरे सार ।  
 साय चढै विन ना चली, ज्यों धारा तरवार ॥८६॥  
 पंडित मूरख बात क, वरन करच एक लेख ।  
 बिना समारै ना हुबै, नैना काजल रेख ॥८७॥  
 कलम करत तह बेर कुं, तब निरोग फल दीय ।  
 सुरतार्ते विन गदह की, ज्यों मस्ती नदि दीय ॥८८॥  
 दिखत चंद ह्रस्व की कलक, धूषट कीनै चीर ।  
 ओट लिखत बतलावही, तिय निचदी की बीर ॥८९॥



उष्यकाल में प्रात की, सीत समीर सुखंत ।  
 वही मध्य दिन संग हैं, अमन रूप फग्संत ॥६०॥  
 दृष्ट संग विन दृष्टता, कैसे हैं न सुखाय ।  
 प्रगट देखवैकी गरज, कांची दूध मिलाय ॥६१॥  
 सुरि जन फल कू काटियै, ली जड़तैं जल जाय ।  
 जो फल तैं फल विस्तारियै, तब तब हरित सुखाय ॥६२॥  
 सुकृत या मन में करत, मन मन फल दिसलाय ।  
 ज्यों नलोरे के पेड़ में, सींचत जल फल जाय ॥६३॥  
 पुण्यबन्त नर की प्रकृत, लंभी तक मृदु होय ।  
 लंभै सर दुरगंध पर, पनधारा सम लोय ॥६४॥  
 है संसार अनादि सिद्ध, करता कृत कदि कोय ।  
 विन वसन्त वनराय सब, क्यों वनलव नदि होय ॥६५॥  
 देखौ सोभा जैन की, विष मन होत समोद ।  
 वरपा अतु तब हरित ललित, जात अवाता सुद ॥६६॥  
 चंचल मन चिर करन कौ, निष्पृहता उपचार ।  
 दूजी मवधित पाक की, लोनी नदि संसार ॥६७॥  
 जिनरात्रा विन जैन मत, फीकी लगत अपार ।  
 भरता विन सोमै नहीं, ज्यों तिथ तनु सिंगार ॥६८॥

आत्म अनुभवी होव ही, छुटत रंग अह संग ।  
 ज्यों समुत् के पान हैं, अजर होत सब अङ्ग ॥१६६॥  
 समुद्रवात केवलि करै, समक्रम आयु वसेष ।  
 त्रिनी चंद्र पक्ष चांदनी, त्यों समपक्ष तम लेख ॥१६७॥  
 अप्र असवारी मुदित मट, नमुदित मदह चटाहि ।  
 वर तरवार की छादिनी, दोनू दिस छुट आहि ॥१६८॥  
 गरम वेदना निकसतैं, बिसरत अंगत तमाम ।  
 रति समर्थ क प्रसव दुख, भूल जात ज्युं पाम ॥१६९॥  
 बूढ़ पुरुष हित सीख दै, सो नहि मानत ज्वान ।  
 कटुक लौं तुर नै कटुक, ज्युं गुण करत निदान ॥१७०॥  
 स्वारथ के सब अंगत वस, स्वारथ विन नहि होत ।  
 प्रसवत पय बहुधात गौ, छात सबें मदि होत ॥१७१॥  
 तनु दीपक हित आपुधित, राती निसदिन मेख ।  
 वपु दीपक उजियार में, तेल ज्वां लौं सेख ॥१७२॥  
 मझा-विष्णु मदेश कदि, पैदा पोषक नास ।  
 उन विन अज हैं ही रहे, इह विरोध आभास ॥१७३॥  
 हुकम बिना पचा दिलै, पचै क्या मकदूर ।  
 कपौ साधिव नहि कर सकै, इह पक्ष अंग मंजूर ॥१७४॥

जिन मूर्ति मन थापलौ, क्या पूजा क्या भेट ।  
 याद कियेँ अन सवन कौ, क्यों नहि मरिहैं पेट ॥१०८॥  
 आदि पुरुष हम राम कौ, जो चरणामृत लेय ।  
 सैं देही बैकुण्ठ बसै, क्यों तुम घरी देह ॥१०९॥  
 जोग रोष तैं करत जिय, प्रकृत पुरुष निरर्थस ।  
 धातु भिन्न सबही करत, क्यों नाडरै की मूस ॥११०॥  
 सत्ता प्रवचनमाय दुग, क्यों आकास (१८८०) समास ।  
 संवत् आश्व मास पुर, विक्रम दस चौमास ॥१११॥  
 इक सय नव दोहे सुगम, प्रस्ताविक नवीन ।  
 खरतर भट्टारक गछैं, ज्ञानसार मुनि कीन ॥११२॥

इति प्रस्ताविक अष्टोत्तरी सम्पूर्णम्

# आत्मनिंदा

हे आत्मा । हे चेतन । हे कुटुम्बों, हे कुलधर्यां, हे अक्षय्यं प्रवृत्ति, हे संप्रदायियों, हे कोसी कोसी-दण्डों ! आत्माके दोष कहीं भाग में तुं मत चित्तव्य कर ।

क्यारे तुं सम्बन्धभोदनी में, क्यारे तुं मित्र भोदनी में, क्यारे तुं मित्रात्मा भोदनी में, क्यारे तुं अन्तरात्मा में, क्यारे तुं श्वेदराग में, क्यारे तुं दण्डित्वा में, क्यारे तुं कुलधर में, क्यारे तुं कुलदेव में, क्यारे तुं कुलधर्म में, क्यारे तुं आत्मनिन्दयिता में, क्यारे तुं देशीय निन्दयिता में, क्यारे तुं चरित्र-निन्दयिता में, क्यारे तुं मनोदयक में, क्यारे तुं वचन-दण्ड में, क्यारे तुं अक्षय्य दण्ड में, क्यारे तुं हार्य में, क्यारे तुं रति में, क्यारे तुं अति में, क्यारे तुं अक्षय्य में, क्यारे तुं शोक में, क्यारे तुं दुर्गन्ध में, क्यारे तुं कृष्णकेशों में, क्यारे तुं नीलकण्ठों में, क्यारे तुं कपोत केशों में, क्यारे तुं अक्षिपात में, क्यारे तुं लक्ष्मण में, क्यारे तुं शतानाम्भ में, क्यारे तुं भाषा शम्भ में, क्यारे तुं निपात शम्भ में, क्यारे तुं निपातदर्शनशम्भ में, क्यारे तारे तेरे काहीया दोहा आंच छिरे हैं । क्यारे तारे अक्षर पावस्थान दोहा आंच छिरे हैं ।

हे तुं आत्मा । महादुष्टी, महा दुर्गन्धारी, अरे तुं हीय तिम तुं भाषा, हे तुं हीय प्रुभिया, हे तुं हीयदण्डि, हे तुं अक्षर पाव तुं अक्षय्यहार, हे तुं दुष्ट पावीष्टी जीव, अर्थ ही तारे अनन्तदुर्गन्धियों कोष, अनन्तदुर्गन्धियों मान, भाषा, लोम तुं

नीकही बनना भारी नहीं नहीं, दुष्टताही भारी पातकी नहीं,  
 नीच दुष्ट भावी नहीं, दुष्टा दुष्ट भारी मिटी नहीं, बाहुल म्याहुलता  
 भारी मिटी नहीं, बलिदान बलि बलिबोध बलिबोध दुष्टाही दुष्टा  
 हा बलिबोध बलिबोध बलि बलि, दुष्ट ही बलिबोध बलि बलि ही दुष्ट बलिबोध बलि  
 बलि । नीच दुष्ट दुष्ट नीच ही बलिबोध बलिबोध, दुष्ट बलि बलि ही बलिबोध  
 बलि ही ही बलि बलि बलिबोध बलिबोध बलि ।

२ वेदम बलिबोध बलिबोध न ही है बलिबोध, बलि बलिबोध है बलिबोध ।  
 है बलिबोध बलिबोध, बलिबोध, बलिबोध, बलिबोध, बलिबोध, बलिबोध, बलिबोध  
 हा बलिबोध बलिबोध बलिबोध, बलिबोध भारी बलिबोध बलिबोध ।

३ वेदम दुष्ट दुष्टम है बलिबोध बलिबोध बलि बलिबोध म्याहुलता  
 बलि बलि बलि, बलिबोध बलिबोध बलिबोध बलिबोध, बलिबोध बलिबोध, बलिबोध  
 बलिबोध बलिबोध, बलिबोध बलिबोध, बलिबोध, बलिबोध बलिबोध, बलिबोध  
 हा बलिबोध बलिबोध, हा बलिबोध बलिबोध, हा बलिबोध बलिबोध, हा बलिबोध  
 बलिबोध, हा बलिबोध बलिबोध, बलिबोध बलिबोध बलिबोध बलिबोध बलिबोध  
 बलिबोध, है बलिबोध ! बलि ही २ बलिबोध बलिबोध बलिबोध । बलिबोध बलिबोध  
 बलिबोध बलि बलि बलि बलिबोध बलिबोध, ही है बलिबोध भारी ही बलिबोध  
 बलिबोध बलिबोध । है वेदम दुष्ट दुष्ट बलि बलिबोध बलिबोध, बलिबोध बलिबोध  
 बलिबोध, बलिबोध बलिबोध, बलिबोध बलिबोध, बलिबोध बलिबोध । बलिबोध  
 बलिबोध बलिबोध बलिबोध बलिबोध बलिबोध, बलिबोध बलिबोध बलिबोध बलिबोध  
 बलिबोध बलिबोध, है बलिबोध ! बलि ही दुष्ट बलिबोध बलिबोध, बलिबोध बलिबोध  
 बलिबोध बलिबोध, बलिबोध बलिबोध बलिबोध, बलिबोध बलिबोध बलिबोध, है बलिबोध  
 बलिबोध ही बलिबोध । बलिबोध बलिबोध बलिबोध बलिबोध बलिबोध । है बलिबोध । है बलिबोध

“यस्य कर्म” तुं ही कुछ मौलसी ! देखो ! कभी ही मौलसी, व  
 है विचार नहीं इस संसार में ! संसार में कोई निष्ठा हो नहीं ।

औं मांझली जन्म, आर्यविराट आर्यकुल, आत्मक हो कोशिकी, प्रभुजी हो  
 कर्म, हो कुर्वाणकी पुत्र हूँ पावो, पावनक शक्या हैं मांझली कायला है  
 बाप कोयो, शिव हैं विराटमन्त्र हल कल धर्म कोयो, बापे माता  
 ही गल कर्तुल करे, रे वेतन ! हूँ कहीं ‘हूँ’ रे हूँ कुच’ विरा  
 मांझली हल हूँ हीम हूँ, मांम कभीवै नम बाहुलक पक्षी, नम  
 हीमकपी मांम को मांझली हूँवरी वारं मिनीक सत्यवाच्य बापों जय  
 सत्यवा, बापका निष्ठा है औं मांम हो बापे कहींवै मिनी इमाती हूँही ।

५ वेतन : देख हूँ, मांम महाप्राप्त जियाँ है मिनी एक राजभूट  
 हीमाम धी, तो, है विचार हूँही बाहरें राजमें, विचार हूँही बाहरें  
 बाप है, विचार पञ्चमर्त कभीवै, विचार हूँही बाहरें निष्ठा हूँही है ।  
 कल है, है हीमक महाप्राप्त है देख लल धर्म हो पावो है । कल है  
 कल है है, कल है है हीमक पावो है, कल है कलमन्त्र धर्म पावो  
 है, कल है कलमन्त्र तपे है, कल है मांमका मांम है, ही के मांमका  
 मांमका मांमका केमलका केमलदर्शन कलका, ही के हूँ  
 का कलमन्त्र है हीम मल करे, जो हो केमल निष्ठाका ह  
 पुत्र, पञ्चमर्तही, पोवा बापे हल जीव, हूँ पंचम  
 कलमन्त्र मांमकेमन्त्र कोमन्त्र, मिनी एक बाप ५ वेतन : कर्म कलमन्त्र  
 कल, रे वेतन हूँ जीव कल, रे वेतन : जीव हूँजीवती सदा पक्षी  
 करे निष्ठा कलमन्त्र हूँ कल करे, निष्ठा हूँ निष्ठा कर्म महा सत्य ।  
 रे वेतन : कर्म ही कलमन्त्र हूँ बापकोमन्त्र कलमन्त्र पञ्चम, कलमन्त्रमें

दुखदाणे व जीव पुनःपुनःमनोवैकलीको, कलहप्रभाचार्यको, महाविदेहा मननिधने विद्याय कोश । हूँ संयमप्रसन्न हो जीव भित्री एक बात ।

“ बाह्य करन बहुजन को (पुनः), मनु भिन्न कर जीवों माय ।

योग करन करै कान्धो, भिन्न कर जीवों माय ।

कर करै मनु जान, इमारी निमन्त्री ”

हे चेतन ! चाहेज ही चोखनि यहि मनोव दुःखते ही बाह्या में यहि कथा बाह्य हूँ पावै एक, संतोष कुछ प्रद्वेष कर । दुःखा कन्धी राइनै पृथी माय, मनु पावै भाग्यो प्राप्त करै । बन बै मनु दुःखप्रसन्न, पावै दुःखते दुःखता, हीने हरे हरे, कथन ना पीढ़, कल मनु मन का टाकप्रहार, बाह्य कर ना जीवक, स्वनिष्ठ कलकर्मप्रसन्न ही बाह्य का टाकप्रहार, दस विधि नवीन्य ना कलकर्मक, लक्षण कथना कथप्रहार करै कथांगना कथप्रहार, दुःखी संकल मधुमनिकप्रसन्न, चलिप्रसन्न कथ ही हे हनि मनुजी की बाह्या प्रभापै कर्मप्रसन्न, हे चेतन ! कर्मै करै करै भाग्यो । हे चेतन ! करै करै कथा हूँ करै, हे कथना ! करै संवाली बहुलप्रसन्न, विचारै कने कथा हूँ करै करै । बन बै त्रिके देश विरही भाग्य, त्रिके मनुजी बाह्या प्रभापै कर्म करै, प्रभात बह रामायक करै पलिकप्रसन्न करै, देवप्रसन्न करै, मनुजी की द्वापराणि की कन्धी हरी, देवप्रसन्न, देवप्रसन्न, कथ, कथना, हीन, पत्र त्रिके पोती, संकलने देवही पलिकप्रसन्न, कथ ही देवविही भाग्य, मनुजी की बाह्या प्रभापै हे कथप्रसन्न करै, कर्मै करै करै भाग्यो ।

हे चेतन ! हूँ कथा सोय कोय करै बाह्य कुछ प्रभात हूयो, बाह्य सोय परिप्रसन्न देखता ही करै कोयी का करै भाग्यो ।

‘सामायक’ मन झुट्टे ‘को विचारिण्या पर पाहो पाटी तों सामायक  
 या है—सामायक मन झुट्टे की, निरां विचार बहुती की ।  
 पटो उघो बापक बन की, जिय मनसाय, खीसा उघो । तने  
 बापक पदक ही बन की है, ते ही सुत हान हो बहुमान न कीयो,  
 सुतहानकी ही उघयो न कीयो, तरे पारे ज्ञानाभायी ही बंधकर  
 बंध निर मनो । सुतहानकी हो भागधन करे है, सुतहानकी हो  
 बहुमान करे है, ज्ञाना हान धरान बलि निरंत हूँ है ।  
 विचारि रे हान ही पात्र हूँ । विचारि रे हान ‘सौकर्यार्थ’ ही पात्रि  
 हूँ- विचारि न सुत कधी ही पात्रिपदक हूँ ।

“विचार पटो विरै सुखीय, कोपरीया खीची कब ज्ञान ।

तेने पुन न हूँ जैतलो, सामायक बीचा तेतलो ”

विचार केन । तुं एव सोते सुखे या । या पाटी सामायक क्या  
 मही मारि । या सामायक हो अम जोषा ही मारि । या  
 सामायक बांधीर, बांधीर, संक, दुष्क ही, पुत्रप्राप्त तेद,  
 चंद्रावर्तक राजा । तुं एव सोते सुखे या । रे केन । पाटी हो  
 सामायक या है—कब कब पर या विचारि, निरा विचार कर कोत्र  
 है । बास पर बांध मन करे, ते सामायक निरंतर करे । पटो ही  
 सामायक काले मारि ।

आप पराधो सुखो गिर्यै, कंचन पत्थर समचर धरै ।

साचो बोडो समतो मचै, ते सामायक खर्च करै ॥

चंद्रावर्तक राजा जेद, सामायक वत शान्धी तेद ।

रे केन । स बाध ही को की, पर बाध ही सुते पारि



श्री हैं पर भावना भी हुये न बाधा । अ-भाव ही हुये हीन भावी ।  
 रे चेतन ! तू कंचन ही तो बाँधा रखे, कंचन मैं दू करे, न्यारें बाँधी  
 कनक पत्र पकड़ी, कहेई कंचन ही प्राप्त हुवे वही । रे चेतन, तू तो  
 दुष्टभाव ही बोला ली है ।

रे चेतन ! तू पारो दुष्ट संसार ही बनेही है, बनानी  
 है । बनानी है, बनानी है, बनानानी है, रे तू  
 वही दुष्ट संसार ही है । सार्व । बीही । बीही । रे बाधा दुष्टभाव, रे बाधा  
 तजान । रे चेतन ! दुष्ट भाँधी दुष्टभाव, दुष्ट पारो तजान, रे चेतन ! पारें  
 ही बाधा कर्म कनोया तब, मैं ही हूँ । न्यारें तू काम कनोयें संभव  
 है बाधा तजान रे, तू पारो बाँधा ही प्राप्त करें । बीही । तू मन्त्र  
 हूँ मैं कमल हूँ । मैं दुष्टभाव हूँ । रे कोई बाधें वही संभव  
 पारो हीन वही है । कनोयें ही सार्व कमल वही हूँ, वही ही  
 कनोया मान वही हो, ली ।

रे चेतन ! तू सामान्य ही था करे ह—

सुख ही काम मोह ही कलक ।- संभव तथा केवै सत्य ।

रे ही सामान्य ही बाधा कनोयें सत्य ही केवै सत्य ।

दोहा:—आत्मनिंदा भाषिनी, ज्ञानसार हूनि फीन ।

जै आत्म निंदा करे, सो नर सुगुन प्रवीन ॥१॥

इति श्री आत्मनिंदा संपूर्णम् ॥ संवत् १९७० वर्ष । शुभमशुभः

संवत् १९७२ वर्ष चैत्र मासे कृष्ण पक्षे

शिवरात्रि । श्रीरामनेर ग्रामे । श्री रात्रि । श्री कल्याणमस्तु ॥

श्रीमद्ज्ञानसारणी कृत

## ॥ गूढ़ ( निहाल ) बावनी ॥

( निहालचन्द वं० बीरचन्द रे चले हूं वं० नारय से कवन )

॥ दोहा ॥

चांच आंख पर पाउं लुग, ठाडो सम्भनि बाल ।  
हिलत चलत नहि नभ उड़व, कारण कौन निहाल ॥१॥  
हाथ पाँव नहि पीठ मुख, भरत सुमन सी फाल ।  
पीठ लगे बिन नाक चले, कारण कौन निहाल ॥२॥  
धूम शिखा नहि काटहि, भरतः) भस्मि की भाल ।  
पानी सिंचत ना बुझत, कारण कौन निहाल ॥३॥  
हिलत हिंडोग वेग ते, पहुतो तरु की डाल ।  
हतत चलत न आंगुरी, कारण कौन निहाल ॥४॥  
बड़ी सरोवर जल बर्यो, बड़ी पक्कि लस बाल ।  
पानी हुंदिक नहि मिलत, कारण कौन निहाल ॥५॥  
पटा बीज जलधार लसि, दौरत★ पक्षिपन बाल× ।  
धर मुख हुंद न परत इक, कारण कौन निहाल ॥६॥

• बड़ी चलत (:) भस्मि ★ पीठ × बाल ।

१ चिन्हित है । २ बड़ी है । ३ कवचाल है । ४ चिन्हित है ।

५ पालो बरियो है । ६ चिन्हित है ।

आज काष्ठ पिण आवडी, सुनि निहल्ली भई बाल ।  
 मात पिता हरपित भए, काष्ठ कौन निहाल ॥१४॥  
 मात पिता सुत अनम तै, हरपित दोत कंगाल ।  
 सुते निरसत बिलसित भए, काष्ठ कौन निहाल ॥१५॥  
 तिय सुन्दर सुकमाल गल, पीक दिखत रंग लाल ।  
 हाइ बांस लोही न नल, काष्ठ कौन निहाल ॥१६॥  
 हाथ पीठ पर पाँच बिन, उड़त बेम गति बाल ।  
 गेरत रुक्मर पर गदनि, काष्ठ कौन निहाल ॥१७॥  
 कहित हमारौ कोश के, समाचार विहाकाल ।  
 बदन रदन रसना रहित, काष्ठ कौन निहाल ॥१८॥  
 बाँध पेट पर पाँच बिन, उड़त ज्यों सुम बाल ।  
 बिना सुदारे नहि उड़त, काष्ठ कौन निहाल ॥१९॥  
 टीखी चितवन दग कलक, ललित दिखाई लाल ।  
 लली कस के उठ बली, काष्ठ कौन निहाल ॥२०॥

१४ स्त्री के श्रम दिखत गुरु से है । १५ पुत्र कोठी । १६ लीन  
 है कापी है मरी काप से काप से लीनी नाम होली ज्यों बूने वस्त्र है मूँ  
 चट्टी के के लम्बा उलट उलट कोली ने कला लीनी है मूँ के लाल रंग  
 कापी दीर्घ को पीक । १७ गहन (गहन-गहन) कन । १८ काष्ठ ।  
 १९ पुत्री । २० पुनः पवित्रा पवित्रो कवली ।

ससि बदनी ससि पूर्ण ससि, भेट दिठौना भाल ।

हरख नचत रग पुतरी, कारख कौन निहाल ॥२१॥

बौ बहरी जुंछानही, इह सुभाष सब काल ।

मात सुता न जुंछानही, कारख कौन निहाल ॥२२॥

बाबानल बन बन जलै, पर\* तरुवर पताहाल ।

तकलिख हय इक ना कस्तत, कारख कौन निहाल ॥२३॥

कुल पान कद पेड़ बिन, बूझी तक की बाल ।

फल चाखे सों की जिने, कारख कौन निहाल ॥२४॥

शीश पेट कर पाँच बिन, त्रिजग मुखति-तिह काल ।

अन भेरै कबहु न चले, कारख कौन निहाल ॥२५॥

बूँद न जल मोषा पिक्त, बूँसे पिक्त पताहाल ।

यह अचरज सब अगत गति, कारख कौन निहाल ॥२६॥

\*पन = त्रिगति ।

२१ ससि स्वभावतः ही सत्कर्मात् भवती कथं तत्र विकर्मात् तद्वत् इति । २२  
मात स्वभावतः ही पुत्र ही तत्र भवति । २३ तपन कर्मात् भवति । २४ भवती ही फल ।  
२५ शीश ही बाली । २६ इति कथो पावो देह दुःखे मोक्ष ही, कथो बूँद  
ही नहीं ।

प्रगट रकम पट बंद दिखत, जमा पटल नही चाल ।  
 मास मिती समय विसम नही, कारण कौन निहाल ॥२७॥  
 ट्रंक किते इक नम लसै, मिद्रे सवन अविनाल ।  
 नर नारी ठाढ़े चकत, कारण कौन निहाल ॥२८॥  
 शाव बीज बिन पार जल, जल भरत तिह ताल ।  
 पट बंद बूंद न होत इक, कारण कौन निहाल ॥२९॥  
 शीश पौठ कर पेट बिन, बेम चकति भवि चाल ।  
 हठ कर मेरति ना- जयति, कारण कौन निहाल ॥३०॥  
 चरस बीस कर पेट बिन, सिखा काम सिर चाल ।  
 जंगुरी एक चले नही, कारण कौन निहाल ॥३१॥  
 अठ कर इक लकरी पकर, दिखत चलत नही चाल ।  
 बोझ उठावत बहुत मन, कारण कौन निहाल ॥३२॥  
 पर न शीश पौंच न ऊदर, चलत चलाये चाल ।  
 दुपट होत मानिस- रुधिर, कारण कौन निहाल ॥३३॥

अनन शकत + अनन = मातंग ।

२७ शीश कल्प बंद चकत्ता । २८ मिती से कुंजी । २९ दात बीजवा  
 -चाकली से चाकी कुंज से चकरी लै । ३० अकल पकल । ३१ सभी  
 बीजपंजी । ३२ ताकली । ३३ कलवार की चार ।

दिन दिनकर दीसत महीं, त्यों निहोकर मिसी काल ।  
 इस दिस तारे भिन्नभिन्न, कारण कौन निहाल ॥३५॥  
 ताल मरयो जल देख कै, दौरे नर पशु बाल ।  
 जानी बुद्धि का भिल्लत, कारण कौन निहाल ॥३६॥  
 बिन पान्हे उड़ जात नम, ठसर जात पताल ।  
 देत सझारा तब चलत, कारण कौन निहाल ॥३७॥  
 आठ पाँच तुर पशु नहीं, पुस्त चलावे बाल ।  
 हाड़ होदि नहीं बाँध नस, कारण कौन निहाल ॥३८॥  
 तिय पिय के संयोग बिन, मर्म करयो जति बाल ।  
 मयो पुत्र पद बाल में, कारण कौन निहाल ॥३९॥  
 कठिन होदि दुक भीमों, जल बिन निगम निहाल ।  
 अति अचरज देखत दुमत, कारण कौन निहाल ॥४०॥  
 परब दिखत सब तिय मिसी, मानत भीत रसाल ।  
 एक तिय चहु आँख मरत, कारण कौन निहाल ॥४१॥

० पद्य जल ।

३४ सम्पूर्ण पूर्व अक्षर । ३५ दृग्विधा । ३६ पक्षी । ३७ वि-  
 निती । ३८ हाँस कीर्तिमान मोटी । ३९ जोहि री काव (पञ्चम-पञ्च) ४०  
 अक्षरि मूर्धनि मर्तले अर्थात् चरुवाल ।

जटा बीच बंधा चलत, सिंह निलायै साल ।  
 लखख मझूर शिव नहीं, कारख कौन निहाल ॥४१॥  
 चार हाथ हैं सुख पकर, पानी वियत पताल ।  
 उलट आत उलटी करत, कारख कौन निहाल ॥४२॥  
 कार्तिकेय नहि पद पदन, प्यार हुं दुर्लभ चाल ।  
 खान खान एक एक दुखी, कारख कौन निहाल ॥४३॥  
 सोख सब हूँ ना चलत, चकल चलाये चाल ।  
 अंगुरी एक सिरी नहीं, कारख कौन निहाल ॥४४॥  
 बग-बिन उठै अकाल में, गिरत न लागे ताल ।  
 बिद्याधर वर सुर नहीं, कारख कौन निहाल ॥४५॥  
 साज बजत संगीत हैं, ताल चमक चौताल ।  
 विपुल नटी पग सुक घरत, कारख कौन निहाल ॥४६॥

॥४७॥ ॥४८॥

॥

४१ बाँधल जल बेरी लु जटा बीच शिव लगी दु'नी हूँ जटा में पायी  
 लगी । ४२ पकर (पेन) कोई देर कोई मोह ऊपर प्यार पान्नी लगी दिव में  
 लल बनि पकर की ऊपर कलहूँ की हो प्यार हाथ ऊपर कोई लगी सुख पायी  
 मनी में दिव हूँ । ४३ कलकल मनी । ४४ लोले लगी चलो ली लोले हूँ लोले  
 वर लली । ४५ कल ४६ लगी मनी लली ।

प्राण दसो सु\* एक नहीं, ज्ञान बृद्ध नहीं बाल ।  
 मरण अनम विन जीव है, कारण कौन निहाल ॥४७॥  
 तुरत दसन विन अन मले, छरद करत तिह काल ।  
 पेट भरत नहीं पुस्तकां, कारण कौन निहाल ॥४८॥  
 प्राण नहीं मुख एक रदन, अदन विशाल रसाल ।  
 इदन मृत दुख में करें, कारण कौन निहाल ॥४९॥  
 क्यार लट्टी अट कर पकर, उन बिच बैठे बाल ।  
 देत सहारा नम फिरत, कारण कौन निहाल ॥५०॥  
 प्रात सुखत संभ्या कमत, सुदू अति सुन्दर बाल ।  
 संभ्या पुन दऊं नहीं, कारण कौन निहाल ॥५१॥  
 विन पैड़ी चबदै चबदै, समसंतर कर काल ।  
 मरण होत ही उड़ चलै, कारण कौन निहाल ॥५२॥  
 मध्ये प्रवचन बाँध दुम, सन्धा आद क अंत ।  
 मिगसर यदि तेरत नई, गूढ़ बावनी कंत ॥५३॥  
 खरतर बहुतरक गहै, रत्न राख मणि सीस ।  
 आग्रह ते दोषक रचै, ग्यानसार मन हीस ॥५४॥

—अति निहाल कवनी संस्मरण—

\* सु\* से ।

४७ निद्रामत्ता । ४८ लट्टी । ४९ बाणी । ५० बोलत हीन ।

५१ क्यारनी सु\* क्यारोकरनामान, लट्टी पुन नहीं चबलट्टी सु\* क्यार नी  
 क्यारि लट्टी संभ्यामान । ५२ तिह ।



# श्रीनवपदजी पूजा

बोझा—अपार पातिया चम करी, जेह कथा मंगलत ।

समयसरण खडे सदित, वन्दू ते अरिहन्त ॥ १ ॥

पेशी—सूखी मदीना नी ।

अनंत मये अभिषेक, ति मय खानिक तप सेव ।

बाण्यो त्रिक जिन नाम, एग मय अंतर एव ॥

राज कुलै अक्षरिण, चवदै स्वयं सनक ।

शुभ लक्षण सूचित शुभ, शुभ शुभ माता पद ॥ १ ॥

जनम महोत्सव करवा, विशिष्टमरी सुर ईद ।

आदै एक एक की आगल हरल अमद ॥

पग पग नटक नाचै, सुर कुमरी ना हन् ।

मेर सिखर मकरावै ल्यावै त्रिगु त्रिगुचन्द ॥ २ ॥

लोक अक्षरक पेदै अक्षिण दोमें अपार ।

तीन ज्ञान की भोग लीख नीं कर निरवार ॥

तज आगारी कम बिहारी हुब अक्षरार ।

संत संत अमरत अमाई जे अक्षरार ॥ ३ ॥

शुद्ध भ्यान नै ल्यावै, आत्म शक्ति अखोह ।

सबगसेषयो हय पदिहय त्रिगु कीनो मोह ॥

केवल वस्य नांकी शुद्ध सक्षी स्यात ।

चोखेसै अक्षय युत अरिहन्त देव विख्यात ॥ ४ ॥

प्राविहारिज सोमिव सेवित सुर निहरन्त ।  
 मू पीठै बांधी गुण की मय बोह कुणन्त ॥  
 जगजीवन जगज्जलम जगज्जलु जग खोम ।  
 बार बार त्रिभरस सुखे बाहरौ परखाम ॥ ५ ॥  
 इति अरिहन्त स्तवना ।

दोहा:—अष्ट करम रस निरहरी, अष्ट गुण अष्ट समृद्ध ।  
 जन्म मरम मय निर्मोपी, समू अर्जना सिद्ध ॥ १ ॥

देरी (सूरी महीना नी)

अरिहन्त वा सामान केवलि कृत समुपाय ।  
 अकृत समुपासी सोनेसी कर्णै पाय ॥  
 मय मय मलु नै रोवै लोग निरोपी होय ।  
 लोग निरोपी केवल बांधी कहियै सोय ॥ ६ ॥  
 जालु कृप की दो इग चरम समै रहि सेव ।  
 बगुजर तेरे मकृत अपावै दिव नही सेव ॥  
 चरम अक्ष अकटादस तीवै मारी कंस ।  
 कहुंवा रग समय लोगवै सिद्ध अर्जुन ॥ ७ ॥  
 पुन्य पभोग अखने सहिजे बंधस जेद ।  
 पूव सुभावे अर्जुनवि तेहनौ अविच्छेद ॥  
 इन्ही पगारु पुद्वी पर जोकस लोगत ।  
 पदनी विव नौ बांनक तेहनौ आद न अन्त ॥ ८ ॥  
 जेन अर्जुन अमुगुपाय अखरीर अकह ।  
 अंसु नोख कचस गुण गति अर्जुन अकह ॥

समय परिपूर्ण सरव द्रव्य शुद्ध कर्माव सुभाव ।  
 चतन' विस्तारदिक जे जाणौ पावौ भाव ॥ ९ ॥  
 शुद्ध इवासीस अट्टगुण सिद्ध अर्थात् चत्वार ।  
 जेव अर्थात् अष्टगुणर वपमांनौ न प्रचार ॥  
 साक्षय विद्वान् अर्थात् सिद्ध सुखे संवत् ।  
 दहवा सिद्ध जे होम्बो मम प्रणिपत्त सुनिष्ठ ॥ १० ॥  
 इति सिद्ध सवना ॥

श्रीदाः—ते आचारज नित नमू पावौ पञ्चाचार ।

शुद्ध वैरीसै कनदिसौ मम्म मखी द्विगुणर ॥ १ ॥

वेरी (तेदिज)

आचारता ज्ञानादिक पञ्च विधा आचार ।  
 प्रगट करै सह जन नै कारया इह जगत् ॥  
 जे आचारिज वैरादिक बहु शुद्ध संवत् ।  
 तेहूनी जंम सुमरणांनी ओपम कुत्त ॥ ११ ॥  
 जन्ममत्त ऊवमत्ता विद्वया तेहू विरत्त ।  
 कोदाई पर वत्त मम्म कवदसै सत्त ॥  
 सारै जे निज मन्थै जिय मखौ आसत्त ।  
 सादस पादस ओइस पदिओवकायै निव ॥ १२ ॥  
 पञ्चांगी वा ज्ञान्या सुख कवत्त ना समर ।  
 पर समझै दिव्य धुमि वांयै ज्मिगुणर ॥  
 अत्यमियै जिय सूर केवळ अत्यमियै तेम ।  
 प्रगटे सवै पदार्थ आचारिज दीपक जेम ॥ १३ ॥

पाप धारै अतिराम धारी बहता मग सुख ।  
 बहता नै नितारै जे आचार सहज ॥  
 आचारिक हित राखी धारै हित मो काम ।  
 तेहरी आधिक्यो हित करन धारै निराम ॥ १४ ॥  
 जे बहु सदा समिधा सावित्रा धारै ॥  
 राय कमा शासन बन हरित करवा भू-ईश ॥  
 निम राजसन कुल मंडन कंकन बाहीकुम्ह ।  
 ज्ञानसार नित कर्मै अभिनव धारै चम् ॥ १५ ॥  
 इति आचार्य सचन ॥

दोहा :—आदरांग सुखल नै धरै पदार्थ हीन ।  
 मूरख नै पंडित करै, कर्म मन्त्राकी हीन ॥  
 देरी (तेदिक)

आदरांग सुखल ना धारै धारै जेह ।  
 कर्म नितार कई कर्मधारी लक्ष्य पद ॥  
 जे आदरांग समान हीन जे सुख मो धार ।  
 पाद बही जे पूजक करव लोक मन्दार ॥ १६ ॥  
 मोर कर्म बसवै नाटी आराम ज्ञान ।  
 तेह आचरन चेतन नै करै चेतनान ॥  
 व्यास अनाथ पीड़ित जे आधी ना आंध ।  
 कुल अक्षरै जे करै आत्म स्वरूप नौ आंध ॥ १७ ॥  
 गुरुवर्य बंशधर मग नव दमयंजुल जे नाथ ।  
 देवें सदा मरिच नै जीनदया मन आंध ॥

सेस हांन दिन मास जीवित<sup>१</sup> नो जायी चंद ।  
 सुख खंखै के चंद न खंखी खु ने दिव ॥ १५ ॥  
 अज्ञाननं झोक ने अस्मय मुख ने राख ।  
 तेखै अज्ञ पजार निरोमो करै नेव ॥  
 पाव साव की झोक लम्हा के आसन साव ।  
 सीत करै बाजस चंदन सम सीतल साव ॥ १६ ॥  
 सुखराज ने तुल्य सूरि पदवी ने सोम्य ।  
 गद्य ली कर्तै<sup>२</sup> उत्तर वाक्य दे दिव्य कर्म ॥  
 पारद की कंचन करै तेहूँ अचिरिज भाव ।  
 य पाइस की रत्न करै अकामू लख नाव ॥ १७ ॥

इति लघुभाष्य सप्तमः ॥

बोधा :—दोन् बिष विपदिखी, मैलै मैली पाव ।  
 बीहर के लकाव ना, गुह कराय ना पाव ॥ १ ॥  
 देही (देहिज)  
 नाथ दंखाय चरित कन लखणाय एक !  
 साधै के गुल कर्म सावक कहियै एक ॥  
 गुह खान के कर्त रौद्र विगत करत ।  
 कर्म गुह नै क्यारै दुखिद सिद्धा खीखन ॥ २ ॥  
 बीने गुप्ते गुप्ता गारव बीन् साव ।  
 पावै के विपदी नै करबी बीन् साव ॥  
 बीविह (बिरह) विगह विरता क्यार कयाव नौ त्याग ।  
 क्यार अकारै कर्म पक्यै रस बैराग ॥ ३ ॥

निमित्तव दक्षिणी नै उल्लसित वस्त्र प्रसाद ।  
 पालै पांच मुखवि नै आठ कुर अग्रमाद ॥  
 जव काय ना पीडर हाभाई रुद्ध मुक्त ।  
 वाद्याववाच विरमद्यादिक पालै वच लक्ष ॥ २३ ॥  
 जे जिय सत्त भया गया अद्भु मया अममत्त ।  
 प्रह वच नै पालै, वच गुचीर्यै गुत्त ॥  
 छत्पादिक दग विध जई वम्म शुद्ध पालव ।  
 बारस विह पक्षिया नै रुक्त विधै कुम्बान्ति ॥ २४ ॥  
 मूर्तेभन्त संवस पांसीनै जेहने अंग ।  
 रुक्मनै धार्यो अठार सदस सीर्षंग ॥  
 पनर कर्मभूमै विचरतां सूया साध ।  
 ते सद्ग साधै जाई मन वच तन आराध ॥ २५ ॥  
 इति आधु स्वस्व ॥

दोहा :—कही अन्तते केवली, तीन ठल मय मर्म ।  
 शुद्ध मन ते करै है, सम्पन्न दर्शन मर्म ॥ १ ॥

द्वैती (तैद्वित)

जे शुद्ध देश भरस शुद्ध वस्तुत्त भी संपत्ति ।  
 सदृश्या रूपै सेमये वर्यौ सम्पत्ति ॥  
 कोटा कोटिय सागर कम्ब छिई नही रोष ।  
 सावन आठस पावे जहूरी शक्ति विशेष ॥ २६ ॥  
 अथ मुग्धश्च परिच्छेद मन्त्र मय रोष निवास ।  
 ते विद्या मिथ्या गंभी नौ नही होवै नारा ॥

ते सुखद्वान तावीन विधान समय परिशिद्ध ।  
 स्वसय जय स्वसय धामक परिशोधनी बुद्धि ॥ २७ ॥  
 पणवारा स्वसम सय स्वसम होय जसस ।  
 धायक एक बार की अधिक न समये कंस ॥  
 धर्म बुद्ध नौ युक्त परम पुर नांदि प्रवेश ।  
 धर्म भवन नौ पोट करम आयेक विशेष ॥ २८ ॥  
 कपरास रस नौ भावन ते गुण रवण विधान ।  
 हुद्ध सकल परम जगई आधार समान ॥  
 ते विद्य विन्यास करण नांछ ते विद्य अपमान्य ।  
 ते विन लोक न जानै ए सिद्धान्त प्रमाण ॥ २९ ॥  
 ते सदस्या जगण भूषण पशुदा भेर ।  
 परपोसे सिद्धान्ते कसर बांध पण छेद ॥  
 पण मोच भातौ विद्य गठै बांधौ होच ।  
 ते निरर्थे की सिद्ध भवै विद्य बांधु सोच ॥ ३० ॥

इति दर्शन स्तवना ॥

दोहा : - सर्वज्ञ प्रणितान्तर्ग, ते जीवति नवार्थ ।  
 निज २ इक एक नै, जानै हुद्ध परवार्थ ॥ १ ॥

बेरी (तिथि)

सर्वज्ञ प्रणितान्तर्ग तरव नवार्थ प्रमाण ।  
 ते हुद्ध अवबोध नांछ सादर परमाण ॥  
 मेरी मन्दासदय जानीनै केव अपेय ।  
 गन्ध अगन्ध वस्तु कृत अकृत पद्वी नेव ॥ ३१ ॥

सर्व किया तो मूल अहं भावी जिनराज ।  
 अहं मूलै नांछ सदा उपगारी आज ॥  
 लेख्य ओही अक्षयजन नांछी सुविशुद्ध ।  
 केवल मोछै पञ्च विद्या समर्थ सुवसिद्ध ॥ ३२ ॥  
 केवल भय ओही ना वचन करे स्वयं ।  
 तेह पदव्या सब सुख भी बाहरे आवार ॥  
 निरन्ध्र भी सुख कछै छात्रा भय अरुण ।  
 लोक आज निष्ठ पार्थ पदभी शुद्ध स्वयं ॥ ३३ ॥  
 तेहनी पद पदार्थ ते निष्ठये कृतपुण्य ।  
 पूज सिद्धाय कहाय करे ते धन्य भी धन्य ॥  
 अज्ञानि जायै जन्म बलै विष सोय विचार ।  
 करण अविज्ञ भी पर मात पछै निरवार ॥ ३४ ॥  
 होय तेह मत्तार्थ पूजनीय पद सोय ।  
 पद मत्तार्थ सर्व जगत् भी वदित होय ॥  
 तेहनी प अममार्थ करे ते अवि मतिमंद ।  
 ज्ञान नम मन वदित पूरक सुरतक कंद ॥ ३५ ॥  
 इति ज्ञान स्थाना ॥

दोहा :—देख करण विरति कछै, निही जई ते होय ।

ते पारित सदा जयौ, निरन्ध्र प्रापक सोय ॥ १ ॥

दास (विद्वज्)

देख विरति कछै ते सर्वैरिति अरुण ।

होय गहीन जई ते ते पारित अरुण ॥



मांश दर्शन पक्ष संपूर्णे पक्ष दाता हृद ।  
 एवमिहै परिकर पक्षनीं सहु समस प्रसिद्ध ॥ ३६ ॥  
 जंभ अईस अहुत्तर अधिक २ पक्ष दिव ।  
 सामासकादि मेहु चारित्रि नै पक्ष मयति ॥  
 त्रिखपर पिय आवर पालनी सुनी चारित्र ।  
 समसक लेख पक्षयो, अन्ये दीव विचित्र ॥ ३७ ॥  
 ब्रह्मन्दास मसक राज कोटी पक्षमर्त्त ।  
 दुर्धर तेहवै सुखिर अत पालनी अत रक्त ॥  
 मुक्त सरिता पक्ष रांक चरख पालता जोय ।  
 वक्ष मानकै चानी बांदै पूवै जोय ॥ ३८ ॥  
 चारित्र पालता चारित्रि नै समसद ।  
 पाय नई रोमचित्र कनु नर वर सुर ईव ॥  
 जे चारित्र अनंत सुखी पिय सखै मेव ।  
 बरखीजै सिद्धन्ते तिम पक्षना वरा ज्येव ॥ ३९ ॥  
 सुनतिगुपति अइ वस्त्र नै आदि मायनाचार ।  
 चापे जेहनी सुखै ते सुख चरखाचार ॥  
 दुर्धर दीव अली में जे चारित्र चरति ।  
 ते सहु नै मुक्त वन मार्गे प्रणपति करति ॥ ४० ॥  
 इति चारित्र साधना ॥

टोका :—सुख भाठ कर्म <sup>१</sup> काठ नै, जेह अनति लप्यांत ।

यथा शक्ति तत्र पक्षयै, अमयाई मति मंत ॥ १ ॥

## वैशी (सूरजी महीनानी)

बाह्य आत्मन्तर भारै सब समय भेद बर्खास्त ।  
 ते हय इगधी लड़ सत्तर मुख वृद्धि करंत ॥  
 जे<sup>१</sup> भय सिद्ध आसति अष्टादिक विनराज ।  
 तीर्थंकर रूप कीनी कर्म निर्जरा काज ॥ ४१ ॥  
 अगम तरे बंधन की माटी भिन्न कीटंत ।  
 जीव स्वर्ग की कर्म भेद वष दूर करंत ॥  
 केवल कृष्ण अमावै अम्बा कृष्ण विरोध ।  
 तेहनी मूल अरख व, पक्षी होय अरोध ॥ ४२ ॥

सुरतक सम पहना फुल वैष सुर अष्ट ।  
 आत्म स्वल्प अंतर्हृत्तिरै शिषफल सिद्ध ॥  
 जे अरमन्त असाम्य लोक में सरवै काम ।  
 कीनै सुरत सद्दिखी तब अति रति परछांय ॥ ४३ ॥  
 इति दुर्भाग्य मंगल अरख लोक प्रसिद्ध ।  
 ते भट्ट में पहिला मुख्य मंगल सुविशुद्ध ॥  
 कनकावलि रत्नावलि लहु गुरु सीधकिरीट ।  
 तब कारक इत्यादि नष्ट, भावै भय भीक ॥ ४४ ॥  
 सीपत निखय-नय यव सिद्धलि प्रवचन माय ।  
 परम-सिद्धे पद कोय गर्ते प अंक गिरुयाय ॥  
 साधव बांद तेरस ते रस सुं नवपद कोय ।  
 बीकानेरै ज्ञानसार मुनि वचना बीज ॥ ४५ ॥

इति तप स्तवना ॥

॥ इति नवपद पूजा संपूर्ण ॥

समय बहिन समन दण्ड मुख पर्यन्त सुमान ।  
 'फटन' निरुतनादिक जे जांयौ पासै भाव ॥ ६ ॥  
 मुख इषासीस अट्टमुख सिद्ध अर्थात् न्यार ।  
 जेय अर्थात् अष्टाक्षर सपञ्चाशौ न प्रचार ॥  
 आसन्न विद्वान् अर्थात् सिद्ध सुखै संपन्न ।  
 पदवा सिद्ध नै होयवो मम प्रसिपन्न सुनिष्ठ ॥ १० ॥  
 इति सिद्ध स्तवना ॥

बोधाः—जे आचार्य नित नमू पासै पञ्चाचार ।  
 गुण वैरीसै कबहिरौ, नम्य मयी द्विधर ॥ १ ॥

देसी (तेहिज)

आचारता ज्ञानादिक पञ्च विधा आचार ।  
 प्रत्य करै सह जन नै करय इक कगार ॥  
 जे आचारिक देसादिक बहु मुख संपन्न ।  
 तेहूनी जंगम सुमन्यव्यानी कोपय सुख ॥ ११ ॥  
 अपमत्ता उल्लङ्घता निरुता जेह विरक्त ।  
 कोहाई पर पत्त धम्म अमर्त्य सत्त ॥  
 धारै जे निज गच्छै जिय बस्यै आसन्न ।  
 काइक काइक ओइस पक्षिओयस्यायै निष्ठ ॥ १२ ॥  
 पञ्चांगी को जायता सुज करय ता सार ।  
 पर कर्मकरै दिव्य पुनि जांचै विस्तार ॥  
 अत्यमित्यै जिन सूर केवल अत्यमित्यै तेम ।  
 मगटे सर्व परार्थ आचारिक दीपक जेम ॥ १३ ॥

पाप मारे अतिशय भारी पड़ता मग कुप ।  
 पड़ता नै निस्तारे जे आधार सहज ॥  
 मायादिक द्विज राखी सारे द्विज नो कहे ।  
 तेहरी अविही द्विज कारण सारे निरुद्ध ॥ १४ ॥  
 जे तब सख सविद्या सातिसवा साठार ।  
 राख कया शासन बन हरित करख भू ईश ॥  
 जिन राजसन कुल संजन संजन पादीकुल ।  
 ज्ञानसार जित प्रथम अविनय शारद कव ॥ १५ ॥  
 इति आचार्य स्वयं ॥

दोहा :—इदरांग सुतस्य नै पड़े पढ़ाये सीरा ।  
 मूरख नै पढ़ित करै, नमू नमायी सीरा ॥  
 बैरी (तेहिक)

बारसंग सुतस्य ना बारस बारस जेह ।  
 बमस बिचार सई समझयै लखय पद ॥  
 जे पाहियेन समाय सीरा नै सुन बी बार ।  
 पाट पढ़ी जे पूजक करय लोक नमर ॥ १६ ॥  
 मोर सयै कयने नाही आत्म ज्ञान ।  
 तेह अनेछन चेतन नै करे चेतनमान ॥  
 व्यास बनार्य पीड़ित जे प्राणी मा प्राणु ।  
 सुत अहीरै जे करै मात्य करुण नौ कोण ॥ १७ ॥  
 गुणवर्ध संजय मग मग कथयंकुल जे लोक ।  
 तेहें कया अविद्य नै जीवदया मग कोण ॥

सोस दान दिन मास कीर्ति १ जो जगदी भव ।  
 सुख मयै के भव न कांछी छद् नै दिव ॥ १८ ॥  
 अज्ञानंभ सोक नै सधाम सुख जे लख ।  
 तेथै ज्ञान कतर निरोगो करै जेव ॥  
 बाप बाप की कोक लया जे अकल दाव ।  
 सीत करै बापक चदन सम सीतक आव ॥ १९ ॥  
 लुभराज नै तुल्य सूरि पदवी नै योग्य ।  
 गद्य की लखै २ कतर कथ्य दे दिग्य बरौ ॥  
 पारद की कंकन करै तेहनी अचिरिज बाध ।  
 २ पद्मसु भी हन करै प्रसन्न रस पाव ॥ २० ॥

इति कल्याण्य स्वयम् ॥

बोधा :—दोहू विष विनरिपही, सेहै सेहो पाव ।  
 बीहर जे लखाय ना, दुख कराय ना पाव ॥ १ ॥  
 देसी (तेहिज)  
 नाथ दंसय चरित कव रमयण्य एक !  
 साधै जे सुख मयै साधक कहिबै एक ॥  
 दुख भ्यान जे भात रोहै विगत करत ।  
 धर्म शुद्ध नै व्यापै दुनिह सिद्ध कीर्तन ॥ २१ ॥  
 सीने गुप्ते गुहा गारव कीन् गाय ।  
 पाली जे विपही जे करजी कीन् साज ॥  
 पौनिह (विह) विगाह निरसा प्यार कथाय नौ त्याग ।  
 प्यार प्रकारै धर्म पढ़ै रस वैराग ॥ २२ ॥

निविजय वंकेदी नै लखीय पञ्च प्रमाद ।  
 पाले बांघ सुमति नै आठ कट्टर जगमाद ॥  
 हण काय ना पीहर हण्डाई ऊड़ गुण ।  
 कायाभवाय विरमयादिक पाले नव छव ॥ २३ ॥  
 जे जिय छप मया गया आहु मया असमंज ।  
 ज्ञान यव नै पाले, नव गुणीयै गुण ॥  
 छल्लादिक दश विष छई चम्प गुह्य पालव ।  
 बारस बिह पकिमा नै छल विषै कुल्लमि ॥ २४ ॥  
 मूर्खवन्त संवस पांभीजै जेहने जंग ।  
 बल्लवै पांभी अठार अहस रीतिंग ॥  
 वयर कमभूवै बिचरतां सूचा जाय ।  
 ते बडु छावै बाहुं जन नव वन आलाय ॥ २५ ॥  
 इति साधु रुचका ॥

बोधा :—कहौ जनते केकरी, तीन तत्व मय मय ।  
 गुह्य कने ते सदै है, सम्पन्न दर्शन मय ॥ १ ॥

कैरी (लिखित)

तै गुह्य देव जगद गुरु जगत्ता नी संपति ।  
 सद्गुरु कर्षे सैनयै जग्यै सम्पत् ॥  
 कोहा कोदिग सागर कम्प छई नही शेष ।  
 तावन आत्म पावै सद्गी राकि विशेष ॥ २६ ॥  
 कप पुमल्ल परिकट मज्ज मय शेष निषाध ।  
 ते विष मिथ्या गळी नी नही दोवै नाश ॥

ते सुखद्वान ना दीन विधान समय परिसिद्ध ।  
 स्वयम्भुव स्वयम्भुव स्वयम्भुव परिसिद्ध ॥ १७ ॥  
 स्वयम्भुव स्वयम्भुव स्वयम्भुव स्वयम्भुव ॥  
 स्वयम्भुव एक बार भी अधिक न समर्थ ॥  
 धर्म धर्म नौ मूल धर्म पुर नादि प्रवेश ।  
 धर्म धर्म नौ पोट धर्म आधेय विशेष ॥ १८ ॥  
 स्वयम्भुव रस नौ आत्म जे सुख रस्य विधान ।  
 स्वयम्भुव स्वयम्भुव स्वयम्भुव स्वयम्भुव ॥  
 जे विद्य निपटल स्वयम्भुव नाथ जे विद्य स्वयम्भुव ।  
 जे विद्य स्वयम्भुव न स्वयम्भुव स्वयम्भुव ॥ १९ ॥  
 जे स्वयम्भुव स्वयम्भुव स्वयम्भुव स्वयम्भुव ॥  
 स्वयम्भुव स्वयम्भुव स्वयम्भुव स्वयम्भुव ॥  
 स्वयम्भुव स्वयम्भुव स्वयम्भुव स्वयम्भुव ॥  
 ते निरर्थ भी विद्य स्वयम्भुव स्वयम्भुव ॥ २० ॥

इति दर्शन साधना ॥

श्लोक :- सर्वज्ञ प्रणितानाम्, जे जीवनि नदार्थ ।  
 मित्र २ एक एक नौ, जेही स्वयम्भुव ॥ १ ॥

वेदी (लिखित)

सर्वज्ञ प्रणितानाम् स्वयम्भुव स्वयम्भुव ॥  
 ते स्वयम्भुव स्वयम्भुव नाथ स्वयम्भुव ॥  
 जेही स्वयम्भुव स्वयम्भुव स्वयम्भुव ॥  
 स्वयम्भुव स्वयम्भुव स्वयम्भुव स्वयम्भुव ॥ २१ ॥

सर्व किंचित् नो मूल भद्रा भास्वी जिनराज ।  
 भद्रा मूर्ति भांछ कदा कपलरी भाज ॥  
 जेन्म जोही मणुपजन भांछी सुनिश्चिद ।  
 केवल नांछै पञ्च विद्या सम्यै सुपसिद्ध ॥ ३१ ॥  
 केवल भद्र जोही ना कयल करे कयार ।  
 तेह वरुन्धा मय सुख भी माहरे भाचार ॥  
 निश्चय भी सुख नांछै इहारा जग सकल ।  
 लोक भाज भिन्न पार्थै पदभी शुद्ध सकल ॥ ३२ ॥  
 तेहपो पद पदायै रै भिन्नुये कृतपुण्य ।  
 पूज सिद्धाथ सहाय करे ते जन्म भी जन्म ॥  
 अज्ञानि जायै जस्त बलै तिय कोच विचार ।  
 करगत जायल नो पर भगद पदौ निरवार ॥ ३३ ॥  
 होयै तेह मसादै पूजनीक पद कोच ।  
 पद मसादै सर्व जग नो बंदिक होय ॥  
 तेहभी द अयमांछ करे ते अति मतिभंद ।  
 ज्ञान नमं मन बखित पूरक सुरतक बंद ॥ ३४ ॥  
 इति ज्ञान श्रवणा ॥

श्लोका :—देरा सरथ विरति पदौ, मिही जई नै होय ।  
 ते आदिज कदा ज्यौ, शिष्यपद प्रापक होय ॥ १ ॥

राज (सिद्धि)

देरा विरति रूपै जे सर्वैविरति सकल ।  
 होय गहीण जई नै ते आदिज अनूप ॥



नाथ दर्शन पण संपूर्ण पण दाता वृद्ध ।  
 पहणी हौ परिफर पहनी सह समन्य प्रसिद्ध ॥ ३६ ॥  
 जय जईय कहुत्तर अधिक २ पण दित ।  
 सामावकादि भेदु चारित्रै नै पण भवति ॥  
 विद्युवर पिण्ण भावर पालनी सुखी चारित्र ।  
 सम्पद जेय पहन्वी, सम्ये दीप निमित्त ॥ ३७ ॥  
 द्वांसंभण मखंड राज छोकी चक्रवर्त्त ।  
 दुर्धर तेहवै सुखिअ अत पाखी अत रक्त ॥  
 मुक्त करिआ पण रांक चरख पाखीला जोष ।  
 कण बांनकै बापी बांदै पूरै सोष ॥ ३८ ॥  
 चारित्र पाखीला चारित्री नै साखंद ।  
 पाच नमै रोसंचित कलु भर भर सुर ईद ॥  
 जे चारित्र समंत सुखी निगु सठरै भेद ।  
 बरखीलै सिद्धलै तिन पहना दस ज्येद ॥ ३९ ॥  
 सुमति गुणति कह वन्म नै आदि भावनाचार ।  
 काधे जेहनी सुखै ते सुख करणाचार ॥  
 दुर्धर दीप अनी नै जे चारित्र कांति ।  
 ते सह नै मुक्त मन माधे प्रत्युपति करति ॥ ४० ॥  
 इति चारित्र स्तवना ॥

दीहा :—हुष्ट माठ कर्म ' कठ नै, जेह अयनि ह्य्यांत ।

यथा शक्ति तत्र पदवर्त्तै, अममाई नति संत ॥ १ ॥

## बेसी (सूरजी महीनाही)

बाह्य अन्तर नारै स समय भेद भरांत ।  
 ते इय इग्यी जह-सत्तर गुण वृद्धि करंत ॥  
 जे' मय सिद्ध जावति ज्ञानमादिक विनस्तम ।  
 तीर्थंकर तप कीर्ती कर्म निर्जरा काज ॥ ४१ ॥  
 कलाल तपै कंचन बी बाटी जिम पीटव ।  
 जीव स्वर्ण बी कर्म पैल तप दूर करंत ॥  
 केवल ज्ञानि अमरपै अन्या ज्ञानि विशेष ।  
 तेहनी मूल कारण व, पदवी होय अरोप ॥ ४२ ॥  
 सुराह सम पदना कुल वैच सुर चह ।  
 आत्म स्वरूप ज्ञेयहूँ'तिचै शिवफल सिद्ध ॥  
 जे कल्पित असाम्य लोक जे-सरचै काम ।  
 बीमौ तुरत सद्धिजयी तप कति रति परयांम ॥ ४३ ॥  
 दधि दुर्भाग्या मंगल कारण लोक प्रसिद्ध ।  
 ते भद्रु जे बहिष्ता मुख्य मंगल सुविशुद्ध ॥  
 कनकावलि रतनावलि सह गुरु सीदनिबीद ।  
 तप करक इत्यादि नष्ट, भाषी मय भीद ॥ ४४ ॥  
 संवत निक्षेप-नय मय तिमबलि अवचन माय ।  
 परम-सिद्धे पद पांज मरै प ज्ञ-क विद्याय ॥  
 मादव बाद तेरस ते रस सुं नमपद सोन ।  
 बीकानेरै ज्ञानसार गुनि तपना बीन ॥ ४५ ॥

इति तप स्तवना ॥

॥ इति नवमः पूजा संपूर्णः ॥

## ॥ आरती ॥

ते ते नवपद आरति कीये, सकल संगत कल्याण लहीये ।  
 बहिरी आरति अरिहन्त सिद्धा, अरिहन्त सिद्ध अभेद प्रसिद्धा ॥जै०॥१॥  
 बीबी आचारिज मुख भारी, सब सकल नौ ते आचारी ।  
 जोड़ी बसन्ताबा साधुनी, कसब सीखवै सोलै तेहनी ॥जै०॥२॥  
 जोन तरव सरहइछा रूपै, चौबी छहारे भव कूपै ।  
 संचमी सर्वज्ञै प्रकृतप्रियम, कल राखी तेहनी निम अधिगम ॥जै०॥३॥  
 लही वेरा सर्व करित्री, करल हुब काया सुप्रवित्री ।  
 बाहिर अमलत तब बारै, सातवी आरति बारै बारै ॥जै०॥४॥  
 जे भवि सात आरति ककारै, शुद्ध भव दुर्गति दूर निवारै ।  
 ज्ञानछार नवपद आराधी, भोवाचारिक निव नद साधी ॥जै०॥५॥

## ॥ अथ नवपद स्तवन सिस्यदे ॥

राग ( केलावड )

भवि पूजा भावै करी, नवपदनी सार ।  
 नवपद आत्म भाव नै, इह निजत निहार ॥म०॥१॥  
 आत्म मुख आशेष नौ, नवपद आधार ।  
 एह अभेदोपचारियै, निज आत्म विचार ॥म०॥२॥  
 आत्मसा नवपद गई, नवपद आत्मता ।  
 नवपद भावै परिपूर्ण्यै, निजमुख नो करता ॥म०॥३॥  
 नवपद भ्याता भवि क्या, त्रिषु कालै सिद्ध ।  
 ज्ञानछार मुख रख नौ, नवपद संन निद्ध ॥म०॥४॥

॥ इति नवपद स्त ॥ ॥

सं० १८६२ अथेष्ट सुख्य चत्वे १० त्रिषी मंगलवासरे पाक्षीताया नयरे ॥  
 सं० १८७६ मि० पञ्चमुख बर्दि १२ दिने छि० सं० रत्ननिधान श्री  
 बीकानेर मध्ये ॥ पत्र ४ संवत् ३० ॥

### सप्त-दोषक

परशामी परशाम तै, बांधे आहूँ कर्म ।  
 करे कर्म फल भोगवै, इहै जिनामम मर्म ॥१॥  
 वै जैसे परशाम में, वरतै आत्म राम ।  
 तैसी तैसी प्रकृत को, बंध कदावत नाम ॥२॥  
 मिथ्यात्वै चो प्रत्यई, करत कर्म को बंध ।  
 अधिरत प्रकृति ति प्रत्यई, होत बंध की संघ ॥३॥  
 सुखम सुख उखम दुषै, योग कलायक बंध ।  
 करि है योग संयोग में, होत अयोग अबन्ध ॥४॥  
 परशामी परशाम को, कर्ता कारख हूँत ।  
 बंध कारखै कांखी, है परशाम सु संत ॥५॥  
 कर्ता जो परशाम नहि, कहि है जीव संबंध ।  
 तौ उयोग सुख ठाम लहि, क्यों न करै कम बंध ॥६॥  
 चेतन है निज रूप को, कर्ता तीनूँ काल ।  
 निज सरूप अट सिद्ध को, भेदामेद निहाल ॥७॥

इति श्री ज्ञानसारजिह्वा विरचितं सप्त दोषक

## कुंडलिया

१. ( जूया )

जूया राम धन कुं यहै, सेवा करै मीन ।  
भीख मांग मोर्गे यहै, सबै निर्बनन जान ॥  
सबै दिखन जान, भीख ये मोहन बलि है ।  
सौ भी कुसल मनाव, मान सेवा कहुं मिल है ॥  
कहि नारन कवि मीन, सख सो धन कब हूय ॥  
क्यापारी व्यापार करै, कहुं, रमि है जूया ॥१॥

२. ( पंखी और मुनि )

पंखी अरु मुनिजनन की, रीत एक नहि होय ।  
बे फिर फिर बेझो कुनौ, फिरै गोचरी होय ॥  
फिरै गोचरी होय, रात दिन बन ये वासा ।  
एक दिखस लखु बिरल, यहै एक पंच प्रकाश ॥  
दुर निहचै नहि रहै, अहचै दिख बिन मँली ।  
कहि नारन कवि मीन, मुनी जे आत्म कंली ॥२॥

## बच्चराज स्तुति

श्री चिन्तामणि फलेश सेवको वक्षसायक,  
श्री नमितामणि नामः शोचमाने निज निज ॥१॥  
गजाननस्यपुत्रस्यि स्थापय कूर्मं नाहनः  
श्री चारुचर आम्नातुः सेवकोऽयः सुखप्रदः ॥२॥  
रूपराजदातुः यकि लोको भूत सुख भाजनं ।  
सांप्रतं विद्यासंचारि सन्निवेशसुखधेयान् ॥३॥  
इति बच्चराज की स्तुति

## श्री जिनलाम सूरि बारखड़ी कावित

स तबत साहस्यत, सा इसीधं मि रीधो ।  
 सिर हूँ मि मेदरे, सी कृपाद्वय लव नीधो ॥  
 तु यति उपति सद्गु पात, सूर उप सिन्धु धर्म ।  
 से वर कृं सुख दयक, सौ त जम मातम साधै ॥  
 सो नै सद्यो मोनाम पर, सौ य वरक सुख सुधिर ।  
 सँ सार पाव ताव लया, स यदुष श्रीजिनलाम पर ॥

इति श्री जिनलामसूरि राजानां सकार इन्द्रराक्षरी गभित। रक्षति  
 विविदा विविचिच ज्ञानसारेण ।

### सुवैया तैतीसा

मलहसतो भानु किशुं, सारदा को चंद किशुं,  
 दुख हू को गाय, मनु जवाज बनराज को ।  
 भुजन मयद किशुं, सुमेरनिरि बंद बंद ॥  
 साहस जिनचंद किशुं, सत्य सुवराज को  
 क्षात्री को कपाट किशुं, कपाट जंबूद्वीप जू को ।  
 राजहंस चाल किशुं, गमन मकराज को ।  
 सुगुननि को आगर नू, सागर रत्नाकर सो,  
 सूर को प्रलय किशुं, प्रलय गच्छराज को ॥१॥

कुठिरिब पं० प्र० ज्ञानासारगण्डे ॥

# अथ पूरब देश वर्णनम्

छंद—त्रिभङ्गी

कई मैं देख्या, देश विरोषा, नति रे बबका सब ही में ।  
जिह रूप मैं देखा, नारी पुरखा, फिर फिर देखा नगरी में ॥  
जिह काँड़ी चुचरो, अघरी बचरी, लंगरी पगुरी हूँ काई ।  
पूरब मति जावगै, पच्छिम जावगै, दक्षिण बजार हो भाई ॥पूरब०॥१॥  
सी करै सुदोषै, बैठा सोवै पुरुषा ओवै नैनन सैं ।  
पति सैं नां पालै कान सुवालै, बैन निकालै बैनन सैं ॥  
सबही धमकावै; सामी धावै, जाटो छोटी लै साही ॥पूरब०॥२॥  
घण्ट कटफा घरकै, केसां करकै अघर पुरकै अति रीस ।  
जे रंगे काळी है कंकातो, अरही काळी खुं दीसै ॥  
बल जैनी छोटी, पुंदा मोटी, घाटै घोटी खुं जाई ॥पूरब०॥३॥  
पुंदा घट बालै, बाईं मालै, टेदी हलै जे हलै ।  
नदियैं घट पेलैं मुकदी टेलैं पाँखी मेलैं अब' बालै ॥  
फिर पाखी बकरी<sup>१</sup>, बाठां करली, घस घम बकरी घर जाई ॥पूरब०॥४॥  
घट घर भित घर में, गमखी करमें, हित दे सिरमैले नलवै ।  
हित हलदी संगै, अंगो अंगै, सबही रंगै बिन सिरमें ॥  
कपड़ी कर चारै, मैल कटारै, रगड़ा मारै खोमाई ॥पूरब०॥५॥  
सरनारी मिछ मिछ, भेजा मिछ मिछ, बोली किल मिछ सहु बोली ।

धि सुखो बहई, पूंछो लई, बाणी में घोखी खोजे ॥  
 क्या पुरुष बारी, क्या कुमारी, क्या बेटी अरु क्या माई ॥पूरब०॥१॥  
 जब मिलि नै देखै, देखा देखै, रामच खेलै इक इधरै ॥  
 ह्मी हुय लाधै, मूटी बांधै, पुस्य सांधै राइ करै ।  
 एक नै एक देखै इक इक डेख, पकड़ो दुखो लै लाई ॥पूरब०॥४॥  
 त्र बाहिर आई, लहो लहई, क्या बहूषा अरु क्या सासू ।  
 कहि बेखी सटकै कपड़ै करहै, पाखी मरहै केसां सु ॥  
 क्या छोटी मोटी, क्या अघरोटी, केस न बाधै कोगाई ॥पूरब०॥५॥  
 फिर अरच लिभूरै, सांगन पूरै तानू पूरै सब अंगै ।  
 कहि धोखी बहै आधी बांधै, कुब न डंकै फिर नंगै ॥  
 कर में मंछ पूरी, लांघ न पुरी, खोइ अपूरी बलि कही ॥पूरब०॥६॥  
 बें कानें लोटी छोटी मोटी, नकवेसर लैं नाक परै ।  
 बांधा पग्राछै, कड़खां सल्लै, चतनां लइक्य लइक करै ॥  
 मछाखी दीसै, निरखी दीसै, रूप न दीसै इकराई ॥पूरब०॥१०॥  
 मकसुदाधारै, औ संबाधै, राजांगन सूरीय बधी ।  
 क्या बरखूं मदिजा, बरखी बदिशां विष सुं अविधै रूप पखी ।  
 जे बहि निरलज्जा लज्जा लज्जा, परखी बरखी नै लखई ॥पूरब०॥११॥  
 कुब बंधै तापइ गोदां आपइ ईंध अढ़ई हाथ करै ।  
 पर तांधै, जायै निच नय जायै, खोखी तापइ संघ परै ॥  
 माहर की जाई, पखी लुभाई, बहिरे कांठे फिर जाई ॥पूरब०॥१२॥  
 जानबद पन मच्छी, नारै मच्छी, क्या मोटा अरु क्या छोटा ।  
 क्या कोई भीकर, क्या पुनि भिजकर, खानै पीनै सब मोटा ॥  
 कल लइया दरजी, कलके मुरजी, क्या पोखी अरु क्या जाई ॥पूरब०॥१३॥



जौ मछ बिचारै, बैन कचारै, अम्ब्यातम कपी दीस ।  
 जल कंटे जाई, न्हाई भोई, जल करत जलभर दीसै ॥  
 कर घर जलमाछा, मच्छी वाला, पकड़ी केसै पचराई ॥पुरव०॥१४॥  
 बैरम्बनि करत मारग चकता, इक हाथी मच्छी काबै ।  
 बिच न्हाथी भीटै, टेडी भीटै, देखी वाला फिर आवै ॥  
 नंग चक नाही, फिर भीटाई, फिर आवै अरु फिर काई ॥पुरव०॥१५॥  
 अति रोमी देखै, आसु बिरोषै, कांटे लकिया आवै परै ।  
 पायोमुख बोधै, जल पगकोषै, हरिबोक हरिबोक करै ॥  
 आमीनू मरबै, रोगी करबै, बोक हरि कदि मां वाई ॥पुरव०॥१६॥  
 पूं करत सूखी, करज दुखी, राखी संगी सब आधी ।  
 कर पूखी जालै, मुहकी बालै, पाखी बट दै जल बांधी ॥  
 जल मोहि कबोबै, फेर न जोबै, बोक न रोबै जल नाही ॥पुरव०॥१७॥  
 रोगी नहि सूखी, कांटे सूखी, बांधी भूनइ लिह केसे ।  
 घर के पुइचावै, बैडो आवै, नगरो मांहे नही देखै ॥  
 मुहवापुर ठावै, नाम पगवै, ईसै रवै लिह हुनसाई ॥पुरव०॥१८॥  
 भावक घर वाई, रहै जुगाई, कलमची माई जाई ।  
 घर पीसै बोबै, बून समोवै, करकारी दै जलकाई ॥  
 सब माहु देखै, अंजन छेवै, वाल सिलावै हुजराई ॥पुरव०॥१९॥  
 चूली संभूकै, कुंका कुंके, जल भर घर दै बटलोई ।  
 आचण अकलै, दाज दालै, बाहिर आवै पग पोई ॥  
 इक शृण न पावी, सोई जालै, बिच चौकीरी चतुराई ॥पुरव०॥२०॥  
 इक पाइ स्वावै, बाल चरावै, घर गलै कब घर आवै ।

सुरा खापी आवै, खुं पय आवै, कायक कायक भय पावै ॥  
 बालक कति लवावै, डेरै आवै, पाछी आवै पछ आई ॥पूरब०॥२१॥  
 तब दूध-पिछुटै, सीरां सुँटै<sup>१</sup>, पीवै कायक भेट मरी ।  
 कति शिशुना आवै, काय दिखावै, लवावै, कायक भेट करी ॥  
 बिज घर में आवै साथ लिखावै, सिद्ध हावै काछी आई ॥पूरब०॥२२॥  
 को कब न जावै, पाँत निहावै, फिरकी आवै परदेसी ।  
 काँची दासै, राखन राखै, दरमावै कम्हा बेसी ॥  
 घर में बीनासी बाँधी बासी, कोछ करी नै रहि आई ॥पूरब०॥२३॥  
 कवा-कवां कासै, कवा सीपासै, कन्नासै कय गय बालै ।  
 सब नाज मुकावै, पूष दिखावै, पाछा ठामै बलिपालै ॥  
 इन दिन हो आवै, फूलाय आवै, पीछा ईँका पदमाई ॥पूरब०॥२४॥  
 बिज बचता पावै नाज मुलावै, सन में बीका नहि आवै ।  
 विद्यकासन गावै, मरेज माँटे, लौही पीदै सब आवै ॥  
 घर बीगल नीकल, अंदर पूतल, सब भरकी सुन सुन आई ॥पूरब०॥२५॥  
 घर बल्ल बिजावै, जौ न बटावै, जमां न पावै के दिन में ।  
 जंघी घर राखै, सुँटी कासै, पपरी रंग गमै ब्रिज में ॥  
 पपरी खुं सबही साँटै तबही, पुरसा तमकहुं<sup>२</sup> बल आई ॥पूरब०॥२६॥  
 कति मोटा मोछ, मेछ समेछ बांधा सुँटी घर गावै ।  
 बांला बल आवै, लेख रखावै, राई सरसुं के गावै ॥  
 घर सरदी सेठी, नीचै केठी, सोझा दिन में लग आई ॥पूरब०॥२७॥  
 दुर्गन्ध विछुटै, नाक न सीटै, काछी पाछी फिर आवै ।  
 जौ पछ जमावै राख्य बलावै, जंघी जोखन मिल आवै ॥

सो इण देसे सुं, नही दूजै सुं, बगवन माथी फुरवाई ॥पूरव०॥२५॥  
 इह चौरी नमै, विष्णु परणामै, बोझी बोझी फिर तैरै ।  
 गुप्त मिश्री परझी, कानै सरिझी, पंजी होवै विष्णु देसै ॥  
 नव बाजक भावै, ज्ञानै भावै, फरसै बाजक बरजाई ॥पूरव०॥२६॥  
 रगचूँ क्यो गाहा, भेझी आझी, रक्षै कांटो अठकावै ।  
 नर पीठ बिजारी, कांटो कारी, कोरी दूजी किस आवै ॥  
 अथ इवन (२) केरै, काथीमेरै, कवाळी छांटा तिरकाई ॥पूरव०॥२७॥  
 जे कांमित काहै, केई पामै, पीठ पढ़ावै के सुंदी ।  
 हम निजरे दीठी, जियै न भूटी, देखी अरु निज ही लूंदी ॥  
 औनप विष्णु बीधौ, तप पद सीधौ, बरसबास औ कलिताई ॥पूरव०॥२८॥  
 बर कांटै आवै, सुकवा लवावै, मजै मंजो कटानै ।  
 इह इह हकमावै, चित्ता पचावै आच्छां नै फिर निजजावै ॥  
 बलि होय उठावै, राज करायै इय मजै सजा पाई ॥पूरव०॥२९॥  
 को बोझी चौधै, पीठ निजोवै, भागै भीरुपा आव गई ।  
 होझी नही पावै, कुछ जीमावै, अगपय री री बात किहा ॥  
 अथ नाव जुगाई, पर जीमाई, जात गई को फिर काई ॥पूरव०॥३०॥  
 चोढ़ै में आवै, बैंगी आवै, हलकी में तो संक किही ।  
 ओ ओझी आछां, जिनकी बावां, बह कातां में रीत गही ॥  
 विष्णु के अधिकाई, निजरे आई, सुको कहूँ हूँ समझाई ॥पूरव०॥३१॥  
 पर काझी बैठो, निजरे बीठी, चोर कही कही कुछ तैने ।  
 इह री अधिकाई कही सुवाई, बीझी सुव लौ जो जे न ॥  
 सीरै अधि बीधै, बहली बीधै, रम्यी बांधै न भवजाई ॥पूरव०॥३२॥

पू. ओं ओं जाने सादिव पावै ज्यो बोले सो तुज भाई ।  
 तुजतुल इन चोरी, बाही सोरो बलवत् हमके हैं भाई ॥  
 साखी तब भाखी हमरी साखी, बांखी सीरै बिच भाई ॥पूरब०॥३६॥  
 तस्कर तब भाखै, झूठ न दाखै, हम मानुष दुरमत बाखे ।  
 इन दुरमत कीया, चोरी दीया, हमलौ हैं इनके साखे ॥  
 तब सादिव बोखै, चोर न होखै, तौ तुमरे हैं सदाई ॥पूरब०॥३७॥  
 कोई दुं बोले, इनकी मौले, चोरी करमें को नाडी ।  
 तब सीरै भाय, नार बुलाय, चोरी ने चकचको काडी ॥  
 पंवर खुं धाखी, जाखै खाखी, चोरी बाहर नहि काई ॥पूरब०॥३८॥  
 कोई इक पाटै बातां बाटै, जाय बछाखी न झूठी ।  
 पहिली बुलाय इनके भाय, घर में बैठै फिर बैठौ ॥  
 हम झूठी चोरी, बाह्यं चोरी, औरें झूठी तरकाई ॥पूरब०॥३९॥  
 कहि दुरमत जीना, इनरै दीना, पंच भांखे फिर झूठ ।  
 हम सादिव देखै, सब सह लेखै, बलवत् तुमरा क्या बूझ ॥  
 तब तस्कर हाथै, साहै भाखै, बड़के झूठी पढ़ जाई ॥पूरब०॥४०॥  
 बाजादैं भाखै, चोर बराखै, ज्यवारी नै नू कहिखै ।  
 मांखी सो देखी, फेर न कहिख्या, सौदी लेख्यां सब मिछनै ॥  
 पण्य अविखी लेख्यो, दूखी देख्यो, समझी लेख्यो समझाई ॥पूरब०॥४१॥  
 के चौकैं पादैं पादैं पादैं, नाम लिख्यो दफतर में ।  
 चोरी ओं खाखै, खाखो पावै, खाखो सादिव मिन्दर में ॥  
 कब कोय न चिन्ता, हुआ निचिन्ता, मौखीं मांखीं मन भाई ॥पूरब०॥४२॥  
 बड़ रंगत संगी, अंग पसंगी, रंग तरंग खनु रंगत ।  
 भागीरथ साईं इय दिशिआई, चढ़्यो पाई समंगत ॥

विष्णु नामै करवी, भागीरथी, शिव राखनकी सा माई ॥पूरव०॥४३॥  
 जलधार पकाई, इष्ट निधि काई, के देशन की मल तापी ।  
 गंधीबर सेती, जासा सेती, सारन भांसे को आसी ॥  
 विष्णु कण्ठ अति छोटी, कोछल मोटी, एक कोई मैं न मराई ॥पूरव०॥४४॥  
 सब नीरस छावौ, एक नहीं दावौ दाईं पावौ मैं देखौ ।  
 सब पीकौ कालै, स्वाद न आवै, परछा परछी नै देखौ ॥  
 एक भांवा मनहर, क्वावै, यापुर कासै कोई न विजाई ॥पूरव०॥४५॥  
 जीता नै मारै, मुकदा वारै किछ मुकदा विरजा दीसै ।  
 खुं दीवद पकी, कलि पल मकी, कज्जल शिकरा अति दीसै ।  
 एक चुंवा कारै, इहैं पकरै, निबला पंखी कद जाई ॥पूरव०॥४६॥  
 सब चुंवां मारै, कदर निदरै, सांसाहारै अति रजा ।  
 लंकी मुल बोधर, मानुं कोबर, पल गट कावै चम्पचा ॥  
 आव गिरह ऊहै, विरे न कूहै, भाळी मुकदा मस जाई ॥पूरव०॥४७॥  
 दोन् कट तीरै, नीरै सीरै, मन बबलई फसरई ।  
 किछ परछी आवै, पार न आवै, राखमसेखी खुं गाई ॥  
 खुं देखी नैना, माळी नैना, बर्योन कर नहीं परयाई ॥पूरव०॥४८॥  
 गाछां बिच विन्दर, मोटा सुन्दर, अति अंघा पर आगासी ।  
 तिह बैठा सहिरी सोजी सहिरी, मिश्र मांनुस खुं सुर बासी ॥  
 खैना घर घर घर, मानुं सुरपुर गंगा दशोन कट जाई ॥पूरव०॥४९॥  
 जल नम आकारै, विष्णु परचारै, देव विमानै नलि देवा ।  
 शिव नाथा नाना, देव विमाना, गुरवर सम सहिरी जेवा ।  
 ते वेडिय कगारै, पारै नुगारै, अर सांझ नै देखी ॥पूरव०॥५०॥  
 सेली घर द्वारै, नीका वारै, ऊवर कपण्य पर पसे ।

विम सङ्ग घबेले, अथवा चालै, मूक विमानै कह बेखे ॥  
 इह कोसी जूही, करी हूँसी, ऊँचा विष्णु विष्णु रहि आई ॥पूरब०॥१२॥  
 य सङ्ग परदेसी, नदी इव देसी, आम्बी बंगालै विनहै ।  
 फिर नादी पपरी, माथी गपरी, पवन शिला ब्यूँ पड फरकै ॥  
 मल शिखरुँ गदिखौ, नाच न कदिखौ, एक पोखी री ठकुआई ॥पूरब०॥१२॥  
 भेला जब बेखे, बीखा हीखै, जैसी करभां की माता ।  
 क्या बरी कुमारी, कुहूँ बारी, कारी लुँ ही नर काका ॥  
 क्या सोभा कीजै, बेकसं रोखै, एक बीर्यगुण ॥ कहाई ॥पूरब०॥१३॥  
 कुर्यै कर नारी, बरखन भारी, वन काकल री करन बगौ ।  
 क्या पुरुष नारी, रंगी काली, कृपासी अरु मोर पखौ ॥  
 सो कर्म प्रभायै, इह दिस जारै, को माहि विष्णु सो कोई ॥पूरब०॥१४॥  
 आप आपखौ पाटै, नौका पाटै, के नल मुक्खी विन कबखी ।  
 के बारसिरी, केव कुरखै, के रोखी के मुखमच्छी ॥  
 के बरकपकी, सिहामुक्खी, के पुनवौही निपलाई ॥पूरब०॥१५॥  
 हुय बायू भेला, सङ्ग समेला, विवलय भेला मे आवै ।  
 विजौही नालै, बरकाकाही, बर गंगा जल भर आवै ॥  
 पण पङ्कज जारै, मोटे कर्तै बनै वरमल पसरई ॥पूरब०॥१६॥  
 बेरवा संग आवै, नाच करवै, अति कृपासी के आवै ।  
 वला लउ बेई, बेई बेई, सज बनवै सब संगै ॥  
 अति सीठी गावै, नाच बटावै, बस आवै अप्पर आई ॥पूरब०॥१७॥  
 कुरय अरु नाचय, साबय बीनय, नाचां ऊपर ही होवै ।  
 चंदनि अब झिडकै कौकनि चिटकै, के जानै ज्युँ के खौवै ॥  
 बीलै भोजावै मसरी आवै, संग करै पति पौडाई ॥पूरब०॥१८॥

दिनकर दिन चारै, वाउ बचारै, कौला मान सो सुखी ।  
 बरपद के सनै, जंगे जमै, रसवी रंगै, हस दीखी ॥  
 कौलन दल आसै, रीसै मालै, कौलनि नेना<sup>१</sup> सरि आई ॥पुरा०॥३॥  
 जिह पट्टन नारी, सेअरचारी,<sup>२</sup> करन खेलै कुजबोका ।  
 के नारी बरसै, आरन करसै, ते ठामै रहिसबोका ॥  
 भक्तवर दी जावै, पढ़वै आवै, पिछ पढ़वै में ठगवाई ॥पुरा०॥४॥  
 इक नौका जावै दूकी आवै, कावै इक नै इक सेकी ।  
 के जावै बचावै, आपण आवै, बल करै नर सु केकी ॥  
 सु रहिन भेजा केतो भेजा, म्भारी म्भारा कर जाई ॥पुरा०॥५॥  
 उआणै आवै, माठी आवै, नइया खाखी मित्र गावै ।  
 सहु साखी तासै, बैठा चासै, समनयवाखा भर बचावै ॥  
 लचका भम्मासिया कांका कसिया, भागी सहु सुवे आई ॥पुरा०॥६॥  
 तिरवा नी सोई, जन मन मोई, माहि बैठा सब सहिरी ।  
 जल ऊपर भिन्दर, मोहै सुरवर, मांनु भाखी सुरवपुरी ॥  
 कथा गोमा कीजै, देवसा रीसै, बरघन सु बरघोमाई ॥पुरा०॥७॥  
 बरघाखी आवै नही मरावै, बघलै पाखी बिलारै ।  
 मचांय बचावै तेव रहलै, इक इक नौका पर द्वारै ॥  
 मित्र ऊपर आनी, मित्रसु जावौ, बलि जल मासी बनवाई ॥पुरा०॥८॥  
 नहीं कासी बहा, पावला बहा, मोटी लंडा सु बरसै ।  
 नहि मोर मित्रोरा, दाहुर खोर, पवित्र पिव बिच वी करसै ॥  
 बिन बरसा कासै, क्या मीकासै, जलासै बल बरसाही ॥पुरा०॥९॥  
 सहु कीचड़ मचवै, कथा पिचवै, लचलच बरती लचकावै ।

को मोलै भानै, पांच परावै, कट रट सूखी पस जानै ॥  
 घर मरये मानूँ निगलौ जानूँ, खचतारै कर उपमाई ॥पूरब०॥६६॥  
 सगरी खुं घर पर खुं ऊह ऊपर, नौका चली जन बैठे ।  
 को संक न जानै, सम तिर जानै, घर आयी छिछु मे बैठे ॥  
 डेऊ जव पावै, नीचो जानै, रठि आवै तिर पस जाई ॥पूरब०॥६७॥  
 नौका नूँ जायौ, नौका जायौ, भार पार रौ काम पखौ ।  
 गोदारे बेसे, जन सुविरोधे, डीक न राखै भार कखौ ॥  
 धारा में आवै पखौ खारै, के डूबी के तिरजाई ॥पूरब०॥६८॥  
 लव मौज न काई, जीव करायै, कछा न काई बरि आवै ।  
 हाहा कर ऐवै, सब जन जोवै, कोथ निमलसख नखै ॥  
 कया कानूँ बेटा, जनके छोटा, गंगायाई निमलजाई ॥पूरब०॥६९॥  
 भातै परभातै, खायै रातै, फिर एक रातै के पायौ ।  
 दूसौ दिन जावै, पुचपुच आवै, खायै लुरा खायौ जायौ ॥  
 जब मौज सुयोख्यो, हांस न बीख्यो, मुगली चुरै मिरचाई ॥पूरब०॥७०॥  
 को मौजी बडोया, मौजे चडोया, आवरक कनू भात में ।  
 बीजू नीचोच, खूयै देवै, भाव पल्लव कइ नामै ॥  
 देखा विद्यु आवै, खायै आवै, सूय न खायै एक राई ॥पूरब०॥७१॥  
 इय निद्य निद्य जायौ, भातै जायौ, दास दुसरी अरहर की ।  
 को नून न खायै, मोलै मायै, पेट दुखायै मरहुँ को ॥  
 नकली गही जामै, केतै खामै, डीन्धी कर कथ कूटाई ॥पूरब०॥७२॥  
 को मोलै जायौ, रोटी जायौ, ऊपर आवौ फिर खायौ ।  
 नौ चर पीढ़ावै, ख करायै, नाहि पखानै हँ खायौ ॥  
 दिख कोई न खायै, देख डरावै, सिखी खायां मरजादी ॥पूरब०॥७३॥



सब देश मसेरी, चौदिस बेरी, बिच लाटें भर सो आवै ।  
 जो चौदैं चौदैं, वखन न चौदैं, मच्छर चटका चटकावै ॥  
 सू रमणी आवै, नीर न आवै, दुसमा परगट दरसाई ॥पूरव०॥५॥  
 ए मच्छर छोटा, इन सुं मोटा, अति हांका विख विख देखै ।  
 चूँचां विख सन्धी, हाँक पलम्बी, पन वन झाँदी दम बैसे ॥  
 रैणी जम आई, तब ऊड़ाई चरपर माँहै यस आई ॥पूरव०॥५॥  
 अति शोर मच्छरै, कोक बरावै, बीड़ी आवै के ऊँचा ।  
 के पढ़वै बैसे, चौदैं बैसे, मारैं जम रोड़ पर चूँचा ॥  
 तब साज सुण्यावै बसल जग्यावै, केले मच्छर मरजाई ॥पूरव०॥५॥  
 बरमाठें देखै, म्बारी पैलै ठाम ठाम कन्हीं छूँटी ।  
 क्या सब राती, हरी न पाली मोक्ष बन्ध नहीं अतिकूटी ॥  
 क्या अनुमौ दीडी, तिछैं न मूडी, बीतक करणी बतलाई ॥पूरव०॥५॥  
 विख देश न जूझ, थोपी हुझ, पट देखनां नहीं आवै ।  
 इनसौ इक कारण भासै नारय, सोही विन कुल निवजावै ॥  
 सब रंगै पोछा, संगै सीछा, पुरुष नारी नहि पाई ॥पूरव०॥५॥  
 दासी कहि दाई, बैरवा बाई की करै राँचस साई ।  
 जस छायाँ भासै, पूरी पासै, भीषी दासै बलि बाई ॥  
 देखै कविराजा, बोख मन्त्र, मूँचां कहि संगै पाई ॥पूरव०॥५॥  
 गुरुआ कहि नारी, पर कुँकारी, पनरस भासै पुन्हुँ कुँ ।  
 बहम जे हंडी, मोम्बा रंजो, गाढ़ कहे सब वृद्ध कुँ ॥  
 पागल कहि गहिरै, नहिजो माँहजै, खचै खीदिसु बचलाई ॥पूरव०॥५॥  
 बहिरै कुँ मसजौ, डेलस विरखौ, हाक हाक कुँ बोलवै ।  
 जिह नात्र मर्यावै, गोछो गवै, पाटो साढी खोचवै ॥

उतरलौ पाणी, भाटी पाणी, बहै बजाय सु कहिछाई ॥पूरब०॥८१॥  
 परिधाई नालस, पंचा सालस पक्षुं दूधरा कहि जायै ।  
 हांहाइ बैठका चू काठ का, गमछा कमाछे गावै ॥  
 लज्जा कुं दुरमस, विष्टा इष्टव, वालै सासी कुं ग्याही ॥पूरब०॥८२॥  
 नहि नर आकारी, वृष्टा नारी पुरुषा भावै सहजेनै ।  
 बबुआ कहि छोटे, बाबू मोटे, पुत्र न वालै को जेने ॥  
 बैसय नै थाकी, लायौ होच, इतनी बोली बैछाई ॥पूरब०॥८३॥  
 पति बैठो सोवै, जारो होवै नारो सोवै, आरां सुं ।  
 पति कोष न पालै, बीबी वालै, खोर न जालै दारा सुं ॥  
 का इय ही बैसै, रोति विरोधै, किय ठायै निजरे नाई ॥पूरब०॥८४॥  
 पति नाहि सुहावै, दूजो रकावै, कदाजत नै को नावै ।  
 जो कोई न्यावै, टांगं रगवै, कबहो साहिव हो पावै ॥  
 जोरु की नाकस, जावे साकस, इन बीबी के इमराई ॥पूरब०॥८५॥  
 सुं ग्याव भिरेवै, तिछै न छेदे, बहै न केवै को रंजी ।  
 किय अति मन्दासी, जारें रासी, निरौ न रासी कदा मंकी ॥  
 विष्ट नारी कीथो, जंथो खीची, खीची जंथीनर गाई ॥पूरब०॥८६॥  
 घर पेसे पारै, उछौ बघारै, पीहर लेनी सो नारी ।  
 पीहर मिस सेछे, सागर हुंती जोलै सेलै केवारी ॥  
 नारी संकेतै, घर पीहर तै, बोलायस आई दाई ॥पूरब०॥८७॥  
 भाई जुझाई सेजी आई, हम बहुधाह लेने कुं ।  
 नावै बैसावै, न्यानं न्यावै, बाछो फेरै, न्यानं कुं ॥  
 अब टकी न्यावै, जिहू के जाने, जिहू पर जारै बतलाई ॥पूरब०॥८८॥  
 जिहू रहिनीं रातै, बलि परधातै, पीहर घर में अब आई ।

तुम नांही जुझाई, हमलो आई, मथी हमरू न सुझाई ।  
 पीहर न पिछागै, बलि नहि जायै, जमि निच जारी करि आई ॥ पुरा० ॥ १८ ॥  
 कुहुतिथौ बसति, नारी बसती, नारै पयै सो जायै ।  
 को बखी मोलै, मोहै मोलै, हम तुमरे पर में आवै ॥  
 कइटाई बीनां, कपीनां बीनां, लुटै पर में पस आई ॥ पुरा० ॥ १९ ॥  
 कथा कर बन नारी, जायै जारी, जो इष्ट देखै सुखे रहो ।  
 को राज न सखा, दिखै निखन, मनमानै सो सुखी कही ॥  
 इठ जोरी जारी, लखी नखरी, देखी परगट दरआई ॥ पुरा० ॥ २० ॥  
 इक माट बराबै, दही बराबै, निठ को तै में ते ठाबै ।  
 पिछू पड़ जायै, पांफां जायै, पंखी पंखे लड़ जायै ॥  
 हम बखर पायै, ठाही ठायै आख रही सो बलि आई ॥ पुरा० ॥ २१ ॥  
 सो पायो पीयै, राजी लीयै, जय दुखगंधी बलि कही ।  
 तब मरही जायै, सुख ममायै, किहू बखरी किहू दुखही ॥  
 कही गुंजोरी लुं कबीरी, कही लाखी सुख आई ॥ पुरा० ॥ २२ ॥  
 पुरा बलि रोगी, सुख न सोगी, परगट देखी बैनां लुं ।  
 जो रोग लखीजै, ली बीलीजै, निष्ठ करमा लै बीनां लुं ॥  
 सुदरा जक पीछो, जानू लखी, लकबी रोगें लपलाई ॥ पुरा० ॥ २३ ॥  
 दिनमें लै करके, पवन फल्लै, सिद्ध सररी बन निष्ठ सीजै ।  
 निष्ठ में छोडीजै, दूरी कीजै, पंखी लीजै ठहिरीजै ॥  
 ए बाहिर आई, रहितां आई, अन्तर नहि समझाई ॥ पुरा० ॥ २४ ॥  
 निष्ठ पून लमीजै, सिर पकड़ोवै, पट पूनै बन पस जारी ।  
 जो निखरी विरीका, पट जल भरियां, जाय डलियां कथा जारी ॥  
 नुं निष्ठ कुपायै, लड़क जायै, मूच्छी कर भर पड़वाई ॥ पुरा० ॥ २५ ॥

खुं भूँ बीबी, खुं ही बीबी, बरख न जायौ बलि बाँते ।  
 पिछ ते अविच्छाई, दिन में पाई, औ बानीयै दिन रातै ॥  
 तिय इक अविच्छाई, काँते पाई, जन पाखी नारी आई ॥पूरब०॥१५॥  
 सुता नही रातै खुं परचाँते, ऊम्यौ जाम्यौ निख काँते ।  
 पाखी औ पीरै, मरै न जीवै, तिय रोमी हौ कान्हाँ ॥  
 ककड़ी बेला, भिरनै बेला, निदसविह्व बच जाई ॥पूरब०॥१६॥  
 के सोर दुसैरी, बेली देरी, औ पल्ल सेर्य के केई ।  
 के सावा भाटा, शिथिला भाटा, बनरा सतरा केतेई ॥  
 आपमखीपा केले, मलमर तेरै, के हो मज्जिया आहुई ॥पूरब०॥१७॥  
 के लंब चठायै, ककिया जायै, जाकर पकड़ै के आगे ।  
 तब पीछे चालै, नही नहिं हालै, चकवा वीसै नू मारै ॥  
 इन तब कक बकवा, पटका पटका, टाँग बरै दहियु बाँई ॥पूरब०॥१८॥  
 लम्बा के रछा, सोझ गिरछा, के लटकछा के ऊँचा ।  
 के जाँचा ताह गोछा माँई, पीक्याँ पाँई, केनीचा ॥  
 कोई जब बैठे, पोता बैठे, पर तिय ऊपर बैसाई ॥पूरब०॥१९॥  
 केइ बैसता, सास भरत, मुल आगै पोता मेले ।  
 बासक जब आवै, बेसी पावै, चढ़ कर कुँदै के लेले ॥  
 के हाटै आवै, बही भरवै, लेखो माँई सरमाई ॥पूरब०॥२०॥  
 को बीजें पदलौ, पानां प्रभुऔ पील पाँत तिय रोमी को ।  
 नामे कर बोझै, गल पथ सोलै, पाँन दुनै सब कोई की ॥  
 क्या कोई पन भर, क्या निर्वन भर, खु नारी निख का कोई ॥पूरब०॥२१॥  
 नू कोई हावै, बाँदा आवै, लंबा मावै गल फूलै ।  
 के हाथी पैरै लुंही मोरै, पेहु आवै लूँ कुँले ॥

स्रुं जांथा आवै, होचस आवै, जल सभ अर्गै सवराई ॥पुरा०॥१०४॥  
 न्युं मर ल्युं नारै एक विचारै, सब अर्गै जल सभ होई ।  
 भिछ गूर्मै खीरै, जल न किछीर रुखा खोटी क्या कोई ॥  
 नर एक जराई, पोतै चाई, खीर नही को खोटाई ॥पुरा०॥१०५॥  
 कभिराखा आवै, जाइ दिखायै, सरसुं सरसी हज गोली ।  
 देखता बैसी, पच स्रुं लेखी, जान पाव नहि पच देखी ॥  
 एक दूध पितावै, दूध लिखावै, दूध बकी विख कहिलाई ॥पुरा०॥१०६॥  
 पाखी नहि पावे, लूख न लावै, दूधे भावै न्युं पावै ।  
 स्रुं सेर दुसेरी, बकी दुसेरी, के दूध हुँकी पच जावै ॥  
 जे दूधे बइसी, रोमै पटसी दूध बई, विख मर जाई ॥पुरा०॥१०७॥  
 इक दूध बकी मिम, रही बकी इम, इच्छा बटिका विम येसै ।  
 बिबचरै कमावै, गुटी कमावै, जहिर भिलावै फिर तेसै ॥  
 कंठे कप्त आवै, लीलुं सावै, मर जावै के पच जाई ॥पुरा०॥१०८॥  
 लीलुं ही नावै, ल्युं परियावै, इच्छा बटिका जे भाखी ।  
 ठिख अचछा आवै, खोई आवै, इच्छा बटिका ठिख दाखी ॥  
 सब शोष कतारै, अंग समारै, बिगरे बेही विवराई ॥पुरा०॥१०९॥  
 इक तेल कटावै, भाग कटावै, अति उकाली सब आवै ।  
 तब अशुरी दीजै, जलै न बीजै, फरसै शीजल फरसावै ॥  
 स्रुं फेती जावै, न्यारी जावै, फल तेल सब कहिलाई ॥पुरा०॥११०॥  
 किलाकर्तै कानो, लूखी पाखी, लूनी वायु फिरपावै ।  
 ठिख तेल लगानै, के मरदानै, कीवै जावै सब जावै ॥  
 लो पाक न पावै, सरसुं लखावै, तेल बिना को न रदाई ॥पुरा०॥१११॥  
 इक नाकै पोखी, दोनै खोड़ी, नवसाहर की नास दिखै ।

पञ्चा करवावै, दिन दो जावै नीजै दिन कछु नाज सिधै ॥  
 जो अजर न जाई, सो बिबनाइ, जाव आरोगै सुख पाई ॥पूरब०॥११२॥  
 इह बसै बेरी, सोलै केरी, नामै चूगै बोलायै ।  
 ते व्याकथ्य रह्यै, हार्यै सासै सोलै त्रिपुल्लु पथ पावै ॥  
 पथ सब घर देवै, फिरती लेवै, मच्छी चूगै भरलाई ॥पूरब०॥११३॥  
 इह सिखा करै, मिट्टी सारै, बैठक साँदेसो कुटै ।  
 हुष ऊची टेवी, बेसी डेवी, पकी पका कर सुं कुटै ॥  
 पट काहो आवै, पेट मक्कायै, विरह मदिनन मज न मज्जाई ॥पूर०॥११४॥  
 बिबनर आराधै, मंजै साधै, देवी सुपसन वै वासी ।  
 पञ्चासिल मेधा, गैडा बीधा, माजे सीधा सिख टापी ॥  
 त्रिपु जंगल आवै तिहां रह्यौ व्याचरी संगै रखाई ॥पूरब०॥११५॥  
 देवी परमासी, सोनु पासी, कार करी त्रिपु बीज रई ।  
 आदिर फा पारै, नैका मारै, माई रहियं बनु न कइ ॥  
 जग जाल सुभायै, फिरचर आवै, बेही पर मज परठाई ॥पूरब०॥११६॥  
 मज सुपन बिरियां, काक भरियां, मारै मोली मज पारै ।  
 तब आंछां बेधै, एतै लेवै, ओदेही नैका मारै ॥  
 आब पान कडाई, डाल बसाई, सिखाइत रगै रंगाई ॥पूरब०॥११७॥  
 सट रेसम जावै, सुख लिखावै, मछती पावै पर मंजै ।  
 घर माहि पैठै, त्रिपु मै बैठै, पकके पर सब तब खंडै ॥  
 त्रिपु सेवी पद्विनी, पापी मेनी, ऊकायै जग लकड़ाई ॥पूरब०॥११८॥  
 जम रेसम पालै, फिर ऊवाली, सीधै जम तब परसी वै ।  
 तारै विहगावै, चरख फिगवै, सबसु पटावै त्रिपुही वै ॥  
 सुं बीडक कोवै, रेसम होवै, जीसी सट कल सीजई ॥पूरब०॥११९॥

काटी कम जायै, काय न जायै, कोयो निकसी कहिलायै ।  
 जीतां सीजायै, कायें जायै, मूँची सो बायै जायै ॥  
 अति दुष्ट कमाली, करै सदाई, निरखी बैसा दिखलाई ॥पूरब०॥१२०॥  
 जम के लटकायै, केते ल्यायै, जान पाव कर सीजायै ।  
 सब कुं लूकायै, केर जलायै, नखनी पाखी सीजायै ॥  
 पाखी बतारै, कपटौ करै, अब ककरो ककरोई ॥पूरब०॥१२१॥  
 जो अरु दुगली, ठामे पाली, कपटौ बाखी ककरोई ।  
 पुं मत छोड़ायै, कांटे जायै, पोई कपटौ लजवायै ॥  
 छो निर्धन होयै, इस विध होयै, बन भर रजकै पोलायै ॥पू० ॥१२२॥  
 जो सावण होयै, सावण होयै, करवी नूची मेलायै ।  
 अब भाग चढ़ाई, अति बीटाई, सावण किरिया बतलाई ॥  
 जो इज्य दुगंभी बज्र सुगंभी, होयै कैसे कहिलायै ॥पूरब०॥१२३॥  
 बनराय बलाखूँ, नाम न जाखूँ, दीठा तक जे इय बैसो ।  
 जे किछु न दीसै, किरिया दीसै, ते इय देखौ सुधिरीये ॥  
 पय पंखी माका, बुड़ा बाका, सरस सुरे नम पूराई ॥पूरब०॥१२४॥  
 रीसै बिबराका, मादी बाका, मन माका खुं तनु काका ।  
 किरिया ईकाका, ठोँ न टाका, मन्दाका खुं मन्दाका ॥  
 जंगल में दीसै, मरिया रीसै, बक पीसै माखुज बाई ॥पूरब०॥१२५॥  
 खुं ही सुंकाका, खुं पूंकाका, नूंकाका अति मन्दाका ।  
 बस बंकाका बाका, बीकाकाका, दे आकाका दाकाका ॥  
 गज कुंम विहरै, गैरा मारै, माकाका री नय अकिहाई ॥पूरब०॥१२६॥  
 गैरा फिर नूँही, अरु खुंही, ठोँ ठोँ फिर पीका ।  
 मिनी में बैसै, माकाका दीसै, पकड़ै रीस सुबदीवा ॥

मानुज कुं मारै, पेह निहारै, भूख सावन भल जाई ॥पूरब०॥१२७॥  
 देखै अति ऊँही, सोचै लुँही, सोचै मूँही नही हवा ।  
 पर कीर न आवै, हुनन जावै, बढ़िया मायै नवा दवा ॥  
 चारै अति नखीचौ, जाय न सुधिचौ इत्यै कमखा बढ़िबाई ॥पू०॥१२८॥  
 बस्यै अति भोच्यौ, देश न सुच्यौ, कोनी कानिह सुं मिसली ।  
 कर्षै अति निबझौ, पुरुष न सबली, दिसा नारक सुं मिसली ॥  
 आचारै बजज, चहयै बजज, अजज पांति नही आवै ॥पूरब०॥१२९॥  
 देहै अति दुखजो, सुखी सुखजो, पुत्रे सुखजो को दीसै ।  
 बसली अति बहुली, लंकी बहुली, सब पर बाढी ज्युं दीसै ॥  
 म्यानां कइलदिया, अग्ये सुखिया, पर पर दीसै न नवाई ॥पू०॥१३०॥  
 ओ ओभी होचै, पूरव जावै, जात्रा चाहै सो जावै ।  
 हीचै अति बाह, दगान साह, जम्मन्तर जिन फरसावै ॥  
 आवय नाकारौ, रोमै सारौ और रीत दिस दिखसाई । पू०॥१३१॥  
 निघा नही कीची, सबही सीची दोटी जेसे ज्युं बगै ।  
 लुं ही मैं भाजी, काय न राजी, मूठ न दासी इक अगै ॥  
 जनपद दिन देख्यो, तिथौ न पेर्यौ, साध मूठ लिय फरसाई ॥पू०॥१३२॥

॥ कलस ॥

चण्डू चण्डू कवा कलू कलौ मैं बिचित्र बोई ।  
 सब दीठी सब लहै, देख दोठी नहि ओई ॥  
 जग्यो जेली बात तिती, मैं प्रगट बलाछी ।  
 मूठी कम नही कबी, कही है साध कहाणो ॥  
 पिण्डरहिंसह इक वात नौ, उन सुख चाहै देहधर ।  
 नारय परी कल कथा पदुर, रहै नही सो सुधर नर ॥१३३॥

॥ इति पूरब देश शब्द सम्पूर्णम् ॥

सं० १८७३ ई मिस्री माघ शुक्ल द्वादश्यां तिथौ राक्षसारे ।





खंड मही कही सोव मे, कहे खंड के खेद ।

माथी खन की पाछ पर, साख खंड के मेद ॥ ३ ॥

बदन भेद है पाछ के, गिरी खंड बिच्छेद ।

ताख खंड की योजना, बड़े खेद प्रतिखेद ॥ १० ॥

खन खंड के पाछ के, मेद प्रमेद सिखन ।

गहन कठिन कुं पाछ के, देव माय कलकल ॥ ११ ॥

पाँव छोरे खंड के, कलकल करे सुख ।

गद्य कहर सत पाछ कति, सोभो सफल विबुद्ध ॥ १२ ॥

पाछ कलकल बिन खंड कुं, कैसे हू न कहाय ।

पाछ खंड हैं खंड की, पाछ खंड हो जाय ॥ १३ ॥

बिन पाँव खन खंड सुं, पाछ कही नहीं जाय ।

पाछ कलकल बिद पय खंड, दिख<sup>१</sup> माथी कलकल ॥ १४ ॥

खंड पर बिद यति करी, पाछ मान संकेत ।

हीमाधिक कति करति गति, भंग होत इन होत ॥ १५ ॥

अपके परिभाष की, भाष्यी साख अभाव ।

हाथ खंडकी आरखी, बिद कलकल सदाचार ॥ १६ ॥

पिछक दधि खीरोपि सख, खंड मेद कलकल ।

सधु कीरप हूँ<sup>२</sup> पाछ कलकल बिनरन कलकल बिचार ॥ १७ ॥

हिमकी कलाचन्द्र की भंडार गति—स्वान्न अज्ञात

कति गुप्त सिद्धि मनकल मेदि गुप्त सत आदि लक्ष्मी:

को गुप्त मनोमन्य सदाखी व गुप्त: विहीन खंडन गुप्त ॥

अथ लघु अक्षर लक्ष्य वर्णनम् यथा:—

लघु अक्षर इ स ते मिले, त्यो इक्षर मिल जाय ।

पुन च ऋ लृ सु रइस मिले, पांचू लघु कहिवाय ॥ १८ ॥

अथ गुरु अक्षर लक्ष्य वर्णनम् यथा:—

आ ई ऊ ए इस मिले, ये लो बहुर मिताय ।

औ कं खः इस कूं मिले, ए नव गुरु कहिवाय ॥ १९ ॥

संयोगी की कादि में, जो लघु अक्षर होय ।

लाहूं ही गुरु जाय के, माया मिथीवै होय ॥ २० ॥

एह भावै अंतै गुरु, तैसे ही लघु होय ।

क्षेपविह माया चहै, लघु गुरु मानौ सोय ॥ २१ ॥

अथ आठ गण लक्ष्य मान वर्णनम् यथा:—(छोटक संस्कारकाल)

मगरीं गुरु तीन मन्थ करै, गुरु एक गुरे लघु होय चहै ।

अगरीं लघु दो अरु मन्थ गुरु, सगरीं लघु हो पुन अंत गुरु ॥ २२ ॥

लघु तीन अहां नगरीं अक्षरि, लघु एक गुरे कायै दुखियै ।

गुरु दो लघु मन्थ गरीं रगरीं, गुरु दो लघु अंत करौ व गरीं ॥ २३ ॥

अथ गण अगण कल अकल वर्णनम् यथा:—(पुन:छोटक संस्कार)

कलमी मगरीं लस हो मगरीं, कल में जगरीं समझेय मगरीं ।

गुरु आलु करै, वगरीं नगरीं, वगरीं बिनवै रगरीं वगरीं ॥ २४ ॥

## ॥ दोहरा छंद ॥

रूपक के आदौ न कर, दाया अक्षर पाठ ।

इ न प र य न स न र प्रगट, पुरख गाँदे पाठ ॥ २५ ॥

अथ प्रथम अमश गद्य सुं सारंगी (इकताल) छंद लक्ष्य यथाः—  
आदौ आठौ कर्णौ जालौ, काँसे दूजो कीजै है ।

पाँदे पाँदे पत्तौ बीरग, कण्ठे को ना कीजै है ॥

बीजो कोई जायो भेदा, सो ली इत में गाँधी है ।

पाँचे मन्था सारंगी जे, माधवी पूर्ण गाँधी है ॥ २६ ॥

अथ द्वितीय अमश गद्य सुं दोषक (इकताल) छंदलक्ष्य यथाः—

ब्याह भगन्न बनाय क आनहु सोखहु मात परै पद ठानहु ।

अंक विचार करौ गिन बारहु, लक्ष्य दोषक छंद बचारहु ॥ २७ ॥

अथ तृतीय अमश गद्य सुं बीड़ीदास (इकताल) नाय छंदलक्ष्य यथाः—

परै पद वेद भगन्न मित्राय, करौ इस हो गिन अंक बनाय ।

बनायत पुरख सोखहु मात, कही इह कोविन्दनाम सुनात ॥ २८ ॥

अथ चतुर्थ अमश गद्य सुं छोटक नाय छंदलक्ष्य यथाः—

गद्य वेद अवेद अगद्य करै, पद में इस हो गिन अंक करै ।

सब बीकस मद्य अभिन्न गही, कहि नारय छोटक छंद कही ॥ २९ ॥

अथ पंचम जगदी सुं कुरुल नयन<sup>१</sup> नाम ब्रह्म लक्षण वर्णन कथाः—

मति गति सकृति अति करहु, जगज्ज जग विज जगुर बहू ।

बरबहुदस लघु बहू बर, कुरुल नयन इन पर कर ॥ ३० ॥

अथ षष्ठम जगद्य गद्य सुं सुर्जगप्रयाति(इकताल)नाम ब्रह्म लक्षण कथाः—

परी प्यार यगल की साव बीजे, मली बीज मला सबे डीर होजे ।

बही पूर्व में भेद साक्षात्किया है, मली रात्र ब्रह्म सुर्जगप्रया है ॥ ३१ ॥

अथ सप्तम जगद्य गद्य सुं कामिनी मोहन(इकताल)ब्रह्म नाम लक्षण कथाः

वेद रमान्न की लेख यार्ने करे, बीज मला परे सबे जाहे परे ।

पूर्व काशी इसी भावसे जोनिये, कामिनी मोहनो ब्रह्म की बीजिये ॥ ३२ ॥

अथ अष्टम जगद्य गद्य सुं मैनावली(इकताल)नाम ब्रह्म लक्षण वर्णन कथाः—

ठाये कहाँ वेद रमान्न कुं जाय, बीज मली मला मेली करे प्याय ।

भाभी इसी पूर्व में केवली सांच, मैनावली मलय को ब्रह्म की जाय ॥ ३३ ॥

अथ लघु गुरु सम्बन्धित नाराय (इकताल) ब्रह्म लक्षण वर्णन कथाः—

सकृति मति गति अति बीज जग हू कला ।

मिखाय के लु बीजिये लु अंक सोखहु मला ॥

इकेक अंक अंकरी कहु गुरु प्रमानिये,

बही लु पूर्व बीज में नाराय ब्रह्म जानिये ॥ ३४ ॥

अथ लघु गुरु सम्बन्धित प्रसाधका छंद लघुश्च वर्णनम् यथाः—

तु एक एक अँदरे, लहू गुरु कहु (५) करै ।

कहा तु बारहो गहरे, प्रसाध काय सो करै ॥३२॥

अथ गुरुलघु सम्बन्धित वल्लिका नाम छंद लघुश्च वर्णनम् यथाः—

आठ अँक हू निधाय, दीहू भी लघु निधाय ।

पूर्व छक्ति मुक्ति नाम, वल्लिकाय सो बखान ॥३३॥

अथ कमल नाम छंद लघुश्च वर्णनम् यथाः—

पहिल कमलै छियै, सुविष समर्थै छियै ।

भिर लहू गुरु छियै, कमल कहि दीछियै ॥३४॥

अथ यमरा सु'अह' बुजंगी संख नारी नाम छंद लघुश्च यथाः—

भरी दोष गनै, गुनै चिन्ता चिन्ता । इसी नच सारी मयौ संख नारी ॥३५॥

अथ अह' कोठीदाय बाली' नाम छंद लघुश्च वर्णनम् यथाः—

होए— सगव दोष कर एक कर, पैसो पद कर बार ।

बच आठ एक एक मै, बालि छंद निहार ॥३६॥

प्रसन्न होय कहो बहू मोहि । कबै निरवार करौ अच' पार ॥३७॥

अथ प्रथम लघुश्च गुरु सु'अह' तोटक लिङ्गका नाम छंद लघुश्च यथाः

होए— सगव दोष सबमै करै, पद अँके पद होय ।

बच आठ एक एक मै, लिङ्गका नामै सोय ॥३८॥

करुणा करिये, मुदि उपरिये । बिमली कहिहुँ कबहुँ सिद्ध ॥४२॥

अथ रामस मख सु'अहुँ' कौपनी सोहन विमोहा छंद लखस यथाः

बोहा सोरठा— रामन करो इह बोह, फट फट भ'के बर करौ ।

माया कस दस होय, नाम विमोहा छंद की ॥४३॥

संकटे बारिये, कौमहुँ' बारिये । कलजी कस कह', बाध की की सिद्ध ॥४४॥

अथ सोहनी नाम छंद लखस वर्णनम् यथाः—

करहु मयन मय बार, दूसरे आठ ।

सोहनी नाम कहिये पुरवै आठ ॥४५॥

अथ परकट माता नाम छंद लखस वर्णनम् यथाः—

बहिले कीजे म्बार, दूसरे बार कीजे ।

परकट माता नाम, ऐसे हो कस कीजे ॥४६॥

अथ दोहा छंद नाम लखस वर्णनम् यथाः—

बहिले पद तेरे करौ, दूसरी इक दस बार ।

कीजे फिर तेरे पारी, दोहा छंद कहात ॥४७॥

तुम बिन मोसे पतिव की, काज रास है कौन ।

मोक्ष जान की हर सकै, बिन मलबाचक पौन ॥४८॥

अथ सोरठा नाम छंद लखस वर्णनम् यथाः—

बहिले पद इम्बार, दूसरे तेरे बार बार ।

कीजे इक दस बार, चौथे तेरे सोरठा ॥४९॥

अति ही पिच अदात, गौड़ी बौड़ी जे कहे ।

आमै हृन्ना निवास, तिहां अदासी दू' बर ॥५०॥

सोरठा मेवः— कहिले कीजै म्यार, तेरै म्यारै दुखिय पव ।

बीरै माया म्यार, सोकी— । ॥२६॥

सोरठा सोरो— कसया निम करजार, जग समझी जंनै सुखस ।

कर सके लो वार, नही तौ सों— । ॥२७॥

अथ गादा छंद सचय वर्णनम् यथाः—

आरै हो दस कीजै, अठारह करह दूजै तीजै ।

बहु नव बीरै गारै, पुष्पै गादा मायवौ नाम ॥२८॥

अथ इत्याहा नाम छंद सचय वर्णनम् यथाः—

अठ सात कला बिसनै करय, समझी इय दस मान ।

मयै पूषं कवि नारय सुनहु, इत्याहा पहिचान ॥२९॥

अथ पुष्टिका नाम छंद सचय वर्णनम् यथाः—

कहिले न तरे भरै, दूजै मे सोलै कर कीजै ।

सर्व पुष्टिका कर की, गिन अठारह मत कर बीजै ॥ ३०॥

अथ बीराई नाम छंद सचय वर्णनम् यथाः—

पुर अठ मया फिर कर सात, सब नव माहिं पनरै जात ।

अठ सग मया कति बिति करी, छंद बीराई देखै करो ॥३१॥

अथ अडिछ नाम छंद सचय वर्णनम् यथाः—

दीमाधिक अकर नव कीजै, पै कट दस मया गिन कीजै ।

अधु दीरघ की निमय न करियै, ऐसै छंद अडिछनै करियै ॥३२॥



अथ तोपर छंद नाम छंद लक्ष्य वर्णनम् यथा:—

करियै समन्वित अथ, वक्ति" हो जन्मम् विद्याय ।

यद् तीन अंक गियोह, कहि छंद तोपर यह ॥३८॥

अथ मधु भार छंद लक्ष्य वर्णनम् यथा:—

सौरडा:— कर पुर मया प्यार, एक सगल जानै परी ।

जो लक्ष्य मधु भार, पार करी कवि कति मति ॥३९॥

कहि हुं पुकार, मुहि तार वार । सुनिये जियेरा, सेकि सुरेरा ॥४०॥

अथ बिजोहा छंद लक्ष्य वर्णनम् यथा:—

मगलै बीजियै, दोष हो बीजियै । गुंगयै जोर है, सो बिजोहा कहै ॥४१॥

अथ हरिषद् नाम छंद लक्ष्य वर्णनम् यथा:—

सोरह मया मथन कीजै, मारै कीजै जान ।

बहार एक बोही कर कीजै सो हरिषद् पहिचान ॥४२॥

अथ ललित पद नाम छंद लक्ष्य वर्णनम् यथा:—

सोरह मया भार्ये कीजै, दूधे वारै जानै ।

यही ललित नहि ललित पद नाम, छंदै पुरै बखानै ॥४३॥

अथ अतुलना छंद लक्ष्य वर्णनम् यथा:—

बाद क्यारी सगल सिखायै, हो गुरु जानै कहु चर जायै ।

अंत गुरु हो फिर कर कीजै, नू अतुलना सगल बहीजै ॥४४॥

अथ हाकल छंद लक्ष्य कर्त्तव्यम् यथा: —

इतमें मत भीरुस मेछ, पैसे क्यार पर पर मेछ ।  
जो जव एक पद्य जत दोष, तिरपै सम्यक् हाकल होय ॥६४॥

अथ चित्रपदा नाम छंद लक्ष्य कर्त्तव्यम् यथा: —

दोष भगवत् करीजै, ज्यो गुरु वो पर होजै ।  
पूर्व कला रचि<sup>२</sup> नामें, चित्र पदा कहि नामें ॥६५॥  
कथा कहिये तुम ही सुं, सुं सब जान्य सबे सुं ।  
हो कुरुखानिधि तारी, सो भव पर तारी ॥६६॥

अथ पद्मगम नाम छंद लक्ष्य कर्त्तव्यम् यथा: —

पहिलै कर प्रसार, और दमहू चरी ।  
परमें मत दुखीस, राग्य ज<sup>३</sup>ते करी ॥  
पर कवि पर मति कलि, मरम कति को नई ।  
छंद पद्मगम नाम, तारख दसो करी ॥६७॥

अथ रसावलि नाम छंद लक्ष्य कर्त्तव्यम् यथा: —

करिये एक दस आवि, बहुत दस तीन विद्याये ।  
सब मत्ता भीरीस, ज्यो का मेछ विद्याये ॥  
जति मति कर संसार, जय कहि छंद रसावलि ।  
इह लक्ष्य पूर्वोक्ति, सुगति भीठी कवि को सुख ॥६८॥

अथ पद्मकी नाम छंद सप्तम वर्णनम् यथाः—

अठ दोष भेद कर अति दिशाय । पुनि पंच एक घर पद मिलाय ॥  
संज्ञे मत भले, अगम होय । कई पूर्व पद्मकी छंद सोय ॥५०॥

अथ दुर्वाद्या नाम छंद सप्तम वर्णनम् यथाः—

करिये मत आव सूं सीछे, दूखे हो दस भेछे ।  
बीसक आठ एक घर बीछे, ऐसे पचार्य भेछे ॥  
दोष एक अंक घर अंते, अकर नियमन भेछे ।  
यही छंद भी नाम दुर्वाद्या, पूरब मोहि कहिये ॥५१॥

अथ संकर नाम छंद सप्तम वर्णनम् यथाः—

घर आदि की अति मय सीछे, दूसरे दस फेर ।  
इस परे बीस रु पट करिये, अंत गुरु छद्द डेर ॥  
ऐसे कछायी पचार यह छंद, लखो कवय्य घर ।  
सूं कई नारय पूर्व सेवी, छंद संकर सार ॥५२॥

अथ विमंजी नाम छंद सप्तम वर्णनम् यथाः—

पुरतै घर दस की दूखी अठ की, पुनि दो घर की कर तीखी ।  
बीसी अति करिये पट मत भरिये, इन अलुसरिये सय बीखी ।  
दस करिये तिरुया फिर हो भरया, ऐसैं करया यह संगी ।  
पूरब में गायी कवय्य पावो, छंद कहावो विमंजी ॥५३॥

अथ इन्द्रपट्टनाभ छंद सप्तम वर्णनम् यथा:—

पक्षिजै बस दो इक करै, बस दूजै दोजै ।

इस सप्तम सूँ इन्द्रपट्ट, नारय कहि कीजै ॥५४॥

अथ भरइटा नाभ छंद सप्तम वर्णनम् यथा:—

दुर तैं बस कीजै अठ पर कीजै, नीजै इक बस ठाम ।

गुरुजीसूँ मया सब संजुषा, अंत गुरु कहूँ धाम ॥

पद मय जुगु लावै बरव ववावै, बलि<sup>१०</sup> बलि कर बिसराम ।

नारय कहि करिये पाछ बचरियै, छंद भरइटा नाभ ॥५५॥

अथ लीलावती नाभ छंद सप्तम वर्णनम् यथा —

दुर तैं बलि एक भरै अठारै, दूजो पद सब फेर करै

कब है बलीस कछा इक पद में, औसैं जगहं मांहि परै ॥

इनमें लड़ी गिरवत अंक की गत्य की, एक गुरु गुरु अंत गहै ॥

कहय प म्छंन्यो पूर्ण भाष्यो, ली लीलावति छंद कहै ॥५६॥

अथ बीमावती नाभ छंद सप्तम वर्णनम् यथा:—

दुरती विरत लोक की कीजै, दूजो लोक इसी पर लीजै ।

सब बलीस कछा बालीजै, औं जगहं सम राखीजै ।

अवर गत्य की गिरवत न मानै, अंत दो गुरु सिद्धि कै न्यावै ॥

कहि नारय द पूर्वे गावै, श्री श्रीमानति छंद कदावै ॥ ५७ ॥

अथ गीया नाम छंद सचस्य वर्णनम् यथा:—

पुर सोलै कीजै एक बति में, फेर दो दस भेजियै ।

कह जाठ बीसुं मात बर<sup>१</sup> पदै, कबार देखै भेजियै ॥

नहि जहु गुरु का भेद इनमें, रगस्य अंते राखियै ।

मैं कहूँ पूरव कथन सेतो, छंद गीया याखियै ॥ ५८ ॥

अथ पैकी नाम छंद सचस्य वर्णनम् यथा:—

इक दस दो चुरै बरियै, ज्यों पया दस संकल कीजियै ।

न गुरु जहु का भेद यामें, सब जाठ बीस भर कीजियै ॥

अंक गियाही न इसी में, इक रगस्य अंते बसायियै ॥

पूर्व एक की जुगल सुं चौ, जंदै पैकी जाखियै ॥ ५९ ॥

अथ रुहू छंद सचस्य वर्णनम् यथा:—

मथन्य बनरे मात कीजै, पछादस दूसरे, तीजै आठ सग भर कीजै ।

चौथे कर दस एक, चौष्ट वण पांचमें दीजै ॥

राधा सगसठ सच कहि, बांझै पूरव नाम ।

जब यामें दोहा मिलै, रुहू छंद कहि नाम ॥ ६० ॥

अथ कुंडलिन्या नाभं छंदं लक्षयं वर्णनम् यथाः—

आदौ दोहा छंद कर, रोहक आगें देय ।  
 चौबी आगु करे त्रिको, सो दो बेर कहेय ॥  
 सो दो बेर कहेय, पाय पय एक करीजे ।  
 एक तुक में चौबीस कला मिय मिय भेकीजे ॥  
 साकौ लक्षण यह, पूर्व के मत संकड़े ।  
 इस कुंडलिन्या नाभ, मिले तुक अतै आदौ ॥ ५१ ॥

अथ कुंडलिन्या छंद, मुनि स्तुतिर्यथाः—

वंशी अरु मुनि बनन की, रीत एक नहि सोय ।  
 वे फिर फिर बेबी चुनै, फिरे गोचरी सोय ॥  
 फिरे गोचरी सोय, रात दिन कब में वासा ।  
 एक दिवस जगु विराज, कहे लंद पंच प्रभासा ॥  
 पुन निहयै नही रहै, ऊठजे जिस निज मंडली ।  
 कहे नारद कवि मंडि, मुनी जे आठव कंठी ॥ ५२ ॥

अथ कुंडलिनी छंद लक्षयं वर्णनम् यथाः—

बिसर्ग करै पण बीजे अठार पंच दस चौबै रोहक आगें दीजे ।  
 मर्यै पूर्व कुंडलनी छंद ए कुंडलनी छंद परं द्वै बेर भग्योजे ॥  
 इसौ तोपन मात सबै पर में कर दीजे ॥

और नहीं कहूँ भेद, अंत आर्यें तुम इसमें ।

जिसे रही है रहिस, पदम ते गाथा जिसमें ॥ ८३ ॥

आय रंगिका नाम छंद लघुया वर्णनम् यथाः—

आठ दो बीसै प्रथम साथ, दूजै में आठ मिथाय ।

तीसौ आठ पट कर चकत विचार ॥

बोली कवि <sup>१२</sup> समस कच्छन, सोई आधु विचच्छन पूर्व कथन प्रमाण,  
करी ऐसैं चकार ॥

और अन्य की गिरुत नाहि, लोही मात कीठ <sup>१३</sup> ठाहि,

वरन <sup>१४</sup> बरबरीस एक तुक बार अतैं तुक अक कहुँ पर और नाहि भेद छि  
ऐसी बात रही छंद रंगिका चकार ॥ ८४ ॥

आय रंगी नाम छंद लघुया वर्णनम् यथाः—

पहिले बी पांच जानिये, दूजै सात ठाहिये,

तीसै दसै आठिये अत पांच है ।

वरन अठानीस करी, दूँ चकार तुक भरै,

साकी बात बी करी या सुगत है ।

कहुँ तुक अंत राखिये, कछकली माखिये, मति छंद राखिये या चकत है ।

तुम कहुँ गिरुत नाहि, को जानकी सरी,

पूर्व माहि एक ही रंगिनी करै ॥ ८५ ॥

**अथ पनाचर नाम छंद सप्तम वर्णनम् यथाः—**

धुर तें सवार कर भरी बरन सोइस आवैं आनौ भरी आठ केर सात शीजियै  
सर्वे इजतीस को प्रमाण जान एके पद,  
देखे मति कहति तें प्यार पाहु कोइजियै ॥  
बानी सधु हीरप खुं गया मय भेद नाहि  
अंत मांझि दोय सोय कहु गुरु कहियै ।  
भेद भेद पूर्व देख, कछो ' लो अरोप लेख  
नारय कहत पाहु पनाचरी कहियै ॥ ५६ ॥

**अथ दुर्पक्षा छंद नाम सप्तम वर्णनम् यथाः—**

धर आठ सगल मिखाय भरी, पद भेद कही कवि जान करौ ।  
इस पद तुर्कें सब अंक बनावहु, बीस क बार विचार धरौ ॥  
इसमें कहु और कहै नहि भेद, कछा सुय लीस नहीं विसरौ ।  
कहि नारय मज्य सुनी इस जाइति, दुर्पक्ष छंद सही बचरौ ॥ ५७ ॥

**अथ सत्तगपंद छंद सप्तम वर्णनम् यथाः—**

आद गुरुय भगमन करै, सग एक पदैं गुरु दो फिर दोजै ।  
लीन क बीस मिखावहु अचर, सात बचीस सबै गिन कीजै ॥  
सत्तजन भान सुमान बनाहु, भेद इसी इन खुं समझोवै ।



अस परगल आकल नारक, मय मयदद ज्ञान कहीनै ॥ ५८ ॥

**अथ कदला नाम छंद सप्तम्य वर्णनम् यथाः—**

कदिलै दोष पद मादि दस दस चिरी, तीछरै आठ दो सल मेरै ।

सब मल लोस कर, सन कपर परै, दोष गुरु अंक में सही मेरै ॥

राग कदला कही, आज वादी कही, १५ वाक रं गान सुं मान लावै ।

सदन इनकी गही, अंद कदला कही, पूर्व के कथन सुं नति मिखावै ॥ ५९ ॥

**अथ झूलका नाम छंद सप्तम्य वर्णनम् यथाः—**

झिलै आठ कगान्न की साथ बाढैकहु, और ती भेद वाकी नही है ।

सब मल आलीस आलीस पूरी भरी, अंक बीवीस बावै सही है ।

कही कपार देखी भरी, आज वादी कही, वाकके मूलका चौं मुलावै ।

गुप वाक दीनै, इसी गप लीनै, रही वाक ती मूलका अंद पावै ॥ ६० ॥

**अथ सदैवा नाम छंद सप्तम्य वर्णनम् यथाः—**

गुर तें बिरल परी दस पद सुं पद्य दस की दूजी कर मेरै ।

सब मल लोस दस कर पद में, अंक गुरु लहु बावै मेरै ॥

और न कोई गद्य की निबन्धन, अंक न निबन्धनी बावै कोष ।

वेगलै सैं आज इसी की, नारक अंद सनदस सोष ॥ ६१ ॥

अथ कटपदी चालनं चक्षुष्यं यथा: —

नहि कटु वीरय निष्कम, आठ शौल मत भरिये ।

गहारे तेरे अन्त आन, चाकं तुक भरिये ।

एक रसाच्छ नाम, दूसरे वस्तुक कहिये ।

अंतो को की विरय, बीच दस तेज कहिये ।

सब कट वद नामें हो रहे, इनमें वर आठवीस गहि

याकी गति पूजा चालन पर, चक्षुष्य छंद कविरा कहि ॥३२॥

अथ साक्षी पूर्व देशीय रामाक्षी सम्बन्धित साटक नाम छंद

चक्षुष्य वर्णनम् यथा: —

आदि हो दस अंक निशंक कीजे दूजे करे साखू ।

एहिजे नव हो साठ सात कीजे चौदौ परे चारक

वनरे दुका बार कछा करिये, अठे गुरु राखिये

एक में जी जी एक वरय भरिये पूर्वे की साटक ॥३३॥

अथ तुंगय छंद सप्तम वर्णनम् यथा: —

नान हुय परोर्य, तु आठ वरन कीजे ।

हुय गुरु पर अन्ते, तुंगय छंद मनते ॥ ३४ ॥

अथ कमल छंद सप्तम वर्णनम् यथा: —

पय वरन साधिये, कटु कटु चारधिये ।

एतन वर अंत ते, कमल छंद संत ते ॥ ३५ ॥

अथ पीता कोटि नाम संद सप्तमः पञ्चमः यथाः—

ब्याड म्याल्लें करिचें फेरतणायें करिचें ।

पैत्र लघुर्दे शुक्र दे, मामह सीमाविन्द दे ॥ ८६ ॥

अथ महा कृष्णी नाम त्रैद कथनं सर्व्वम् यथाः—

जीन में दो रायें हैं, एक से पक्कर है क्या ।

॥ तौ क्यार हूँ ही करी, तूँ महुँ लखिम बख्यो करी ॥ ३५ ॥

अथ बाह्य छंदः सप्तमः वर्णनम् यथाः—

क्या है ताकत? क्या है शक्ति? ताकत है ज्ञान और शक्ति है धर्म ।

बाहे बाहे "समान गरी, वी पाईस" समझि बड़ी ॥ २८ ॥

अथ इन्द्रकया नाम सैन्दवस्य वर्णनम् यथाः—

आइए छात्रों को यह दोष बताइए, यह है कानून का एक ही नियम।

कार्य में ही शुद्ध पार सत्य, जो इस ब्रह्म विभूति में है ॥ ६६ ॥

अथ उपजातिं उपेन्द्र कथा गुरु एकताल छंद कथा पर्वानम् यथा:-

आरंभ प्रत्येक सगम्भ कीजै, विधि विधि एक सगम्भ कीजै ।

बदलन दो दीह बिचार राखी. जयेंद्र वक्ता विजुबेन्द्र भाखी ॥१००॥

अथ पुष्कताय कषु (इकताय) छंद लघवय वचनम् यथाः—

नगराय बिसमै सदै सुधारै, नगर<sup>१</sup> एक गुरु समै बभारै ।

॥ अथ विष्णुं स्तुतुं श्रीगणेशाय नमः ॥ १ ॥

अथ इ त विलम्बित गुरु" रान्त छंदः सप्तमः वर्णनम् यथाः—

कथन<sup>२०</sup> एक कथनक रूप करौ, सिनहि अंतर कालफिरी परौ ।

इस विधे कलि सचदान कीजिये, हुत मिलेबित खंद करीजिये॥१०२॥

अथ कुसुम विचित्रा खंद सचराय वर्धनम् यथा:—

प्रथम नगण्ये वगण्य करोजै, नगण्य वगण्ये फिर पर दीजै ।

इन विचित्राये निरचर चारी, कुसुम विचित्रा रहिस विचारी॥१०३॥

अथ गुरु एक तास सग्विषयी खंद सचराय वर्धनम् यथा:—

मध्य पाई कहु सोय रगण्य है, नगार देखै भरि एक पद कहै।

और पाई नहीं भेद को जानिये, खोनिखी खंद को नाम बखानिये॥१०४॥

अथ सप्त दोष तास सखिनाला नाम खंद सचराय वर्धनम् यथा:—

लो लो फिर तीखे गण्ये समझीजै बर्यै पद काँके व्याकुं नद कीजै ।

पाई कहु औरै भेद नहीं जानै, देखै सखिनाला खंद रहि जानै॥१०५॥

अथ सप्त दोष तास कलिता खंद सचराय वर्धनम् यथा:—

पहिले प्रथम वगण्य करोजिये, ताहो तहै वगण्य हुं करीजिये ।

चौहो वगण्य रगण्य भरिये, भाग्ये सुमुखि कलिता बखारिये॥१०६॥

प्रथम सोन गुरु तास दीजै, पद सप्त दोष तास (को को)दीजै,

आतै गुरु बगल को एक पद में दीजै

वैरवदेवी नाम खंद सचराय वर्धनम् यथा:—

प्राथम्ये कीजै को वगण्या भिझाई, ता जानी दीजै दोष वगण्या भिझाई ।

दरके जहो वैरवदेवी पुखीजै, वृं पूर्वे भाग्यो जहो मुखीजै॥१०७॥

इसी नवमालिनी छंद लक्ष्म्य वर्धनम् यथा:—

इस विधि कीजिये सुगम भारी, नगन लगन दो मुख विचारो ।

आगन लगन नूँ समन कीजै, यह नव मालिनी लखन कीजो ॥१०८॥

अथ क्षमा नाम छंद लक्ष्म्य वर्धनम् यथा:—

नगन मुख करै लगन्या दोष है, प्रथम लगन करो फेर हो भीतर ।

इस विधि बलि नूँ अंत दीजै नई, यह लखन करे सो क्षमा नाम है ॥१०९॥

अथ मधु नाम छंद लक्ष्म्य वर्धनम् यथा:—

कीजै आरै नूँ लगन फेर लगन, आरै आरै दोष नयै मेघ लगन ॥

चारे नयै मधु करो नै यदपूरै अंत दीजै एक गुरु(प्र)मत्त मधुरै ॥११०॥

अथ मंजु नाम छंद लक्ष्म्य वर्धनम् यथा:—

धुरै करी एक लगन लगन कुंठिरी करोजै लगन नूँ लगन कुं

लगत दीजै गुरु नु बुद्धि राखनी, कसो न नयै यद मंजु माधवी ॥१११॥

अथ माधा नाम छंद लक्ष्म्य वर्धनम् यथा:—

आरै दीजै पांच गुरु लगन कीजै, देखें हो कीजै लगन को गुरु दीजै

देखे आरै चार नयै अक्षर तेरे, लगन कीजै अरमाका बुद्धि देरे ॥११२॥

अथ महराज कलिका नाम छंद लक्ष्म्य वर्धनम् यथा:—

प्रथम करहु दो लगन लगन कुं, फिर फिर करिये लगन लगन कुं ।

सब पद मिलीये इस पद कलिका, कर कर बुद्धि है महराज कलिका ॥११३॥

अथ वमन्त कलिका नाम छंद लक्ष्म्य वर्धनम् यथा:—

आरै करै लगन फेर लगन कीजै, तेजें फिरी लगन दोष गुरु नु दीजै

जैसे सुमार करिये वर काँच मोड़ी, काशी बसन्त तिलक कवि मुद्रि भेखी॥११४॥

अथ सिंदोद्धता नाम छंद सप्तम वर्णनम् यथाः—

जोई भुरे लगय एक लगय एक, दो दो किरी लगय एक मुह विवेक  
बंते लघु सगम साध गुह न देख, "सिंदोद्धता सुकविता कविता प्रमेय॥११५॥

अथ उद्धर्षिणी नाम छंद सप्तम वर्णनम् यथाः—

बाही लगय लगय "किर दो लगय, दो दोजिये लगय दोह लहय वय्य ।  
जैसे सुमार करिये कवि कल वार, उद्धर्षिणीय कहिये करिये निचार॥११६॥

अथ मधु माचरी नाम छंद सप्तम वर्णनम् यथाः—

कोई लगय भुर केर लगय देख, वहि पड़े करसुं बोध लगय लेय ।  
जैसे सुमार करिये गुह दो जमीन, बंते लघु कर किये मधु माचरीय॥११७॥

अथ इन्दुवदना नाम छंद सप्तम वर्णनम् यथाः—

आह करिये लगय कुं फिर लगय, या ताह "दिये सगल हू नगम लगय ।  
दोह गुह काँच पारये हू पर भुरे, इन्दु वदना इस विधे कर सगुरे॥११८॥

अथ कलोलना नाम छंद सप्तम वर्णनम् यथाः—

आहे वार लगय कोई, केर लगय, का जानी लगय सुं सुं  
ही मेक लगय ।

का रीत करिये दो काँच दोह पारी, काही नाम कलोलना साँते कल  
करी॥११९॥

अथ शुशिकला नाम छंद सप्तम वर्णनम् यथाः—

भुर कल नाम फिर इक सगल हे, इस विध कर कर चतुर पर गये ।

मिन पट इसहि कर इससहि कला, पला इस बरख विह<sup>२५</sup>इह रसि  
कला ॥ १२० ॥

अथ मणिगुण निकर नाम छंद सप्तम वस<sup>२६</sup>नम यथा:

प्रथम चर नगन सहित सगन रू. चतुर चतुर पर करइ कनिष रू  
अवर ससहि कहु गुह चरम करै, कड कन कवि हुय मणि गुण  
निकरै ॥ १२१ ॥

अथ मणिनी नाम छंद सप्तम वस<sup>२६</sup>नम यथा ।

नगन हुय कटीजै फेर माने कटीजै, नगन नगन दोजै पल पुरी कटीजै  
हुन निष रचनायै साधियै भेय मानै, कहु हुय गुह कजै मणिनी कर  
नारै ॥ १२२ ॥

अथ प्रमदक नाम छंद सप्तम वस<sup>२६</sup>नम यथा.—

नगन करै प्रथम नगन<sup>२७</sup> करीजियै, नगन नगन<sup>२८</sup> बार रन कंलीजियै ।  
करहु सुवार नाव पर तीन कडक, इह निष छंद कल कहियै प्रमदक  
॥ १२३ ॥

अथ इला नाम छंद सप्तम वस<sup>२६</sup>नम यथा:—

कहिकै दुरै नगन नगन कर दोजै, उनतै हुय नगन नगन कर कोजै  
पल कोजै ते नव नव<sup>२९</sup>इस कर मोला, कलै कहे हुय कर कवि नर पला  
॥ १२४ ॥

अथ चन्द्रलेखा नाम छंद सप्तम वस<sup>२६</sup>नम यथा: —

आरै चारै नगन<sup>३०</sup> लो रगन<sup>३१</sup> २८ कटीजै,  
आनै नगन<sup>३२</sup> लो रू नगन<sup>३३</sup> दोय दोजै ।

राखी संसार कहीं पूर्वे कहे सात रोषा ।

ताहुं आठै समारै नूँ दोष है चन्द लेसा ॥१२५॥

अथ अथम नाम छंद लक्ष्य कथनम् यथाः—

बार सुचार के जगन पुर करई कहु ।

राहि तहाँ परे कर रगत मुखि नरहु ।

फेर दिवै जगदस्य त्रिष मुद एक धरनै ।

नाम कहे विदुष अथम नाम विद्वसतै ॥१२६॥

अथ वाय्मली नाम छंद लक्ष्य कथनम् यथाः—

पुर चरिषै जगदस्य जगस्यो जगदस्य कामै,

जगदस्य जगदस्य देव नर जगै दीक्ष जगै ।

चतुर विचार बीस दुष जात सबै दीजै ।

इस त्रिष पुरवै कहित वाय्मलीय बीजै ॥१२७॥

अथ शिखरखी नाम छंद लक्ष्य कथनम् यथाः

प्रथमवै साधीजो जगदस्य जगदस्यो जगदस्य करै,

फिर कहे दीजै जगदस्य जगदस्यो हूँ मुख करै ।

पदवै दो बारै एक सहु गुरुलक्ष्य मयी,

रसै रसै जति कनहि कहि नामै शिखरखी ॥१२८॥

अथ पुष्पी नाम छंद लक्ष्य कथनम् यथाः—

पुरै जगदस्य वै फिरी जगदस्य नूँ जगदस्य करै,

पक्षी जगदस्य बीजवै जगदस्य बार कहे करै ।



दिये लखन अंत में गुर हनेक बेई रने,  
बही लखन बना है अठ नये दृषणी कने ॥ १२६ ॥

अथ १५ वम पतिव नाम छंद लखन बर्चनम् यथा—

आज दिये भगवत रगनी मगस फिर किये,  
ताहि वही भगवत मगनी कम चरन दिये ।  
बाहि बिने कबोवन करे अति कछति कने,  
आहु बेसपन पतिने दस राम कतिने ॥ १२७ ॥

अथ दियी नाम छंद लखन बर्चनम् यथा—

भुव पर दिये लखनी के भगवत बनेकाहु,  
मगस रगनी वूं ही लोने भगवत फिरी कहु ।  
चरन करिये दीने पदे दूने गति व गही,  
बह बह कने कने बेने दिये हरिनी कही ॥ १२८ ॥

अथ मन्द्राकशि नाम छंद लखन बर्चनम् यथा—

अरे दीने भगवत भगनी भगनी केर काने,  
पादे दीने भगवत भगनी अंत दो दीन काने ।  
नैने पने सनन गन कुं गन पूने लखनी,  
मन्दारमता बह बह संगे बह काने काने ॥ १२९ ॥

अथा नकुंडक नाम छंद लखन बर्चनम् यथा—

अम पने भगवत भगनी भगनी करिये,

पसहि तहौ जगज्जग जगरी ल गुन भरियै ।  
 इस विष कीजियै चन्द दो एक लंक तुल्य,  
 दस दस दोय मात पर में कर लहुं रके ॥ १३३ ॥

अथ कुमुदिलता बेहिया नाम छंद सचरात् यथा—

आरै चारीलै बगच्छ तगरी फेर दोलै जगज्जग,  
 ता आरै लीलै बगच्छ जगरी और रली जगज्जग ॥  
 या चालै कहरा कुमुदिल कटा बेहिया नाम जालै,  
 दो कलै कीलै पय पय सगै जगरी हू विजगरी ॥ १३४ ॥

अथ मेघविस्फुरिता नाम छंद सचरात् यथा—

करीलै आरै चूं बगच्छ जगरी जगज्जग लूं जगज्जग,  
 सिरि पादौ दोलै रगच्छ रगरी जगै में दीह मगरी ॥  
 इसी रीतै चारै जिनहि कहिये मेघ विस्फुरिता है,  
 मली ललै कीलै पय पय सगै जगरी कटा है ॥ १३५ ॥

अथ सादृष्टबिकीर्कित नाम छंद सचरात् यथा—

आरै चार बगच्छ फेर जगरी जगज्जग पादौ चरै,  
 जगै लहि जगज्जग मेघ जगरी जगज्जग हूली करै ॥  
 येसै सुखि विचार पाय भरियै दीहंक है जगै ते,  
 चारै जगज्जग सुचार जगै करियै सादृष्टबिकीर्कितै ॥ १३६ ॥

अथ सुपदमा नाम छंद सचरात् यथा—

आरै कीलै विचारी जगज्जग रगच्छ बगच्छ करियै,

राधे काँची करीजे नगण्य कमल कुं जगज्ज्वल करिजे ।  
 पावने दोष दीजे कहु गुर करीये पूर्वोक्त वचन,  
 बाधे रीते सुधारी वन सग जगिजे तारी सुखदय ॥ १३७ ॥

अथ सुमधरा नाम छंद लक्ष्मण वचन —

आदें दीजे मगली फिर रण्य करे जगज्ज्वल भेष्ट दीजे,  
 लोही कीजे मगली बलिब (नय) दुष्ट मगली फेर कीजे ।  
 बीजे को नहि भेदा सग सग जगिजे धार संभार दाजे,  
 लोहे आँके समारि कबिबर करिजे लक्ष्मण पूर्व भाँजे ॥ १३८ ॥

अथ प्रमदक नाम छंद लक्ष्मण वचन —

आन करीजिये मगलहु रण्य मगली रण्य करिजे,  
 रादि गले दिजे नगण्य कुं फिर रण्य नू जगज्ज्वल करिजे ।  
 वा बिधि धारके गण्य करे दुष्टक गुरु अँव दे वर करे,  
 दो अठ आकरे जगि गई गरी कलन कुं प्रमदक करे ॥ १३९ ॥

अथ कुरुनलुसिह नाम छंद लक्ष्मण वचन —

दुरि करिजे जगज्ज्वल जगले जगज्ज्वल फिर बीजिये युधि करे,  
 जिनहि गले जगज्ज्वल मगली दिव बलि जगज्ज्वल जगल करे ।  
 इय पिपुड़े फल रण्य करे कहु गुरु अँव से दुष्ट करे,  
 इह दश दो दस जगि करे जगज्ज्वलसिंहास बाज पजिजे ॥ १४० ॥

अथ महाकीडा नाम छंदः सप्तमः वर्णनम् यथा—

आर्द्रं धारैः दो मगलौ अति कलितं मतिं करहुं पर तमलौ,

सा पाखै दीखै नगलौ सरन कहुं सखन नगन तिय मगै ।

कौसे कीखै प्यारुं पाया इक कहुं सुखन चरम फिर धरै,

महाकीडा नाम छंदः अक्षरस्य पद्य दस अति पुति करै ॥१४१॥

अथ तन्वी नाम छंदः सप्तमः वर्णनम् यथा—

आह करौ मगन फिर करै तयल्य कौर नगल्य पर दीखै,

फेर सगलै करहु मगल्य कुंवाहि तसै पुन मगल्य बरीखै ।

दोष<sup>११</sup> नगल्य फिर कल्य करै प्यार सुखर बरहु वद किन्ही,

दोष इसीके अति पद्य संग तैं दो दस तैं अति पर कर तन्वी ॥१४२॥

अथ कौंच पदा नाम छंदः सप्तमः वर्णनम् यथा—

आदिम राखै नगल्य पुन करहु मगन कहुं पर पर के,

तहि तसै दे एक सगल्य पद्य पद्य अठ अति कर वद गिन के ।

तुहि करौ फेर मगल्य नगल्य बहुर गुरु इक चरम गहै,

कौंच पदा से नाम मखौलै गिन समय कवन कवि अवाहि अहै ॥१४३॥

अथ ब्रजग विजृम्भित नाम छंदः सप्तमः वर्णनम् यथा—

आर्द्रं धारै दो मगल्य फिर तयल्य कहुं गुरु गुरु पदतदि दीखै,

पाखै राखै दो नगल्य अति नगल्य विजृम्भ एवै रगसिद्ध कीखै ।

हाके अगै सगल्य के अठ दस दस अति गिन के मखौ पर कीखै,

पूर्व भाग्यो देखी जंवा गुनवर सुरधुनि नकरै सुखन विदु'मितै ॥ १४४ ॥  
अथ ग्रन्थ परिसमाप्ति प्रशंसा कवचन—

बोद ।

आद सत्य मन्त्र करन, संपूरन कै होत ।  
अनितम मन्त्रन रूप को, आनन कवि संकेत ॥ १४५ ॥  
को दधि मंचन की किया, लखी लोहू' सेव ।  
मांजन विकसै मयन को, कथन सेव निषेध ॥ १४६ ॥  
परिसंमार्पण ग्रन्थे आई, एह कृप्य अवाप्त ।  
जीका बिन दधि धिरन को, को करि सखै प्रयास ॥ १४७ ॥  
जगू दीपै मेर सम, और न को छहुं न ।  
भू'शरीर मय मन्त्र सकल, करवर मन्त्र अमर ॥ १४८ ॥  
गोबराय बाकी सारवा, सुख तै आई मन्त्र ।  
बाते करवर मन्त्र तै, निदा को आनंद ॥ १४९ ॥  
साके, शिक्षा समान विदु, सी जिन साम सुरीश ।  
ज्ञानकार भाषा रूपी, एकराज यकी शीश ॥ १५० ॥

बोवाई—

संवत १०८० चित्त मय देव, मयचन मातै सिद्ध शिख लेव ।  
असुराय नवमी अजस्र पद, कोनी लखय सख विपदा ॥ १५१ ॥  
रूप दीपतै बाधन निषे, वृत्तरत्न तै केने छिद ।  
चिन्तामणि तै केई देव, एकरा कोनी कवि अति देव ॥ १५२ ॥  
नहि अस्तरा न कर बहिद, येह अकंठी न कियो नद ।

आधुनकाली पंक्ति लोक, पन्व कठिन कालि देई थोका।१२३॥

# EXIT

इस भी बात को ध्यान में रखते हैं, कि जिस प्रकार कि वह सत्य है।

यातै शंकु भाषिष्यै, नविं सभा खंड ॥ १५२

॥ इति श्री वाङ्मयविद्वांसोऽयं सम्पूर्णः ॥

सं० दयानंद प्रेम राजन् १० शमी पं. जेठा बठनाई सि० सी

बिक्रमपुर नगरे महोपाभ्यास सुविधीर यन्त्रि क्रिदीचको ।

॥ श्री माता पिङ्गला उद सुची ॥

आपका आभार अक्षरशः सच है।

कर्मणः यत्तु नृः सैन्यस्यैव संदः यः

सुखं भवतु सर्वदा भवतु

सत्यमेव जयते

### काठमाडौंमा 'सुखद' नामको बजार

सर्वे गुरुः सर्वे बन्धिनः समाख्यायते सर्वे ॥ १३ ॥

क्यापि कदाचित् कदाचित्

गुणः कार्य संश्लिष्ट संश्लिष्टानां एव सन् १०

**वाचा वाचक वचन**

॥ १॥ ॥ ॥ ॥

અથ ત્રયમ સઘ્યસુ'સારેતો હૃદયેતયથ તથ સુ'ચય'મુર્ચનો સંજ્ઞ નારો હૃદઃ।

भारत सरकार, लोक सेवा आयोग, नई दिल्ली-110 068

समाख गण्य सुं मौलीयाय ध्वजः समाख-गण्ये सुं मोटवा(कट्टी)तिथका संव २५

સગરજી ગણેશ મૂર્તિ સેવક સંઘના સભ્યોએ સગરજી ગણેશ મૂર્તિ સેવક સંઘના સભ્યોની મોટી સંખ્યામાં ઉપસ્થિતિમાં વિધિવિધી કરાવવામાં આવી હતી.

**नमः शिवाय हुं ह्रीं नमो नाम ह्रीं**      **मोहनी नाम ह्रीं : १४**

पत्रिका संख्या : १०८३७ दिनांक : २५-०४-२०१६

२५५ अन्ना ह्यगनी मोक्ष ह्य ॥ दोहा अर्थः १३

सौरठा नाम खं दः २०

सौरठा भेषः २१

सौरठा लोदीः २२

गाहा नाम खं दः २३

ठग्याहा नाम खं दः २४

तुलिका नाम खं दः २५

चोर्ल नाम खं दः २६

अभिलक्ष नाम खं दः २७

बोमर हरसा नाम खं दः २८

मसुर धर नाम खं दः २९

विजोहा नाम खं दः ३०

हरिपद नाम खं दः ३१

कक्षिप पद नाम खं दः ३२

अतुलता नाम खं दः ३३

हृत्पल नाम खं दः ३४

चित्र पदा नाम खं दः ३५

पर्वग नाम खं दः ३६

रसायनी नाम खं दः ३७

पंढरी नाम खं दः ३८

दुषहिषा नाम खं दः ३९

संकर नाम खं दः ४०

निर्मली नाम खं दः ४१

इष्टपदा नाम खं दः ४२

मरदटा नाम खं दः ४३

सीतावती नाम खं दः ४४

पौमावती नाम खं दः ४५

गोवा नाम खं दः ४६

पैदी नाम खं दः ४७

कद नाम खं दः ४८

कुं कक्षिषा नाम खं दः ४९

कुं कक्षमी खं दः ५०

रजिषा नाम खं दः ५१

रंगी नाम खं दः ५२

पन्नाकर नाम खं दः ५३

दुर्मैका नाम खं दः ५४

मरुगपद नाम खं दः ५५

कदपा नाम खं दः ५६

सुलता नाम खं दः ५७

संकर नाम खं दः ५८

पदपदी नाम खं दः ५९

पदी नाम खं दः ६०

पदी नाम खं दः ६१

संवधि सांठक खं व ६०  
 तुंगव नाम खं व ६१  
 कमल खं व ६२  
 सीमा विव नाम खं व ६३  
 लोकादमी नाम खं व ६४  
 पादु नाम खं व ६५  
 इन्द्रवज्रा नाम खं व ६६  
 कवेसूचका नाम खं व ६७  
 पुष्पताम नाम खं व ६८  
 हुतविक्रमिता नाम खं व ६९  
 कुसुम विचित्रा नाम खं व ७०  
 कान्तिनी नाम खं व ७१  
 मणिमाता नाम खं व ७२  
 वैद्यदेवी नाम खं व ७३  
 लक्ष्मी नाम खं व ७४  
 कन्या नाम खं व ७५  
 मन्त्र मन्त्र नाम खं व ७६  
 मन्त्र मन्त्र नाम खं व ७७  
 नाथ नाम खं व ७८  
 प्रियदा कान्तिना नाम खं व ७९

वसन्त शिखा नाम खं व ८०  
 मिहोदरा नाम खं व ८१  
 लक्ष्मी नाम खं व ८२  
 मन्त्रमाता नाम खं व ८३  
 इन्द्र वदेना नाम खं व ८४  
 लोकादमी नाम खं व ८५  
 राशिपत्नी नाम खं व ८६  
 मणिपुष्प विव नाम खं व ८७  
 मन्त्रिनी नाम खं व ८८  
 मन्त्रिनी नाम खं व ८९  
 पद्मा नाम खं व ९०  
 चन्द्रकेता नाम खं व ९१  
 लक्ष्मी नाम खं व ९२  
 लक्ष्मी नाम खं व ९३  
 लक्ष्मी नाम खं व ९४  
 लक्ष्मी नाम खं व ९५  
 लक्ष्मी नाम खं व ९६  
 लक्ष्मी नाम खं व ९७  
 लक्ष्मी नाम खं व ९८  
 लक्ष्मी नाम खं व ९९



नकुटक नाम छंद ६६

कुसुमित लता वेल्लिता नाम छंद १००

नेत्र विस्फूर्जिता नाम छंद १०१

शादू कविकोदिमा नाम छंद १०२

सुवदना नाम छंद १०३

सम्भरा नाम छंद १०४

प्रमदक नाम छंद १०५

अश्वत्थाम नाम छंद १०६

मत्ताकोडा नाम छंद १०७

तन्वी नाम छंद १०८

कोच पदा नाम छंद १०९

भुजंग विजृम्भित नाम छंद ११०

—इति छंदानि—

॥ इति माला विंगल छंदः सूची संपूर्णम् ॥



# परिशिष्ट (१)

## अवतरण संग्रह

कुल पंक्ति

अवतरण

३६ २४ "अक्षरारस्त अर्धतमो भागो निष्कमादिषो चिह्न ।"

३४६ १३

"

"

"

३६ १६ यत्सत्ये यत्सत्य मत्वयः तद्भावे तद्भाषो व्यतिरेकः ।

४१ ७ "सिद्धान्तं तारयानं" ।

( समोत्पुर्ण से )

४१ १६ अन्वयः लक्षणमाह—यत्सत्ये यत्सत्यमन्वयः स्वरूप  
सत्ये परमात्मता सत्यं न अथ व्यतिरेकः लक्षण माह—  
तद्भावे तद्भाषो व्यतिरेकः स्वरूपाभावे परमात्मताभावः  
८१ ३ न रंगिज्ञा न बोद्ध्या ।

( आचारार्ह )

३४६ १६

"

"

८१ १३ "आरंभे नत्वि द्या" द्यामूले धम्मे पन्नते ।

३४६ ७

"

"

"

८१ ९० हियाय सुहाय नित्येसाय अकुमामित्ताय भविस्सह

३४६ ६

"

"

"

( पञ्चमार्गे )

८२ १० पूयानिरारमिन्ना ।

८३ ६ महुत्तिः—माये मत के समत के करे छवाई पोर ।

जे आपन मत में नहीं, कई बिदागन पोर ॥

( मतिपयोधद्वीपी ६० १५५ )

८४ १ अथर्वं सुवचनं, अनुकम्पा निच-चित्तिदानं च ।  
 दुःखं सुखं ममिष्यो, तिन्निवि भोगाद्या हुति ॥

८५ ४ मन एव मनुष्याणां कारणं बंध मोक्षयोः ।  
 ( चाणक्यनीति, पार्श्वनाथ चरित्र )

८६ ६ आत्म आत्मधर नै ह्यने नामै किमपि विच आहू ।  
 किदा किमै जो हृत्करिहै हृत्कू हो न्याह कमी पर  
 बाहू हो । ( आनन्दधन कुमुदिनस्तवन )

८७ १ विचहारो विदुषधर्मं नं क्षमत्येव बंध अरिहा—  
 चाणक्य-निर्णयौ

८८ १२ किरिषा बहुवचन स्यात् १८४ १६, ३६५-६, ३५६-८,  
 ४१७ ३ ( स्थानानि )

८९ ७ आनन्दधन कहै—“निहचै एक आनन्दो”  
 पुनः निहचै सरस अनंत ( पद सं० )

९० १७ मनुचिः—आत्म सुख सरूप को, कारण विनमत्त एक ।  
 हमसे मैले भेषधर कीच किधौ एक मैक ॥  
 ( मति-मनोध क्षत्रीसी देखो पु० १५६ )

१४१ १६ अत्र मित्रमथेति अन्नं विना ग्लायति ग्लानो भवति  
 अन्न ग्लायक प्रत्यय कुरादि निष्पत्तिं वाच्यं अनुधातुर-  
 त्प्राप्त्यतीक्षितुं मन्त्रानुवाच्यः चः पशुन कुरादि प्रातरेण भुङ्क्ते  
 कुरात् क प्राय इत्यर्थः [ भगवती सूत्र ]

१४१ २० सन्नेषुपि तेषु कस्यापि निम्न समं तयो नति

अं तेन नागदधौ सिद्धो बहुसोमि भुञ्जती ॥

[ पुष्पमाळा प्रकारे ]

१४२ १८ वर्षेति वेध कुन्ताळायां, दिनानि दस पञ्च च ।

सूखल्लभ्यार प्रमाप्तेन यथा रात्रौ तथा दिवा । १ ।

१४३ १४ “जहा काहो तहा कोहो, काहा कोहोव न्हू  
दोष मास कयच कल कोहीरनि न न्हू ॥”

( कच्छराभ्ययन सूत्र अ० ८ शा० १७ )

१४४ १० अनुत्तं साहसं भाषा सूर्यत्वमसि लोभता ।

अशौचं निर्दयत्वं च स्त्रीयां दोषा स्वमावता ॥

१४४ १६ “विवाहार नचच्छेत्तित्यच्छेजो जजो अनिधो ।”

१८३ ६ १८६ ६ ३६४ ४ “ ”

१४६ १६ “सुतेकानात्ममुक्ति” अनुभूतित्वरुपाचारं कृत व्याकरण

१४८ ६ १८६ ६ ३६८ ६ ज्ञान क्रियाभ्यां मोक्षः

१४८ ६ इयं भावं क्रियाहीनं इया अन्वायिषो क्रिया

१८६ पार्श्वतो पंगुलोद्धो वायमावोव अंगहो

३६६ २० “ ”

१६० ६ काहो सहाय विवाह पुण्यकर्म पुरसकारणे पञ्च

२७१ समवाय सम्मतं एति होह मिच्छन् ॥ १ ॥

१६१ १६, १८६ १६, १८६ ६, ३६६-३२ एति होह मिच्छन्

( उपर्युक्त कामो० श्लोक का चतुर्थ )

१६० १३ आर्जयन—कासकनवि सदि पंचमिहात्म्यं ( अविद-  
स्तवनं )



१७२ १५ बूझत हाथी रे, सुनिचत बाहुं गाम । ६० ।

जिन बूझ्या विन बाहुँनि, गदिरे पानी पैठ

हुं भूँसी बूझत करी, रहिय किनरै पैठ । ६० ।

१८६ ५ नमुकनसी जल नही, करतो फूर आहार  
भाबझुद्ध तै सिद्ध है, फुंरगह जणमार  
भाब झुद्धता जी मय, जे कहाकिया की बार  
तड़महार जुगते गयो, दलत कीमी चहार

( सोमदूकन भावपदविशिक्षा )

१८६ १३ पहले पोर सिक्कायें बीर मार्य बीर गोबरि काळ

३८३ चकलेपुगरवि सिक्कायें राजे पहले पोरसि सिक्कायें  
बीर मार्य बीर लवणकाळ चकले पुगरवि सिक्कायें—

१८७ २० बहुचि—पूर्वकोटि देरीनवा, जिया कटिन जिन कीन  
फुनह बहुरत नरक गति, अझुद्ध भाब तै कीन । ६ ।

( भाव क्षीपी )

१८८ ५ यः क्रियावान् सः पण्डितः

१५ आनंदधन मुनि कहे—अबला आनं मही मन ठाम,

तब लग कहे क्रिया सब निष्पन्न, बहूँ गाले चित्राम ।

नोट—हालात में यहाँ क्रियाने में नाम भूल गतीव होवा है । इस  
पद के रचयिता क्याप्याय करोनिचन हैं । (दे० गुर्जरसाहित्य)

संस्कृत ३० ११३ )

१८९ ६ नायेन जायए माने ईसयेन च सद्ध

चारिणोश्च मनुजार्हं तथैव परितिरिक्त्वह ।

( कलराध्वयन अ० २८ ग० ३५ )

१८६ ६ संजोग सिद्धि अफळं वर्धती नहु एग चक्केण रहो पयाई ।

४१६ ६ अंधोय पंगूय कये सजेका तेनं पकता नगरे पविद्धा । ॥५॥

१८६ १४ आनंदधन मुमुक्षुति :—

ज्ञान करौ करौसंयम किरिया न फिरावौ मन बाध ।

चिदानंदधन मुजस विद्यासी प्रगटै आत्मराम ॥

(वास्तव में वह सरोचिनयजी रचित पदका अंश है वे० पु०

सा० सं० पु० १६४ )

१८६ २० पदमं नार्ज तयो पवति (व्या) (हरा० अ० ४ ग० १०)

४२२ ६ विवस धर्मे द्वियै मुजस, सोना खंडी कछ प्रमान ।

तेहने पुण्य न हुने जेतको, सामाथक कीषां जेतको ॥

२२० १४ सुदृढ़ संबोधर कर वरानी पु० ६४

२४२ १६ "दौढ़त दौढ़त दौढ़िनी, जेली मन नी रे दौढ़ ।

प्रेम प्रदीप्त विचारौ दृच्छति, सुरगम केन्धो रे जोढ़ ॥"

पुनः बंधमोक्ष निहने नही पुनः निहने सरम अनंश

( आनन्दधन धर्मनाथ स्त )

अचलमवाधित वेषकू हो सेमसरीर कसंत एवा मनुक्तिः

२४३ १ निजस्वरूप निरचैव निरखू, सुद परम पद मेरो ।

हुंदी अकल अनादि सिद्ध हुं, अजर न अजर अमेरो ।

३२१ २० " ( मनुसरी पद १२ कुट्ट ४१ )



येन योषा यदि इमरै कण्ठी नदी उपपात विनमता ।  
 दुष्ट सलसी इव सव काले कामस्तार पद् वासा ॥

( श्ल १८ )

२५४ \* ओ आप्ता सोई परमना

२५४ १४ काळ पाळ कारण मिली सखिन सिद्ध हूँ जाय ।  
 विन वरवा कूले कले, क्यों वसंत वनराज ॥

( श्ल १९१ )

२५४ १३ सुखेणं कम्मेणं परकम्मेणं कळेयं विरिणं पुरसाकन  
 परकम्मेति —मगधवी

२५१ १६ पण्यारा उपसमिधं

२५१ १२ काळ सले सर्व पदार्थ सर्व काळाउभावे सर्व पदार्थ-  
 भावेति राहुन्तः

२५२ ६ काळःसुखति भूतानि काळः संदृष्टे ज्ञातः ।

काळःसुखेषु जामर्ति कामोद्दि दुरतिक्रमः ॥१॥ पुनरपि  
 काळे पळति वरवः काळे बीजं च वापयेत्  
 काळे पुष्पवती नारी सर्वकालेन जायते ॥२॥

२५२ १८ वस्तुनः परममर्थं स्वभावः परममनर्थं च हि नाम वस्तु  
 धर्मत्वं परममनर्थं यत्र यत्र वस्तुत्वं तत्र तत्र परममनर्थं  
 परममनत्वेन विना पदार्थस्यापत्तिर्न स्यात् इति भावः  
 इत्यनेन कृत्वा पदार्थत्व मूलकारण स्वभावैव दर्शित यत्र  
 यत्र स्वभावत्वं तत्र तत्र पदार्थत्वं यत्र यत्र स्वभावत्वा  
 भाव सत्य तत्र पदार्थत्वाभावेतिराहुन्तः

२७४ ११ तस्मिन् तस्मिन् भावे यत्तद्व्यवस्थामयत्नं तन्निवर्तयेति  
एद्वान्तः निवर्तत्वं तद्व्यवस्थं सर्वेषु पदार्थेषु कार्यं कारण-  
तादृशितं तदेव दर्शयति कार्यं अविवर्तत्वं कारणता अविव-  
रण्ये पदार्थेषु तदेककृत्यं इत्यनेन कृत्वा अविवर्तव्यस्य  
स्वार्थेन साह कार्यं कारण भावता दर्शिता ।

२७४ २० इदमपूर्वस्य लक्षणांकिं नाम अपूर्वत्वं पूर्वोपाजितं जीवेन  
ब्रुभाब्रुम कार्यं तत् पूर्वोपाजितं पुनः पूर्वोपाजितः पूर्वो-  
पाजितोः पूर्वोपाजिताः ब्रुवन्तते पूर्वोपाजिते पूर्वोपाजितं  
न तत् कार्यं न पूर्वोपाजितं कार्यं तस्मिन्ननेव पूर्वोपाजित  
कर्मवति ।

२७४ ३ कारणेन कृत्वा निष्पद्यते उत्कर्षं पुरुष निष्ठोत्पत्तिना  
कृत्वा निष्पद्यते तत् पुरुषकार्यं यथा देवदत्तेन घटा-  
निष्पद्यते तत्र घट निष्ठोत्पत्त्यनुकूला सृष्टिः कुलाङ्क-  
यत् जीवरूपिका वा क्रिया सा घट निष्ठोत्पत्तोः कारणं  
कार्यं घटोत्पत्तिः कारणं सृष्टिश्चादिः कार्यं घटोत्पत्तिः  
कार्यं घटोत्पत्तो इत्यनेन कार्यं कारण भावता दर्शितेति

२८२ १८ अमृत की एक बूंद है, अजर, दोष सब अज्ञ ।

२८३ १९ "हुरी हुरी कृपाशिका" इति द्वेयकोषे ॥

२८४ ४ आनन्दधनोक्ति—जीव अज्ञान अनादि की मेट गद्दी  
निवर्त रीति । ( पद नं० ४ )

११ बावर्द्धिनीत्यामय समर्थं मङ्गलत्वेन कारणता समाप्ति  
प्रति । ( नैयायिक )

२८७ ८ दान विधन जारी राहु निधनै, अथवादान पद दाता ।  
 सत्य विधन अथ विधन निवारक, परम साधरस माता ॥  
 वीर्य विधन पंथिदा योर्बे इनी, पूज्य पदवी योगी ।  
 योगोपयोग योग विधन निवारी, पूज्य योग मुनीनी ॥  
 आनन्दधनवी कृत मक्ति निज स्वयन

२८७ १७ एगे आवा ( आचार्या समवायां स्थानाङ्ग )  
 २८८ ६ कहे जाये कहे ( भागवती )  
 २८८ १८ यहिरालम अधकृत ( आनन्दधन-सुमतिनाथ स्वयन )  
 २८८ १६ "जीवा मुता संसारिजोष" ( जीवविचार )  
 २८६ १ महुक्ति—सत्ताभिन्ने सिद्ध अनंतै रूप अमेव ( कृत )  
 २६० १३ आनन्दधने कहु—चेतनता परिचात्मन वृत्ते,

१७ पुनरपि आनन्दधनोक्ति—कदा परिचायी परिचामो

२६६ ७ " " " वास्तुवृत्त्यस्तः )  
 २६२ १४ एगे मे सासजो अण्वा ( संसारचोरनी )

२६४ ७ पुनः एवा महुक्ति—नयति विनाश रूप रति परिणम,  
 अहमे गति भिति काचरे ।

अविनाशी अनन्तद विदरुपी, काहे तून कदाय रे ॥१॥

रोग रोग नही दुख दुख योगी, अनम मरण नहि काचरे ।

विदार्नन्दधन विद् आभासी, अमई अमम अमाय रे ॥२॥

२६६ ४ " " ( महुक्ति पद ३ पु० ३२ )

पुनःमहुक्ति—

ज्ञान मक्ति निज चेतनं सत्ता, मापी निज दिनकरै ।

सत्ता अचक्ष अनादि अवाधित, ( पु० ३५ )

दुनरपि महुत्ति—

रमा दोष मिथ्या की परबिध, सुद्ध सुभाषन समानै ।

अनक्ष अचक्ष अनादि अवाधित, आत्म भाव समानै । १।

( बहुरूपी प० १४ पु० ४५ )

३६६ १३ }  
 ३६६ १४ }  
 ३६६ १ }  
 ३०२ ६ }

मिथ्यात्वाधिरति कथावयोगा बंध हेतवः  
 ( कल्पासीमुख अध्या० ८ )

३६६ १० परिणामी चेतन परिणामी, ज्ञान करम बद्ध भावी

३०८ ३ " " ( आनंदधन वासुदेव्य स्त० )

दुनःमहुत्ति—चेतनता परिणामी चेतन, ज्ञान शक्ति  
 विस्तारै । ( पु० ३६ )

३६६ ६ पुनः महुत्ति—राज सुकमाकादिक मुनि भाषी बद्ध  
 सम्बन्ध विभावरे ( पु० ३७ )

१३ तमेव सन्धं निस्तर्कं जं विनेय परेष्ट्य ( आचार्येण )

२० आनंदधनोक्ति - आत्म ज्ञानी समान कह्यै, बीजा ली  
 द्वन्द्व किंगिरे ( वासुदेव्य स्त० )

२१ तमा महुत्ति—आत्म उपलेशा उप निधनी, अन्य समान  
 न कह्यै रे । ( पु० ३३ )

३१० १२ " " " "

३६८ २ —परमा बुद्ध समुद्ध समानै, कबर न पानै कोई

३४२-२० आनन्दधन है क्योति समानै, अरुण कह्यो सोई  
( आनन्दधन पद नं० २३ )

२६६ ४ —मोक्ष नटनागर की बाजी, जानै न सोमंश काजी  
धिरता एक समय में ठाँवै, क्योति विनसै लखड़ी  
कलह पलह प्रुच सत्ता राखै, या हस मुनी न कबही  
जी० १ ॥ ( पद नं० ८ )

८ एते समै एता किरिया ( त्यागना )

३०१ ६ आनन्दधनोति—आत्म कुहं कयादिह मछो, बहि-  
रात्म अचक्षु । ( सुमतिनाथ स्त० )

१६ " कहा निगोछी मोहनी हो, मोहकलह निवार ।  
( पद नं० ८७ )

१६ एता महुति—मोहनीय के लरका करकी, हस हस  
गोद लिझायै । ( वृष्ट ४६ )

३०२ १२ कर्मबन्ध कर्ताए कहु—कीर्यै निपज होकहि जेखो  
भक्तए कर्म

१६ करता परिणामी परिणामो, कर्म जे जीवि करियैरे ।  
एक अनेक रूप नकवाडै, निबडै नर अनुसरियैरे ।

३१४ ७ " " ( आनन्दधन बह्मुपम्य स्तवन )

३०४ १ मानै न हृदयं बौध चरितं न क्यो छहा । कीरियै क्य-  
ओनीय पदं जीवस्य लक्षणं ( अष्ट० अ० २८ पा० ११ )

३०६ १ कथा आनन्दधनोति—कनकोपलवन् पाद पुरस कबी  
खोछी अनादि सुभाष ( पद्यम स्त० )

४ जीवति प्राणान्धारयतिजीव—जीविन कियतेयन् राक्षसः

१० मरुति - जीव करम जाइ, है अनादि सुभाषसु  
( पृ० १६२ )

३०८ ३ —चेतनात परिणामी चेतन, ज्ञान करम फल भाषीदि

३१४ १७ " ज्ञान करम फल चेतन कहिय, तेन्पोतोइ मनाषीदि  
( आनन्दधन वासुपूज्य स्थान )

३२१ १

३०८ ६ विशेषावस्था—अइसो विशेषावस्थो चेतन रह मया  
किरिया

१७ भाष्ये—अतु गुणस्वभावयोर भेद एवं लक्षणे निर्बन्ध  
वर्धमेवा भाष्यतु

१८ सर्वसंयमे—गुण गुणिनो क्रिया क्रियात्वयो ।

३०६ १ सगति मरोरे जीव को, अइ मया कलवान

३१० १० आनन्दधनोक्ति—आध्यात्म जे वस्तु विचारो

" भाव अध्यात्म निजगुणसाधै सो देखी रह  
बोहोरे  
( सेवांस स्त० )

३२१ ६ अर्थ भासइ अरिहा, सुख गुंयति गच्छरा निजगत ।

१३ आनन्दधनोक्ति—चित पंचज सोमै सो चिजै, रमल  
आनंद मोर  
( पंद नं० २७ )

२० हेमचोरा—मोहो पायो योगो ज्ञान

३२२ ६ आगमधर गुरु समंकिजी, क्रिया संवर सार रे

संप्रदायं अर्चयन्क सदा सुखि अनुभवात्पार रे । १ ।

पुनः—भग्नै सुगुरु संदान रे, (आर्जुनस्य शांति स्तवन)

पुनः—परिचय पाठक वाचक साक्षुर्भुं रे, (संभव स्त०)

३६३ २२ " " अकुशल अचक्षय चते

३६३ २१ " आपणो आपण्य भावये, एक चेकना बार रे

३६६ ६ अजर सखि साथ संयोग बी, ए निज परिकर सार रे

३६७ ६ " " " ( शांतिनाथ स्त० )

३६६ ४ " वीपक षट मंदिर कियौ, सखि सुखोद सरुप  
आप परखै आपनी, जानत वस्तु अनूप  
( प० व० ४ )

६ निज सरुप वाचक नहि जानै पर संगति रति मानै ।  
भयै सरुप ज्ञान तें भगनी, अपने पर पहिचानै ॥

( देखो ज्ञानसार पृ० न० १३ पृ० ४२ )

१७ आर्जुनस्य—निराकार अभेद संवाहक, मेद माहक  
साकारो रे ।

३६६ ४ सत्ताराध्ययने—जमुणी राज्य वासेय

३६३ २२ " " "

३६३ २१ " नामेय य सुखी होई

३६६ ६ " सर्व मंचविहं नाम दध्याज्य रुपानय  
पञ्चनाम्येच सुखेति नाम नामीहिं दंसिये

( अ० २७ गा० ६ )

१४ " नादंसविस्त नाम नामेय किवा नहुति चरणरुपा

( अ० २८ गा० ३० )

३२० १८ आनन्दधनोक्ति—चेतनता परिणाम न चूने, चेतन कहि  
विनर्षयो । ( वासुदेव सखन )

३२१ \* " " " " " "

३२१ १६ " कंठ मोल निहचै नहीं हो, निबहारे छल दोष ।  
कुलाल सेम अनादि ही हो, निल अबाधित मोल  
( पद नं० ८८ )

३२२ १२ भवे मोहो न सर्वत्र निरुद्धो मुनि सत्तमः ।

३२२ १७, ३६२ ८ अभयदेवचरि—समे मुक्ते भवेत्तदा,

३२२ १८ महुक्ति—कबै न छाने कर्म, कबै आत्ममात्रमाहुं  
इह विध्यामति भर्म, कंठ मोल है आत्मा ।

( आत्मप्रबोध झुपीसी पृ० १६१ )

३२३ १६ आनन्दधन—चेतन आना कैसे उद्योतै ने०

सच्चा एक अखंड अबाधित, इह सिद्ध त पदमोहै १  
अन्वय अह व्यातिरेक हेतु हूँ, सबक रूप अमलोहै  
आरोपित सब परम और है, आनन्दधन तल सोहै २

२८५-१५, २६३-२, २६३-६, ३१५-१६, ३४२-२, ( पद नं० ६२ )

३२४ १७ साक्षा कब मोय मणु सुर दुग पंचिद जाय ।

पांच सरीर साह मति सरीर जंम-कहाय ॥

३२५ ११ आनन्दधनोक्ति—आनन्दधन देकेन्द्रसे योगी बहुत न कति  
में आऊँ रे । बालहा से योगीबिन्दु कहाऊँ ( पद नं० ३५ )

३२६ २३ अण्वा कथा विकलाय



३३१ १३ आनन्दधनोक्ति—दुसरा रीठ मालकी आई, कहा पर  
करै सवारो ( पद नं० १४ )

आनन्द दुम्बा मोह है, तुम्हें तावत मित्रा भावो  
( पद नं० ८० )

३३३ ११ सुधा निर्माविधा सुधा

१६ गाथा—जहा मरत बरहु ए ह्याए हम्बर ताको  
तह कमलाय हम्बति बोहमिलने कर्मपर १

२० आनन्दधनोक्ति—सधा बरु में मोह बिहारत, एर  
सुरिजन सुह निसरी ( पद नं० ११ )

३३६ १६ " " "बहिराज्य अवरुप" "कायादिक लो आली  
पर रझो ( सुमतिनाथ सचन )

३३६ ११ " आदीपित सब धर्म और है, आनन्दधन लह  
सोई । ( पद नं० २८ )

२० " निरबिधन्य रस पीविने, लो सुह निरंजन कल ।

३४३ १ पुनः—जई पुतली जैन की, बाह मिन्नु की लेन  
आधा गल इकमिह आई, सिद्ध गमन की सैन १

३४६ ६ आनन्दधनोक्ति—अतिद्विष सुख गम मणि आगरु,  
इस परमात्म साध ( सुमतिनाथ सचन )

३४८ १६ महुक्ति—स्वाधवाद जिन मत बनन, अलि नातिरा रूप  
ता जिनको कैसे कहे, आत्म सुह सरुप १ ( पद नं० १६६ )

३४६ ६ साठेबनो भावो

३५० ६ — कल बिसंवाद जेह मां नहीं, कल्प वे मरी संकल्प है

सकल नयनाद् व्यापी रह्यौ ते क्षिप्त साधन संधि रे  
( आनन्दधन—शालि स्तवन )

२६ भाव अभ्यासम निजगुण साथै ली लेह्यौ रत्न मंडो रे  
( आनन्दधन—सेवासजिन स्तवन )

३६१ १३ पाणिनी—अन परं परोक्षं

३६२ १० महुकि—“पै बंशक करणी विरी, तेरी करन असिद्ध”  
निधौ सिद्ध जौलों नही, बिबहुरै विष मेळ ।  
जोहूँ विषफरसै नही, तब दुखिया हूँ केळ । १ ।  
जौहूँ भावै न छुटसा, सौहूँ किरिया केळ ।  
बानी जौलों पीछई, सौलों निकसै तेळ । २ ।  
जौलों कारज सिद्ध नही, सौलों स्वयं केव ।  
घट कारज की सिद्ध बें, स्वयं केव निषेध । ३ ।  
( भाववद् त्रिशिका वृ० १६२ )

१६ अजाह्न अपजबसिध

३६१ ६ न देखो विद्यो काये, ( चाणिक्य नीति )

३६२ ६ रतन जड़ित मंदिर खो, सब सज्जियन की साथ  
विन मन धोले सासने, पथों पीछ पर हाथ । ( मर्द हसि )

३६४ ११ सद्धा महु महु, सद्धा महुस्त नथि निज्यान ।  
चरन रहिया सिम्बद्ध, सद्धा महु न सिम्बन्ति ॥ १ ॥  
( पाठान्तर दंडम महु० )

२० मंद मथिह, दुसमा कालनै जैनिह—ज्ञानसार बहुतरि

३६५ २१ सिद्ध समान सदा पद देरी—समवसार

३६६ १३ आनंदधन—जब हम जगत् मये न मरेगे—पूरा पद  
( नं० ४२ )

३७० १ स्वकीय बहुचरी में—अनुभव हम कबके संसारी  
( पूरा पद नं० १४ )

१३ सिद्ध संसार—समापन्नता अस्मिता से समापन्नताय नो  
अस्मिता समापन्नता संसार समापन्नता—पञ्चबाटीका

३७२ १ मनुष्य—बैदिक विन को विरहासी, सोय विद्वानभासी  
बाकी आत्मा विन आत्मानो, बीच कौन कासी  
कामादिक सब बाकी संवति, पर परमिच्छी मासी  
वासे योगी सोय सरोगी, औ आत्मा नहि बासी  
( पद नं० ३७ )

३७४ आनंदधन—निरपसंभ बसै परमेश्वर, बटमें सुखन बासी ।  
आप अभ्यास लखै कोरे विरहा निरखै भू की बासी ॥ ( पद ७ )

३७६ १ ॥ शेषक कुंभक पूरक कासी, मन इन्द्रिय जप कासी ।  
मह्य रस मधि आसन पूरी, अनन्द गान बजासी  
माहरो वाहुडो सन्यासी ॥ ( पद नं० ६ )

१८ "विष्णो सो मद्याण्डे, सूर्य सोनो लण्डे लण्डे"

६ आनंदधन—हल बल लेल खबर के बट की, चीन्हे  
रमता जल में ( पद नं० ७ )

३७६ ७ ॥ कामादिक नो सासी पर रंभी, अनन्द  
आत्म रूप ( सुचरि साधन )

३७८ १ विज सरूप बई विज ज्ञानाये, ते सही  
विजवर होवै रे ( नमिनाथ स्तवन )

३८१ १० अनिहंतो मद्देवो, ज्ञानजीवं मुसाहूणो गुरुणो ।  
विष्णुराजते सत्त इव समानं मण्डितं ॥ (आव्यवहारीक)

३८३ 'समस्त सामाह्यं होय'

३८४ ३ कुण्डलि पाय पसारण, अछरंत पयजणसूची । संकोचिद  
संदासा, क्यह तेव कायपड़िलेहा (संसारचोरणी)

१० कम्मनिज्जरारणि ।

१३ बारत विहो सय निज्जराय ।

३८५ ६ होषा कंथा सय पुण पाया ।

१८ बाळ मरणेच पंडिय मरणेच सेकिले बाळमरणे २ दुषा-  
ससविहे पणते—भगवती

३८६ १ पंडिय मरणे दुषिहे पणते पाओपगमणे च भक्षपक्ष-  
वक्षणेच से कि त पाओपगमणे दुषिहे पणते तंवहा  
नीहारिमेव अनिहारिमेव नियम अप्पसिक्खे भव  
पक्षवक्षणे दुषिहे पणते तं० । निहारिमेव अनिहारिमेव  
नियम अप्पसिक्खे दुषिहे पंडिय मरणेच मरणेच  
जंनि जणलेहि मेरइव मयमाहणेहि अप्पणं वि संजोए  
इ बीवीं वयति —भगवती जी १० राउक

३८७ १६ कण्ठेनं सामाह्यमिह फलं सायज्जे जत्य वज्जितं ओणे  
समापणं होइ समोदितेण देसविरजोवि ॥ वया० ॥

इह सामाविणं नामद्वयमं सिद्धाज्जं भवति यस्मिन्सा-

साधिके कृत्येति वैराग्येति साध्यात्मनो वाक्यं  
 व्यापारान् कर्मविद्या सर्वविद्यानां सारो भवति  
 कर्ममिताह वैरोव वैरोक्तमथा कथा चन्द्रमुखी उक्त्या  
 समुद्रचक्राया इति कथया तु कथनेन साधु वाङ्मये-  
 हान् मेघः कथादि साधुफलकरो ह्यस्यापी न्ययसि  
 माहस्तु चर्चनीयविकार्यकन मेघ पुनः साधुफलकं  
 सर्वाथमिति विधानेष्वुत्पद्यते माहस्तु ह्यसौ कथने एव  
 तथा साधोर्मुक्त्य सूर्यादि विद्विगतिर्वात्स्यात् माह-  
 स्तु सूर्यादि रेव पुनः साधोर्वात्स्यात् संभवतः कथा-  
 वाच्य कथाय वर्जितो वाङ्मोत्यात् माहस्तु कथी  
 वत्याख्याना वरणाः ४ संभवतः ४ अस्तु पुनः साधोः  
 रचनां कथानां समुचितानामेव वशिपतिः माहस्तु तु  
 व्यस्तानां समस्तानां वा इत्यस्तुसारेण स्यात् तथा  
 साधोरेकवारमपि प्रतिपन्नं साध्याधिकं वाच्यं न भव-  
 तिहो माहस्तु पुनः पुनस्तद्वतिपद्यते पुनः साधोरेक  
 प्रथमं सर्वं प्रथमं स्यात् अन्योन्यं सारोक्त्यात् माह-  
 स्तु न कथेत्यादि

३८८ १२ आत्मना ते परिसखा परीक्षया हि आसथा—अचार्यो

३८९ १३ " " " "

३८९ २ जो कंधो सुखो दुःखे, ली कंधो निम्बे ।

जन्म सहानी निम्बलो, लहु निम्बाज लहंत । समयसाज

३९० १३ " " गाथाबद्ध कलशामेई

३८३ १६ महाकर्मणं भीते सन्तर्णं वा साहर्णं वा पञ्चवासमानस्य  
 किं फला पञ्चवासना मोक्षमा सन्तर्णफला सेणं भीते  
 सन्तर्णे किं फले प्राप्य फले सेणं भीते नाणे किं फले  
 विन्वाण फले एवं विन्वाणेषु पञ्चवसान फले पञ्चवसा-  
 नेण संवस फले संवसेणं अणप्प फले अणप्पेणं तवफले  
 तवेणं बोधान फले बोधानेणं अकिरिया फले सेणं भीते  
 अकिरिया किं फला गो० सिद्धि पञ्चवसान फला कन्-  
 तेति अन्वार्थः हे भवन्त तथाकथं मुचिस्तस्य भाव  
 सन्तर्णं वा साहर्णं वा साहक पप्पुपासमानस्य  
 जतो पप्पुपासना तस्सेवा साम्बादि सेवा किं फला  
 कीदम् फलं प्रदानती प्रह्वसेतिमस्यः अत्रोत्तरं गौतम  
 सन्तर्ण फलेति सिद्धान्त अवयव फला तत्किं फलं नाजन्त-  
 लेति सुतज्ञानफलं अवयवादि सुतज्ञानमवाप्यते एवं  
 प्रविष्टं प्रस्तकार्ण विन्वाण फलेति विरिह ज्ञान फलं  
 सुत ज्ञानादि हेयोपादेय विवेक कारि विज्ञान सुतशब्दे  
 एव पञ्चवसानफलेति विनिर्गुणि फलं विरिह ज्ञानोदि  
 पार्थक्यस्याति संवस फलेति सुत प्रत्याक्यानस्य हि  
 संवसो भवत्येव अणप्प फलेति अनाभव फलः संप्र-  
 वान् किञ्च नवं कर्मनोपादत्तं तव फलेति अनाभवादि  
 त्वं कर्मस्वार्थपस्यतीति बोधान फलेति व्यवधानं  
 कर्मनिर्जरेण तपसादि पुराणं कर्म निकर्जरवति  
 अकिरिया फलेति बोधनिरोध फलं कर्मनिकर्जरा बोधि  
 मोक्षनिरोध कुन्ते सिद्धि पञ्चवसान फलेति सिद्धि

लक्षणं पर्यवसानं चरितं सचरितं चरितं पर्यवसिति चरितं  
वस्तुतः सा ( मंगलं चरितं २ वीरेण ६ वा )

३६१ १० स जमेयं मति जीवा कि अन्तः—संज्ञानिष्ठरेति

३६२ ६ समाये विदुः संज्ञाने, समेष्टानमानेसु

१० साधनेयं च संज्ञीर गुणी गुणी अनुचरे

संज्ञेयं समेयं संज्ञेयं अनुचरे

३६४ ११ निश्चयैविदुः जीवो नही, विवहारे विष मेळ ।

जीवो विष पनसे नही, तब गुणिवा हुं लेळ ॥१॥

३६६ १ निश्चयै हुं भी सिध नही विवहार दे छोड़ ।

इक परम आकाश में, फिर दे दोरी छोड़ ॥

( ५० १६२ )

३६६ ३ ठाणागती में—“इव चरविदे पनसे अवाते कपले

ठवथाकन्ये पञ्चपन विधासी” अवाच कपल

स्थापना कर्म प्रमुत्पन्न विधासी

१६ समयेयं तबसा अन्तर्गत आवेयाने विहर

३६६ १६ समयसार—दीन मनी प्रमुत्पन्न कर्म, मुगति कहने होय

१० अदेये देव सन्ध्या देवे अदेयसन्ध्या मन्त्रे अधम्य सन्ध्या

अधम्ये मन्त्र सन्ध्या मुगुरे मुगुर सन्ध्या मुगुरे मुगुर सन्ध्या

३६८ १४ “ज्ञान विनाय्या मोक्ष” कहा—सदुक्तिः—

ज्ञान विना अरु पंगु ज्ञान, इतो सिद्ध न होय निदान

ज्ञानवन्त जी करणी करै, मोक्ष पदान्त निहचै वरै ॥१॥

सुद्ध शरूप बरो चंचकरो, ज्ञान विनाय्या मोक्षोति वरो ।

एक ज्ञान में मानै मोक्ष, सो अज्ञान विनाय्यामिति मोक्ष ॥

४६६ ३० अपनी सुहासमय जोई, किया बिभावे मगन न होवै ।  
मोक्ष पत्तरव मानै देखे, निनमल ते विपरीत बिसेसै ॥१॥

( पृ० १६८ )

घर में या बन में रहो, मोक्ष रूप दिन मोक्ष ।  
तप संजम करणी बिना, कोई न कसै असेख ॥  
कोई न कसै असेख, बिना तप संजम करणी ।  
ज्ञान किया २ दोष, कवि संसार बितरणी ॥  
एक ज्ञान हू मोक्ष, मान कारण क्यों भरमै ।  
तप संजम हू परी, कलौ अनकल पट परमै ॥

( पृ० १६२ )

४०१ १२ "अकलापसिणी"

४०२ ८ कबीरपंथीनिर्गनीः—

पत्थर पूजा हर मिछे तो, मैं पूजू पद्म ।  
सब से मछी अच्छी, सो पीस काय संसार ॥

४०४ ७ मनुक्तिः—पर परपित से मित्र भए अब, किंचित  
कर असमर्थी । (पृ० ६३)

१० न्याया कथबलिकम्मा—आत्मसी, सुविद्या आनकाधिकारे

४०६ कथबलि कम्मति स्तान्तालेतरं कुत बलि कर्मः ये स्वपृष्ट  
देवानां—अभयदेवमुत्कृत भगवतीजी वृत्ति

४१० ७ कविदेव संति बबहावपन्नते मोक्षदा पंचविदे बबहावे  
पन्नते संजहा—आगमे सुत आजा बारजा जीप अहमे  
कस्य आगमे सिधा आगमेण बबहारं पद्वेकजा पोष



से तत्त्व आगमेतिवा अहोसे तत्त्वसुरसिवा सुरार्ण वचद्धार  
 पट्टवेज्जा बोधासे तत्त्वसुर सिवा अहोसे तत्त्व आगमे  
 सिवा आगार वचद्धारं पट्टवेज्जा बोध से तत्त्व भारणा  
 सिवा अहो से तत्त्व जीए सिवा जीर्ण वचद्धारं पट्टवेज्जा  
 इधे एहिपंचहि वचद्धारं पट्टवेज्जा तंमहा आगमेने १  
 सुरार्ण २ आगार ३ भारणाए ४ जीर्ण ५ अहो अहो  
 से आगमे सुरआना भारणा जीए तद्वा तद्वा वचद्धारं  
 पट्टवेज्जा से किमाहु भंति आगम वसिवा समजा निमाथा  
 इधे तं पंचविहं वचद्धारं जवा जवा अहि अहि तथा  
 तथा तहि तहि अनिस्ति ओवसि तं सम्यं वचद्धारमाने  
 समने निमये आगार आराए भवइ । ( भगवती

शु० ८४७८ )

४११ ३ निषकय मम्मो सुकलो

४१२ १० सप्तमया भवति नैगमाश्रयः कर्त्तव्य—सप्तम, संमद-म्वच-  
 दार, अतुसुव, सम्य, सममिस्व, एवंतु नयाः एते च  
 इन्द्र्यास्तिक पर्यायास्तिक लक्षणे नय इयेऽन्तर्भाष्यन्ते  
 इन्द्र्यमेव परमार्थतो अस्ति न पर्याया इत्यभ्युपगमपरो  
 इन्द्र्यास्तिकः पर्यायाप्यव वस्तुतः सति न इन्द्र्य मित्य-  
 ऽभ्युपगमपरो पर्यायास्तिक लयाद्यास्तयो इन्द्र्यास्तिकाः  
 रोपास्तु पर्यायास्तिकाः ( अनुयोग्यास्तुती )

१८ जीवाणं भंति किं सासया असासया बोधमा ! जीवा  
 सिव सासया सिव असासया से केणद्वेण भंति एवं

बुद्ध जीवा सिध सासया सिध असासया गोथमा  
 वज्जहुवाय सासया वाज्जहुवाय असासया से तेवहुवे  
 गोथमा एवं बुद्ध आथ सिध असासया भगवती  
 रातक ७ वहेरा २

४१३ १२ निष्कयजो दुग्गेवं को भावे कम्मि बहए समणो  
 वचहारो अकीरु जो पुब्बहिजो चरित्तमि ॥१॥  
 ( आवश्यक निर्दुक्ति )

४१४ ३ वचहारो किहु वज्जं जं दुग्गमत्वं च बंदए अरिहा  
 ना होइ अजा विन्नो जाणसो वज्जवं एवं ॥१॥ (भाज्य)

४१४ १० निष्कय वज्जो मुक्खो वचहारो पुन्व कारणो मुत्तो  
 पडमो संवरहवो आसयहेवो तवो बीजो ॥ १ ॥

४१५ ६ जइ विज्ज मयं वचज्जह वा ना वचहार निष्कये सुयह  
 ह्मणे विजा तित्थं द्विज्ज अन्नेज ओ रां ॥ १ ॥

४१६ १५ जाणं पयासकं सोइगो तवो संघमोय गुत्ति करो  
 तित्थमि समाजोने मोक्खो विज्ज सासणे भणितो ॥१॥  
 [ भगवती ८० ८ रा० १० ]

४१७ १ बंधा कष्ट देसांही मुक्क सरिसा पया,  
 वंजे सुगम नै वे वपदेसं सुहायया । ( ३० १३० )

६ वे वंजक करणी जिती, तेती सरय अतिट्ट । ( ३० १७४ )

७ ज्ञानात्तम संमयाय है, किरिया जइ सम्बन्ध ।

चाते किरिया आत्मा, जीने काल वसंबंध । १। ३० १४८

११ यहीं आपनै धर्म कुं, न तबै बीन् काल ।

आत्म ज्ञान गुण ना तबै, जइ किरिया की चाल ॥

( ३० १४९ )

४१८ १२ असंभुतेनं भति अणगारे किं सिञ्चद् भुञ्जद् भुञ्ज परि-  
 निञ्चद् सञ्चदुक्खायममं करेद् गो० नो इण्हो समहो से  
 केण्हो भति जाव नो व्यंतं करेद् गो० अरुभुदे अणगारे  
 आरुव वज्जाओ सत्तकम्म पण्णोओ सिद्धिं बंधव  
 बद्धाओ पणिय बंधव बद्धाओ पकरेद् रहस्स कारुट्ठियाओ  
 दीह कारुट्ठियाओ पकरेद् मंदाणुमावाओ सिञ्चाणु  
 मावाओ पकरेद् अप्प पदेसमाओ बहुपदेसमाओ  
 पकरेद् आत्तवचनं कम्मं सिय बंधव सिय नो बंधव  
 असावा केवणिकजं चनं कम्मं सुज्जो भुज्जो उवचिनाद्  
 अणाह्वं च अणवक्कमं दीह मंद् चारुत्त संसार कंतारं  
 अणुपरिचद्द से तेण्हो गो० असंभुदे अणगारे  
 जोसिञ्चद् ( भगवती स० १ उ० १ )

४१६ ६ पचमकखरं पि पणि, जो न रोचद् सुत्त निदुहं ।  
 सेसं रोचतो विहु, विच्छन्निही जमास्सिक्ख । १ ।  
 ४२० ८ मन परमोदि पुत्ताय, आहंरय सवग उवसमे कप्पे ।  
 संजमति केवळि सम्भणाय, अनुमि विच्छन्ना । १ ।  
 ( पचचन सारोद्धार )

१८ कच्छकरा उमरकरा असमाधिकरा बह्वे मुंदा अप्पे समणा

४२१ ४ निअय नय इह्वे वरी, पाळीमै विवहार ।  
 पुण्यवत्त से पामस्यै जी, मयसमुद्द नो पार । १ ।  
 ( वरीविजय, सीमंधर स० ६० ६ )

६ आत्मारुण विध्वंसना ते अयमे, आत्मारुण रक्षणा  
 तेह धमे ।  
 —देवचन्द्रजी (अध्यात्म गीता)

१८ कदम्बं मति जीवा गन्धयत्त इत्यमगच्छति गो० पाप्मा-  
 इषास्त्वं मुस्तावास्त्वं आदि मेदुष्य परिमृद् कोद् माय  
 माया कोम पेन्ध दोम कच्छ अन्धमस्त्राण पेमुज्य रति  
 करति परपरिवाये मायामोक्षं मिच्छार्दसणसल्लेखं  
 एवं कलु गोयमा जीवा गन्धयत्त इत्यमगच्छति कदम्बं  
 मति जीवा कलुयत्त इत्यमगच्छति गोयमा पाप्माह्वाय  
 केरमये आत्र मिच्छार्दसणसल्लेखं केरमयेणं एवं कलु गोयमा  
 जीवा कलुयत्त इत्यमगच्छति एवं संसार आच्छी  
 करेति एवं परिचि करेति एवंदीही करेति एवं रहसी  
 करेति एवं अपुपरिचिरेति एवं वीची कर्दति पसत्या-  
 चत्तारि अपसत्या चत्तारि ( भगवद्गी २० १ ३० १ )

अ० १३ वचन सामेक्ष व्यवहार साचौ कछो, वचन निरपेक्ष  
 व्यवहार मूढौ (आनन्दचन, अनन्दनाथ स्तवन)

# शुद्धि-पञ्चक



पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७	४	रंड़ी	रंड़ी	६३	११	उदभा	उदभा
७	९	उदिया	उदिया	६४	१६	निमभित	निमभित
७	१५	उंउर	उंउर	६३	९	विद्व	विद्व
२८	३	पूजता	पूजता	७५	१४	मर	मरि
३५	१९	वर्मवन्त	वर्मवन्त	७५	१६	मेष	मेष
३५	२५	विष्णुपदविन्दो	विष्णु पद- विन्दो	७५	१७	मार	मार
३६	२७	मलमः	मलमः	७६	१६	विम	विम
३६	२९	७	७	८३	११	ईया	ईया
३६	२९	७	७	८५	८	इर	इर
४०	२१	जवा पडे	जवापडे	८९	८	इरम	इरम
४१	१६	उररं म	उररं	९०	१८	उररतमरं	उररतमरं
४१	२०	वेरा	वेरा	९०	२२	निर्देसन	निर्देसन
४५	१७	हुन्दर	हुन्दर	९२	१६	कम	कम
५६	२१	अनदवस्तु निम्बु	अनदव स्तुनिम्बु	९२	२१	कुबिया	कुबिया
५७	५	बधियारा	बधियारा	१०४	१	पेसे	पेसे
६३	६	अभापत	अभापित	१०४	११	उनेया	उनेया
				११५	८	उनेरा	उनेरा
				१२२	१७	दीरी	दीरी
				१२१	३	उर	उर

१३४	१४	को	को	२२९	४	सुमत	सुमता
१३५	३	कथन	कथन	२३१	१४	दध	देव
१४९	१९	काकमा	काक मा	२३८	४	छन	छेन
१५३	१०	विद्यै	विद्यै	२३९	१९	गई गी	गी
१७१	८	बीष	बीष	२५१	४	बाधारी	बाधारी
१७१	२३	कामकामन	कामकामन	२५१	८	विष्मलीति	विष्मन
१७२	३	तप	तप १	२५१	१०	विष्मदवरी	विष्मदारी
२८५	१४	योनि	योनि	२५५	१८	एतन	एतने
१८५	१२	तेन	तेन	२५७	४	क	के
१९४	१७	उमलै	उमलै	२६०	८	म बाये	बाये
१९६	१८	प्रवत	प्रवत	२७१	५	ली	ली
१९९	१	करिष	करिष	२७२	२	समुद्र	समुद्र
२००	१८	अम	अम	२७२	१०	काक	काकः
२०५	९	अकरी	अकरी	२७२	१०	काकः	काकः
२०५	१५	कथन	कथन	२७२	१९	परिषमर्त	परिषमर्त
२०९	१८	उपचार	उपचार	२७	१९	परिषमर्त	परिषमर्त
२१३	१३	कदम	कदम	२७	२०	२७	२७
२२४	६	वेतनै	वेतन नै	२७	२७	२७	२७
२२५	८	विष	विषे	२७३	२	परिषमर्त	परिषमर्त
२२५	१९	ते	तुलै	२७३	३	समाकर्त	समाकर्त
२२७	४	काक	काकै	२७३	५	कामकामन	कामकामन
२२७	९	बाधिनी	बाधिनी	२७३	८	नीपन	नीपने

२७३	१०	आर	बीर	२९९	१२	सा कल	साकल
२७४	२	कमैलति	कमैलि	३००	१८	साभक	साभक
२७५	६	कर ली	करे ली	३०४	१५	र	र
२७६	८	रचयी	रचयौ	३१०	९	वी	वी
२७७	५१९	रुदि	रुदि	३१	६	एलक	एलक
३१	११	परिमलकृत	परिमलकृत	३११	४	कहिने	कहिने
३२	१३	गुल	गुल	३२०	२०	रू	रू
३३	१५	रित	रति	३२१	६	कली	कली
२८०	३	नदील	नदीलि	३३	९	कल	कलि
३४	१५	लकुले	लकुले	३२३	१८	मिनी	मिनी
२८१	५	कलील	कलील	३२५	११	कलने	कलने
२८४	८	कमलिनि	कमलिनि	३२६	१३	३३	३३
३५	११	गुलकल	गुलकल	३२७	१३	कल	कल
३६	१९	कलीक	कलीक	३२९	२	कलिनि	कलिनि
२८५	१३	नदी	नदीलि	३३	१७	कल	कलली
२८६	२१	ललादली	ललादली	३३१	१६	कल	कल
२९०	५	मेद	मेद	३३२	७	गुल	गुल
३७	१६	कलकली	कलकली	३३६	१९	कली	कली
२९५	१८	कल	कल	३४३	२	कली	कली
२९६	४	कलकली	कलकली	३४६	७	कल	कलि
३८	१०	कली	कली	३४८	३	कलिनि	कलिनि
२९७	१८	रू	रू	३४८	१९	कल	कल





३७१	५	आभासु	आसां तु	३७८	१६	मत्त	मत्ति
"	७	परिगार्ये	परं कोगार्ये	"	१८	मत्तो	मत्तो
"	१५	मत्तमार्थिक	मत्तमार्थिक	"	२०	मर्ष	मर्ष
३७२	१५	उच्चारणमन्त्रे	उच्चारणमन्त्रे	३७९	१०	मांषी	मांषी
३७३	७	मी	मी	"	११	ढे	ढे
३७३	६	मर्मिना मित्ता	मूर्च्छा	"	१६	ममरा	ममरी
		स्वाधिव्ययम	चको लेम	३८०	२१	मम्मा	मम्मा
		मासुवी देवक	कुंमक	३८१	१२	मीम	मीम
		पुष्प करे, लांषी मर्मिना		३८२	३	म्याम	म्याम
"	७	तीक्ष्णी	कोषी	"	६	ढे	ढे
"	२०	ताई	तहि	"	७	मे कोई इम्मेनें	ढे कोईयां
३७४	१२	मू	मू			मयी से साकारण	मया-
"	१६	इमे	इमे			मरम पुन कहीये.....	
३७५	१८	मीहं	मीहं	"	१५	मिचये	मिचम
"	१९	मम्मा	मम्मा	३८३	१	ममयी	ममयी
३७६	५	मी	मी	"	१२	मये	मये
"	१०	मुचनी ममेरतु	मुचनी	"	१४	ममये वीरधि	ममये वीरधि
			ममेदे	"	१५	"	"
"	१३	ममिई	ममिई	"		ममये	ममये
३७७	१०	मी	मी	"	१६	"	"
"	१६	मममममा	मममममा	"		मुचर मिचममममे	मुचरमि
"	२०	मा मा	मा				मममममे

३३	११ संकरीः	संकरी	३४	१० आर	आर
३४	वीहर	पुहुर	३५	२१ अस्मान नै अस्मान नै	
३५	२१ संयम आनना संयम आनना		३६०	७ बी	बी
३६	राज्या	राज्या	३७	७ अयमयन	अयमय न
३६४	३ कुकुर वानं कुकुरि वान		३८	१४ अकुपान	अकुपान
३७	आरंरत	आरंरत	३९	२० अमुपन	अमुप न
३८	४ निरयै	निरयै	४०	८	८
३९	१४ निजरी	निजरी	३६६	१ कट	कट
४०	१६ अरंमय वीर अरंमये वीर		४१	२ अमुपयते	अमुपयति
३६५	१ निचारी	निचारी	४२	आरंरत	आरंरत
४३	२ कुप	कुप	४३	७ अरै	अरै
४४	६ कुप	कुप	४४	१० अरु	अरु
४५	१३ वरि वीरवी वरि वी		४५	११ वर	वर
४६	१६ मारीर	मारीर	४६	१४ अर	अर
४७	१९ तै	तै	४७	१७ वीरचरवी	वीरचरवी
३६६	२ वा वीरचरवी वावीर-		४८	१८ वरीरवी	वरीरवी
४८		वरवी	३६९	६ अरवी अरवी	अरवी
४९	३ निरयमा	निरयमा	४९	१९ अरवे	अरवे
५०	अरविचरवी	अरविचरवी	३९०	१ अर	अर
५१	४ अरविचरवी	अरविचरवी	५१	अर	अर
५२	५ मारी	मारी	३९०	२ वर	वर
५३	अरविदि	अरविदि	५३	२० अरै	अरै

३९१	६ संजल	संजल	४०४	९ लं वधमै वी	लं वधमै वी
॥	१३ निर्वैरा	निर्वैरा	४०५	५ लवणी	लवणी
३९२	१ कलरावपये	कलरावपये	॥	१२ कलकम्पा	कलकम्पा
॥	४ लोकाभिलष्य	लोकाभिलष्य	॥	१६ लामुलक	लामुलक
॥	१५ लवीकुण्ड	लवीकुण्ड	॥	१९ लामा ली	लामा ली
॥	१४ लीये	लीये	४०६	१ लीये	लीये
३९३	१० लय	लय	४०७	२ लुप	लुपे
३९४	६ लिनी वी	लिनी वी	॥	४ ललाय	ललाय
॥	२१ ललाहो ललाय	ललाय	४०८	५ लीकद्वी	लीकद्वी
		ललाय	॥	१० लालीयवा	लालीयवा
३९५	५ लद	लद	४०९	८ ललकद्वय	ललकद्वय
॥	११ लीहचक्षु	लीहचक्षु	॥	१ ललाधु ल	ललाधु ल
३९६	१६ ललैल्लर रे	ललैल्लर रे	॥	११ लिपरी	लिपरी
॥	१७ लिपा	लिपा	॥	१३ लिपी	लिपी भास्वा
॥	२० लला	लला	४१०	१४ ललकद्व	ललकद्व
३९७	१ ॥	॥	४११-१५	ललकलीये	ललकलीये
॥	लील ।	लील	४१२	१ लला	लला
॥	११ लीलकरी	लीलकरी	॥	१२ ललिली	ललिली
४००	३ लीलिल	लीलिल	॥	१३ ललली	ललली
॥	९ लली	लली	४१३	४ ललकद्व	ललकद्व
॥	१२ ललिलीमादि	ललिली- ललीमादि	॥	१४ लल	लल
४०१	१ लली	लली	४१३	१५ ललकद्व	ललकद्व
४०३	२ लिली	लिली	॥	१६ लली	लली
॥	६ लीली	लीली	४१४	४ ललल देव	ललल देव
॥	१३ ल	ल	॥	५ ली	ली
॥	१५ ली	ली	॥	११ लललल	लललल
॥			॥	१२ ललल	ललल

४३	१५	आम	आम	४५१	११	आम	आम
४४	१६	०	०	४५२	१२	आम	आम
४५	१७	आम	आम	४५३	१३	आम	आम
४६	१८	आम	आम	४५४	१४	आम	आम
४७	१९	आम	आम	४५५	१५	आम	आम
४८	२०	आम	आम	४५६	१६	आम	आम
४९	२१	आम	आम	४५७	१७	आम	आम
५०	२२	आम	आम	४५८	१८	आम	आम
५१	२३	आम	आम	४५९	१९	आम	आम
५२	२४	आम	आम	४६०	२०	आम	आम
५३	२५	आम	आम	४६१	२१	आम	आम
५४	२६	आम	आम	४६२	२२	आम	आम
५५	२७	आम	आम	४६३	२३	आम	आम
५६	२८	आम	आम	४६४	२४	आम	आम
५७	२९	आम	आम	४६५	२५	आम	आम
५८	३०	आम	आम	४६६	२६	आम	आम
५९	३१	आम	आम	४६७	२७	आम	आम
६०	३२	आम	आम	४६८	२८	आम	आम
६१	३३	आम	आम	४६९	२९	आम	आम
६२	३४	आम	आम	४७०	३०	आम	आम
६३	३५	आम	आम	४७१	३१	आम	आम
६४	३६	आम	आम	४७२	३२	आम	आम
६५	३७	आम	आम	४७३	३३	आम	आम
६६	३८	आम	आम	४७४	३४	आम	आम
६७	३९	आम	आम	४७५	३५	आम	आम
६८	४०	आम	आम	४७६	३६	आम	आम
६९	४१	आम	आम	४७७	३७	आम	आम
७०	४२	आम	आम	४७८	३८	आम	आम
७१	४३	आम	आम	४७९	३९	आम	आम
७२	४४	आम	आम	४८०	४०	आम	आम
७३	४५	आम	आम	४८१	४१	आम	आम
७४	४६	आम	आम	४८२	४२	आम	आम
७५	४७	आम	आम	४८३	४३	आम	आम
७६	४८	आम	आम	४८४	४४	आम	आम
७७	४९	आम	आम	४८५	४५	आम	आम
७८	५०	आम	आम	४८६	४६	आम	आम
७९	५१	आम	आम	४८७	४७	आम	आम
८०	५२	आम	आम	४८८	४८	आम	आम
८१	५३	आम	आम	४८९	४९	आम	आम
८२	५४	आम	आम	४९०	५०	आम	आम
८३	५५	आम	आम	४९१	५१	आम	आम
८४	५६	आम	आम	४९२	५२	आम	आम
८५	५७	आम	आम	४९३	५३	आम	आम
८६	५८	आम	आम	४९४	५४	आम	आम
८७	५९	आम	आम	४९५	५५	आम	आम
८८	६०	आम	आम	४९६	५६	आम	आम
८९	६१	आम	आम	४९७	५७	आम	आम
९०	६२	आम	आम	४९८	५८	आम	आम
९१	६३	आम	आम	४९९	५९	आम	आम
९२	६४	आम	आम	५००	६०	आम	आम
९३	६५	आम	आम				



पृष्ठ ५८ पर नं० १३ ब्रह्म है जिसकी सृष्टि :—

बापूजी रहस्य खीर के लाल, छोटी सूँ न सफ़र है।

वैष्णव आश्रमि काशी, सी सी गुरु न गुरु ॥ अ० ॥३॥

कैसे काम करेंगे इसकी, उसे धनो यदि कार्य।

कामनाएँ जो पूर्ण हो सकें, जो कल्पना यदि कभी सै (अमर-मोहनी)

नोट:—पृ० ५४ में कुलनोट नं० १ लिखा है :—

काम करने वाली माता विभिन्न दूध पदों कीर कीर से से आयेले सम्मानक से आयेले निम्न-निम्न से । कीर से आयेला निम्न से कीर से आयेला निम्न से ही आयेलेली से माता पेटवला कई करने वाली से माता पेटवला से माता दूधिली से सेवेला सम्मान से निम्न सम्मान सम्मान नहीं ।

नं० २ का फुटनोट का नं० ६ और नं० ६ "सुपरा" का नं० ३  
नं० २ तथा नं० सुपरा ठीक कर लें।

प्रातिष्ठान (२) —

श्री अमर जैन ग्रन्थालय

माइटी की गवाड़

बीकानेर

ग्रन्थपाला के नये प्रकाशन

१. बीकानेर जैन लेख संग्रह [२६०० शिलालेख, ६० चित्र, सजिले १२५ पेज की विस्तृत ऐतिहासिक सूचिका, सुदृढ बंध] मूल्य १०)
२. समर्थसुंदर कवि हनुमानजी [कवि की जीवनी व ४६१ रचनाओं का सुदृढ संग्रह, सजिले, सुदृढ ००) मूल्य ४)
३. बीकानेर के इस्लामी जैन मंदिर मूल्य २०)
४. आत्मसिद्धि [हिन्दी कथासुधार] ५० सहजानंदजी मेड
५. श्री नट वैद्यभद्र स्वयं नाचती [जीवनीसह] मूल्य १)

मुद्रक —

न्यू राजस्थान प्रेस, कलकत्ता

भारतीय मुद्रण मंदिर, बीकानेर



























































